ईशानां जगतोऽस्य वेंकटपते र्विष्णोः परां प्रेयसीं
तद्वक्षस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षान्ति संवर्धिनीम् ।
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियं
वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ।।

-पूर्वाचार्यः

सहचरवेंकटेशकरनम्रितकल्पतरोः
अभिनवपुष्पजातमपचेतुमुदग्रमुखी ।
प्रियतममुग्धहासमुखचन्द्रविलोपितधीः
त्वमपचिनोषि तस्य मणिदाममहः प्रसवान् ।।

- लक्ष्मीस्तोत्रम् - २०.

श्री वेंकटेश्वर वैभव

हिन्दी अनुवादिका

श्रीमती सी. पद्मावती

तेलुगु मूल

पं. वेदांन्तं जगन्नाथाचार्य
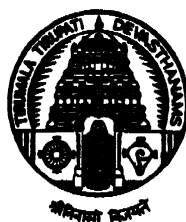
प्रकाशक
कार्यनिर्वहणाधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति
2009

SRI VENKATESWARA VAIBHAV

Translated By
Smt. C. Padmavathi

Telugu by
Pandit Vedantam Jagannathacharya

T.T.D. Religious Publications Series No.816

First Edition : 2009

Copies : 1000

Published by
Dr. K.V. Ramanachary, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati - 517 507.

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati - 517 507.

प्रस्तावना

वेंकटाद्रि समं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेंकटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति ॥

वेंकटाचल जैसा पवित्र पुण्यक्षेत्र इस ब्रह्माण्ड में और कोई नहीं है तथा वेंकटेश जैसा भगवान इसके पूर्व नहीं था और भविष्य में नहीं रहेगा।

कलियुगवरद श्री बालाजी स्वयंभू हैं और इस पवित्र तिरुमल क्षेत्र में अर्चामूर्ति के रूप में विराजित होकर पूजादि स्वीकारते हैं। ये भक्तवत्सल हैं और कामितार्थप्रदायक हैं। भक्तजन अपनी मनौतियों की पूर्ति के लिए इस क्षेत्र को पधारते हैं और भगवान के दिव्य सौंदर्य के दर्शन करके आनंद का अनुभव करते हैं।

विदित ही है कि इस भगवान की पूजाराधना शास्त्रोक्त एवं आगमोक्त ढंग से की जाने की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है। भक्तजन अपने शक्त्यानुसार इन पूजादियों में भाग लेकर, स्वयं को धन्य मानते हैं।

तिरुमल मंदिर में विराजमान विराट् स्वरूप भगवान बालाजी के दैनिक, साप्ताहिक और वार्षिक उत्सवों को साम्प्रदायिक ढंग से भक्तिश्रद्धापूर्वक आज भी मनाये जा रहे हैं। श्रुति, स्मृति, पुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर शास्त्रसम्मत पूजार्चना, सेवा, उत्सव, शोभा-यात्रायें, वेदपठन आदि का निर्वहण कर भक्तों में आध्यात्मिक भावनाओं को बढाने में सतत प्रयत्नशील है। इसीके अलावा इस पुण्य क्षेत्र में अनेक दर्शनीय तीर्थ स्थान हैं। देवस्थान का आशय है कि इन सभी विषयों के बारे में भक्तों को जानकारी दें।

इसीके अन्तर्गत देवस्थान ने लगभग चार दशकों के पहले प्रख्यात संस्कृत व तेलुगु भाषाओं में पंडित, ज्योतिषज्ञ एवं तत्कालीन आस्थान विद्वान श्रीमान् वेदांन्तं जगन्नाथाचार्युलु को यह कार्यभार सौंपा गया है। उन्होंने

अथक परिश्रम करके, अपनी प्रतिभा के आधार पर भक्तिश्रद्धापूर्वक विषय का संग्रहण किया एवं देवस्थान ने १९७७ में तेलुगु में 'श्रीवेंकटेश्वर वैभव' पुस्तक को प्रकाशित किया। भक्तजन ने इसका समादर किया।

धार्मिक ग्रन्थों के प्रकाशन योजना के अन्तर्गत भक्तों में आर्ष संस्कृति व ज्ञानवर्धन के लिए देवस्थान ने अनेक पुस्तकों के प्रकाशन करने का कार्य अपने हाथ में लिया। प्रसन्नता का विषय है कि अब हिन्दी भाषा-भाषी तक इस विवरण को पहुँचाने के उद्देश्य से हिन्दी और तेलुगु भाषाओं में निष्णात एवं विश्रांत प्राप्त प्राचार्या श्रीमती सि. पद्मावती को अनुवाद का कार्यभार सौंपा गया। श्रीनिवास भगवान की कृपा से अब यह कार्य संपन्न हो गया है। एतदर्थ मैं अनुवदिका को साधुवाद देता हूँ। इसी कार्य में संलग्न सभी अधिकारी एवं कर्मचारियों को आशीर्वाद देता हूँ।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति.ति. देवस्थान, तिरुपति।

आमुख

अखिल लोकों के ईश और संसार सागर को पार करानेवाले परमात्मा श्री वेंकटेश के दिव्य पादपद्मों को बारंबार प्रणाम।

वेंकट शब्द की परिभाषा

वें=सर्व पापों तथा आपदाओं को; कट=दूर करनेवाला । पन्नगाचल पर विराजमान इस कलियुग-वैकुण्ठनाथ की विशेषता यह है कि वे दत्तात्रेय की भाँति मौन रहते हैं। वे खडे-खडे सर्वत्र विचरते हैं; अनदेखी करके सर्वत्र देखते हैं; अनसुनी करते हुए भी भक्तों की प्रार्थना, वेदना, दुःखडा सुनते हैं एवं उनका निवारण करते हैं।

समस्त जगत् में इस दिव्य मंदिर की इतनी महत्ता, इतना वैभव, इतनी व्यापकता तथा इतनी प्रभावोत्पादक शक्ति का कारण यह माना जाता है कि यह स्वामी अपने भक्तों को त्रिविध रूपों से चालित करते हैं, जो क्रमशः कर्म-मार्ग, भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग हैं। शुक्ल यजुर्वेदान्तर्गत ईशावाशोपनिषद् में अत्यद्भुत मन्त्र इस प्रकार है –

मन्त्र संख्या

विद्यां चाविद्या च यस्तद्वेदो भयगं् सह।
अविद्या मृत्युं तीर्त्वा विद्याऽमृतमश्नुते ॥ —*ईशा. ११*

जो मनुष्य कर्म, भक्ति और ज्ञान द्वारा परमात्मा को जानता है, वह कर्म-योग से नाशवान जगत् को पारकर (वासनाओं के दूरीकरण से) भक्ति और ज्ञान से अविनाशी परमात्मा को प्राप्त कर सकता है।

भगवान बालाजी के दर्शन के लिए जो आते हैं, वे अपनी दुःखडा भगवान को सुनाकर विपदाओं को दूर करने की प्रार्थना करते हैं। श्रियः पति परम दयालु हो उनके दुःख को दूर करते हैं। यह कर्मयोग का प्रथम सोपान है।

भक्त अपनी मनौती चुकाने के लिए अपने परिवार सहित श्री बालाजी के दर्शन के लिए आता है। यही परंपरा उसके परिवार में चलती आती है। सदाचार, सत्कर्म और सद्भावना से भक्ति दृढ हो जाती है। भगवान के साथ अनुराग भी बढ जाता है। सानुराग ही भक्ति है। वासनाओं के शमित होते ही आत्मविचार करने लगता है, जो ज्ञानमार्ग है। इस सिलसिले में मिनौती के रूप में भक्त, धन आभरण आदि स्वामी की हुण्डी में समर्पित करता है। वह दुराचारी होने पर भी श्रीनिवास स्वामी उसकी भक्ति को स्वीकारता है और उसे सद्वर्तन की प्रेरणा देता है। स्वामी के पुष्करणी का स्नान, स्वामी के दर्शन तथा तीर्थ-प्रसादों से वह संतुष्ट होता है; दूसरी ओर उससे समर्पित धन का सदुपयोग दैविक कार्यों में होता है। इस क्रम से बालाजी के भक्तों की संख्या दिनों दिन बढती जाती है।

द्वापर युगान्त में गीताचार्य श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र की युद्ध-भूमि में पार्थ को योग का जो प्रबोध किया था, उसका क्रियात्मक रूप तिरुमल में देखा जाता है। कलियुग का वैकुण्ठ श्री वेंकटाद्रि पर स्वर्ण शिखरों से शोभित आनंद निलयवासी श्री वेंकटेश मौन रूप से अपने भक्तों का उद्धार करते हैं; भक्तों के त्रिविध तापों को दूर करते हैं।

'श्री वेंकटेश्वर वैभव' विषय की दृष्टि से पाँच भागों में विभजित है। प्रथम और द्वितीय-भाग के अध्ययन से श्रीस्वामी के आठों पहर की अर्चना, सेवा कैंकर्य आदि का विवरण भक्त को भक्ति रस से विभोर करता है। वह स्वयं उन सेवाओं में भाग लेने के लिए छटपटाता है। तृतीय-भाग में इस शेषाद्रि पर जो जो पुण्यतीर्थ हैं, उनमें भक्त डुबकियां लेकर पवित्र होना चाहता है। आगम शास्त्र में देवतार्चना सूर्य के द्वादश राशियों की ग्रह-गतियों के परिवर्तन के अनुसार होती है। अतः चतुर्थ-भाग में वर्ष के ३६५ दिनों में प्रत्येक दिन विशेष पूजा का एवं काल का विवरण है। पाँचवें भाग में अर्जित सेवाओं की जानकारी है, जिसे पढकर भक्त भगवान का सान्निध्य पाने के

लिए अर्जित सेवाओं में भाग लेने की दुर्दमनीय आकांक्षा रखता है। इस ग्रन्थ राज की फलश्रुति यही है। श्रीवारि (भगवान बालाजी) की सेवा के लिए जो लाखों भक्त आते हैं, वे इसके प्रमाण हैं।

इस दिव्य विभूति रूप ग्रन्थ राज के मूल तेलुगु लेखक योगी श्रीमान वेदान्त जगन्नाथाचार्य पंडितजी हैं। वे ति.ति. देवस्थान के आस्थान विद्वान भी थे। इस ग्रन्थ का रूपान्तरण हिन्दी में करने का जो आदेश ति.ति.देवस्थान से मिला है, उसका मैं आभारी हूँ। 'सप्तगिरि' के प्रधान संपादक श्री सि. शैल कुमार और संपादक श्री धारा सुब्रह्मण्यम् दोनों ने इसे 'सप्तगिरि' हिन्दी पत्रिका में धारावाहिक रूप से प्रकाशित करने का जो श्रम उठाया, उसके लिए मैं दोनों को हार्दिक कृतज्ञता का ज्ञापन करती हूँ। इस ग्रन्थ के प्रकाशन में लाने के लिए ति.ति. देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी साधुशील श्रीमान् डॉ. के.वी. रमणाचारीजी I.A.S., ने जो सहयोग दिया है,उसके लिए भी सदा कृतज्ञ हूँ। प्रकाशन के मुख्य अधिकारी और सब कर्मचारी इस ग्रन्थ को सुन्दर रूप देने में सफल हुए हैं, उनका भी मैं आभारी हूँ।

विना वेंकटेशं न नाथो न नाथः,
सदा वेंकटेशं स्मारामि स्मरामि।
हरे वेंकटेश! प्रसीद प्रसीद,
प्रियं वेंकटेश प्रयच्छ प्रयच्छ।

ॐ तत् सत्

तिरुपति,
१-६-२००९

अनुवादिका

विषयानुक्रम

उत्सवों का विषयानुक्रम – भाग - २

पुण्यतीर्थों का विषयानुक्रम – भाग - ३

उत्सवों के समयों का अनुक्रमणिका – भाग -४

श्रीदेवी व भूदेवी सहित श्री मलयप्प स्वामी (उत्सवमूर्ति)

श्रियः श्रियं षड्गुणपूरपूर्णं श्रीवत्सचिह्नं पुरुषं पुराणम् ।
श्रीकण्ठपूर्वामरबृन्दवन्द्यं श्रियः पतिं तं शरणं प्रपद्ये ॥

अर्जित सेवाों का विवरण – भाग -५

ॐ तत् सत्

समाप्त

श्री वेंकटेश्वर वैभव

भूमिका

वेदान्त निलय श्रीमान् कल्याण गुणसागरः ।
भक्त प्रियो जगन्नाथ श्रीनिवासोऽस्तु मे हृदि ॥

अखिल चराचर (सृष्टि, स्थिति और लय) का कर्ता, मुमुक्षुओं का उपासक, मोक्षदाता श्रीमन्नारायण, त्रिपाद्विभूति से अभिहित नित्यविभूतिदायक, श्रीवैकुण्ठ में शेषतल्प पर शयन कर वहाँ नित्य मुक्त जीवों को अवाङ्मानसगोचर नित्यानन्द के प्रवाह में गोता लगवाता था।

उसने दयासागर होने के कारण एकपादद्विभूति रूपा इस लीलाविभूति में संसारबद्ध जीवों का भी उद्धार करने का संकल्प किया।

अतः कर्मभूमि भारतदेश में अंजनाद्रि, वृषभाद्रि, शेषाद्रि, गरूडाद्रि, वराहाद्रि, श्रीनिवासाद्रि, तीर्थाद्रि, कनकाद्रि, पुष्कराद्रि, सुमेरु शिखराद्रि, वेदाद्रि, ज्ञानाद्रि, आनन्दाद्रि आदि नामों से पुराणों में भी प्रख्यात वेंकटाद्रि पर अष्टविंशतिवाँ द्वापरयुग के अन्त में, कलियुग में स्वामी का आविर्भाव सूचित है। यथा –

प्रवः पान्त मस्थसोधियायते।
महे शूराय विष्णवे चार्चत।

ऋग्वेद १० मण्डल, ११५वाँ सूक्त प्रथम मन्त्र।

उक्त मन्त्र से प्रतिपादित विष्णु अर्चावतार में अवतरित हुआ।

विष्णुः पर्वताना मधिपतिः— इत्यादि श्रुतिवचन से पर्वतों का आधिपत्य प्राप्त विष्णु इस वेंकटाद्रि का भी आधिपत्य पाने से महर्षियों से इन शुभनामों से कीर्तित हैं, जो इस प्रकार हैं — श्रीवेंकटेश्वर स्वामी अपने वक्षस्थल पर लक्ष्मी का विराजमान होने से 'श्रीनिवास' है। ऋग्वेद में श्री वेंकटाद्रि और श्रीनिवास के बारे में इस प्रकार कहा गया है।

अरायि काणे विकटेगिरिं गच्छ सदान्वे।
शिरिम्बिठस्य सत्वभि स्तेभिष्ट्वा चातयामसि॥

(ऋग्वेद १० मण्डल, सूक्त-१५ -पहला मन्त्र)

मन्त्र की टीका—

हे पुरुषार्थ की कामना करनेवाले, तुम ऐहिक संपदा से वंचित क्यों न हो, आमुष्मिक संपदा से भी वंचित क्यों न हो; बाह्याभ्यंतर दृष्टिहीन भी क्यों न हो, आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक तापों से पीडित भी क्यों न हो, ऐहिक, आमुष्मिक पुरुषार्थों का विरोधी भी क्यों न हो, एक बार श्रीनिवास के निवास स्थान पर्वत पर जाकर श्रीनिवास के सान्निध्य में सर्व

(अस्य मन्त्रस्याऽयमर्थः॥ अवतारिका — वेदपुरुषः पुरुषार्थकामुक मुद्दिश्य हित मुपदिशति॥ हे पुरुषार्थ कामुक अत्र संदर्भानुरोधेनत्वयि इत्यध्याहारः। तथा चत्वाय। अरायिसति = रै शब्दो ऐश्वर्यवाची, ऐहिकैश्वर्य रहिते वा। आमुष्मिकैश्वर्य रहिते वा सतिः। काणे = बाह्य दृष्टि शून्ये वा अंतर दृष्टि शून्ये वा सतिः। विकटे = विशिष्ट तापत्रय शालिनी सतिः - सर्व पापानि वें प्राहुः कटस्तद्दाह उच्यते'' इति वेन्कटपद निर्वचनानुरोधेन कट शब्दस्य दापहरत्वादयमेवार्थः॥ सदान्वे = दानव शब्दस्य दान्वे इति व्यत्यय श्यान्दसः। ऐहिक पुरुषार्थ विरोधिभिर्वा, आमुष्मिकपुरुषार्थ विरोधिभिर्वा सहिते सतिः। शिरिम्बिठस्य = श्रीपीठस्य श्रीनिवासस्येति यावत् व्यत्यय श्यान्दसः। गिरिं = वेन्कटाचलां गच्छ = उक्त सर्वानर्थ परिहाराय गच्छेत्यर्थः॥

तत्र गमन मात्रेण कथं तत् परिहारः इत्यांशकाया माह॥ शिरिम्बिठस्य = श्रीनिवासस्य। सत्वभिः = पुरुषैः सर्वोपचार-क्रियानिरतैः सदा सन्निधानवर्तिभि

उपचारों से तुम्हारे अनिष्ट निवारण के लिए श्री बालाजी से याचना करो। तत् क्षण श्रीनिवास, जो वेंकटाद्रिपति हैं, तुम्हारे अनिष्ट का निवारण दूर करके तुम्हारी कामना की पूर्ति करेंगे।

तत् क्षण वेंकटाद्रिपति श्रीनिवास भगवान् तुम्हारे अनिष्ट का निवारण करके तुम्हारे अभीष्ट को पूरा करेंगे।

इतना ही नहीं वरन्, वेदोपबृंहण भविष्योत्तर पुराण द्वारा भी यह विदित होता है कि वेंकटाचल के अन्य नाम श्रीनिवासाद्रि, वेदाद्रि और शेषाद्रि भी हैं। श्रीस्वामीजी की महत्ता व अनुभूति भी प्रकट होती है। अतः ब्रह्माण्ड पुराण और भविष्य पुराण भी इस सत्य का उद्घाटन इस प्रकार करते हैं –

वेंकटाद्रि समं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किंचन।
वेंकटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

टीका – ब्रह्माण्ड में वेंकटाद्रि सम स्थान नहीं है। वेंकटेश्वर सम देवता (अवतार) न पूर्व में रहा और न भविष्य में रहेगा।

रेकान्तिभिरंतरंगपुरुषैरिति यावत् शिरिम्बिठ स्येतुः। उभयत्रान्वयः। सत्वभिरितिव्यत्य-पश्यान्दसः। तेभिः = तै तथा त्वेनलोक शास्त्रयोः प्रसिद्धैः रित्यर्थः। अत्रादि व्यत्ययश्यान्दसः। त्वा = त्वाम्। चातयामसि = अनिष्ट निवारणं याचन्तं कारयामः। भगवत श्रीनिवासस्य सन्निधौ सर्वोपचार क्रियानिरतैस्सदा सन्निधान-वर्तवर्तिभि रेकान्ति भिरंतरंगपुरुषै स्तदीयै रनिष्ट निवारण प्रार्थनां कारयितुमिच्छाम इति यावत्॥

अत्र संसारिक प्रवाहसमापतिताऽनिष्ट निवारणकामुकाः पुरुषाः श्रीवेंकटाचलं गत्वा तन्निवास रसिकस्य भगवत श्रीनिवासस्य सन्निधौ सर्वोपचार क्रियता निरतान् सदा सन्निधान वर्तिनश्चैकान्तिनोऽन्तरंग पुरुषान् तदीयान् 'भगवत श्रीनिवास स्य सन्निधौ मदीयाऽनिष्ट निवारण प्रार्थनां श्रावयत'' इति प्रार्थयन्ते। ते च महाभागाः तथा तस्य भगवत श्रीनिवासस्य सन्निधौ एकान्त सेवाद्यवसरे त्वापन्नानामापत्ति निवारण प्रार्थनां श्रावयन्ते॥ स च परमदयालु भगवान अन्तरंग पुरुष मुखत्तां श्रुत्वा अनिष्ट निवारणं भक्तानामनुपदमेव करोतीति संप्रदायः॥

अतः अर्चावतार में स्थित श्रीस्वामी अपने पूर्व-युगों के अवतारों के जैसे धर्माचरण, तत्त्वबोध आदि कार्य न करके मौन में स्थित हैं; वे अपने दक्षिण हस्त से श्रीकृष्णावतार के चरम संदेश में जो शरण वरण स्थान दिखाया था, उन्हीं पादाब्जों को आश्रित करने का संदेश देते हैं; अपने कटि पर रखे हस्त से इसका संकेत करते हैं कि जो उन दिव्य पादों की शरण में मग्न रहते हैं, उन्हें संसार रूपी सागर कटिदघ्न मात्र दीखेगा। यह भी सूचित करते हैं कि ऐसे भक्त –

सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदं।

कठोपनिषत् वल्ली - ३ मन्त्र ७

श्रुति के अनुसार कथित अपार संसार को पारकर श्री वैष्णव पद को प्राप्त करते हैं।

स्वामी की महिमा ऐसी है कि वे अनदेखी करते हुए भी सब कुछ देखते हैं । आश्रितों की प्रार्थना के अनुसार त्रिवर्ग रूपी धर्म, अर्थ और कामनाओं को देते हैं। संसारबद्ध जीवों को अपने सान्निध्य में लिवा लाते हैं।

अत्र त्वं वेंकटाचलं गत्वा भगवन्तं तदीयानाराधक महाभागान द्वारी कृत्य अनिष्ट निवारणं याचेति विधिर्विपक्षितः॥ चते चदे = याचने इति धातुः।

अत्र अरायि काणे विकटेगिरिं गच्छेति तं विदुः।
एवं वेदमयस्साक्षाद् गिरीन्द्रः - पन्नगाचलः॥

इति भविष्य पुराणान्तर्गत वेंकटाचल माहात्म्य प्रतिपादन परोभागः।

'अयं मन्त्रः वेंकटाचल परः' इत्युपबृंह यति॥

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुत्वा द्वेदो मामयं प्रतरिष्यति॥

इति मनुशासनन्नात्रार्गल ग्रन्थः।

अत सन्निवास रसिकस्य भगवत श्रीनिवासस्य अर्चावतारं प्राप्तस्य। महिमा प्रतिपादन पर एवायं मन्त्र इति सुस्पष्टमवसीयते॥]

अपने इष्ट की सिद्धि से संतृप्त होकर आश्रित भक्त को उपहार देते हैं, उन्हें स्वीकारते हैं। उन्हें माया से मुक्त करनेवाले तीर्थ और प्रसाद अपने अंतरंग भक्तों के द्वारा दिलवाते हैं और चरम पुरुषार्थ कांक्षी बनाते हैं।

अतः ऐसा ज्ञान होता है कि अपनी सर्व शक्तियों का अनुभूत कराते हुए श्री वेंकटेश्वर वेंकटाद्रि पर अर्चावतार में विराजमान हैं।

शास्त्रों के अनुसार अर्चा के पाँच रूप माने गए हैं, जो इस प्रकार हैं – १.पर स्वरूप २. व्यूहा स्वरूप ३. विभव स्वरूप ४. अन्तर्यामि स्वरूप और ५. अर्चा स्वरूप।

१. पर स्वरूप – यह वह स्वरूप है, जो श्रीवैकुण्ठ के महामणि मण्डप में अमित ज्ञानी गरुड, विष्वक्सेन आदि नित्य शूरों से और लीला विभूति से भक्ति, प्रपत्ति आदि उपायों से ब्रह्मपथगामी मुक्त पुरुषों से स्तुत्य होकर शेषतल्प पर श्री भूदेवियों सहित दिव्य मंगल रूप में प्रविष्ट हुआ है।

२. व्यूह स्वरूप – यह लेलेयमान विभूति संपन्न मूर्ति है। सृष्टि, स्थिति और लय का कार्यनिर्वाह के लिए तथा मुमुक्षु उपासक जीवों को अनुग्रह करने के लिए विराजमान स्वरूप है। 'वैखानस शास्त्र के अनुसार व्यूहा स्वरूप के पुनः पाँच भेद हैं –जो विष्णु, पुरुष, सत्य, अच्युत और अनिरुद्ध हैं। पाँचरात्र वेत्ताओं के अनुसार व्यूह के चार प्रकार हैं, जो वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध हैं। इनमें संज्ञा-भेद के सिवा अर्थ भेद नहीं है।' –महाभारत का कथन है।

३. विभव-स्वरूप – साधु परित्राण, दुष्टशिक्षण और धर्म की स्थापना करके लोक कल्याणकारक रूप है। राम और कृष्ण इस प्रकार के अवतार हैं।

४. अन्तर्यामि स्वरूप – ज्ञान गोचर अन्तर्नियन्ता, हृदय-कमल कोशान्तर्वर्ति सुषिर मध्यगत वैश्वानर भास्वर तनु पीत शिखा मध्य विद्योतमान स्वरूप यही है।

५. **अर्चा स्वरूप** – यह वह रूप है, जो अपने आश्रित भक्तों की इच्छानुसार आविर्भूत होकर विभव स्वरूप लक्षण से देश कालावधि-रहित सर्वसहिष्णु होकर अर्चक के पराधीन होते हुए आलयों और गृहों में विराजमान होता है।

परमेश्वर सर्वकल्याण गुणवान् होने पर भी अपने आश्रितों की सुविधा के लिए वात्सल्य, सौशील्य, स्वामित्व और सौलभ्य के विशेष गुण संपन्न हैं। इन चारों में सौलभ्य जो है, वह आश्रितों की कार्यसिद्धि की आधार-शिला है। ऐसा सुलभसाध्य गुण चारों स्वरूपों में भी यह न काल से, न देश विप्रकर्ष से और न इन्द्रिय विप्रकर्ष से प्रभावित होता है।

इस प्रकार चारों में जो सौलभ्य गुण है, वह इस अर्चावतार में गिरि, ग्राम एवं गृहों में विराजमान होने से सदा परिपूर्ण रहता है।

यजुर्वेद ब्राह्मण का कथन इस प्रकार है – 'अर्चावतार स्सर्वेषां बान्धवो बन्धुवत्सलः' – इस प्रमाण से अर्चावतार जगत् के स्वामित्व को सर्वेषां बान्धवः (तर-तम-भेद रहित सबके बान्धव) बन्धुत्व को तथा सौशील्य को 'बन्धुवत्सलः' से वात्सल्य को प्रकट करता है। भगवान के बन्धु का अर्थ है कि जो नित्य भगवान के तीर्थ और प्रसाद का अनुभव करते हुए भगवान के आश्रय में रहता हो। इसका प्रमाण है –

तदस्य प्रिय मभि पाथो अश्या न्नरो यत्र देवयवो मदन्ति
उरु क्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णो पदे परमे मध्व उत्सः।

(१-४-६-३ मन्त्र)

टीका – भगवान के आराधक जिन तीर्थ-प्रसादों से संतुष्ट होते हैं, उनका स्वयं अनुभव करनेवाला भगवान का बन्धु होता है तथा वह परमपद का आसक्त होता है।

[(प्रतिपदार्थ – अस्या श्रुते रयमर्थः ॥ अस्य = विष्णोः; प्रियंतत्पाथः = तन्निवेदित अन्न आदि; अभ्यश्यां देवयवः = देवाराधकाः नरः = मानव;

यत्रमयन्ति = यस्मिन्निवेदिते हृष्यन्ति॥ निवेदितं तीर्थं प्रसादादिकं स्वीकृत्य हृष्टा भवन्तीत्यर्थः॥ इत्थं = प्रतिदिनं वर्तमानः। उरुक्रमस्य = विष्णो बन्धुः स एव अतीव अभिमतः। परमे = परमोत्कृष्टे। मध्वे = मधुकल्पोऽप्यतमे विष्णोः पदे, उत्सः = उत्सुकोभवतीत्यर्थः।)]

इस कारण अर्चावतार में वे सब गुण समाविष्ट हैं, जो परमेश्वर के आश्रय से प्राप्त कल्याण गुण हैं। अर्चावतार में प्रविष्ट परमेश्वर अज्ञानी, अशक्त, अपूर्ण और अधीन के जैसे दीख पडने पर भी वह सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, अवाप्त, समस्तकामी, सर्वशेषि होने के कारण अपने निरवधिक करुणा-प्रवाह से अपने आश्रितों को नेत्र, पुत्र, कलत्र, क्षेत्र और मोक्ष समस्त अभीष्टों की पूर्ति करते हैं।

इस अर्चा स्वरूप के चार प्रकार होते हैं–

१. स्वयं व्यक्त रूप – भगवान स्वयं व्यक्त रूप में प्रकट होते हैं।

२. दिव्य-रूप – देवताओं से प्रतिष्ठित रूप।

३. सैद्ध-रूप – योग संसिद्धों से प्रतिष्ठित अर्चारूप। ये सब स्वरूप पुराणों में विदित हुए हैं।

४. मानुष-रूप – जो मानवों से प्रतिष्ठित होता है वह स्पष्ट रूप माना जाता है।

इनके अलावा महर्षियों से प्रतिष्ठित अर्चारूप 'आर्ष' कहे जाते हैं। कतिपय पण्डित इसे पाँचवाँ मानते हैं और कतिपय इसे अन्तर्भाव के अंतर्गत मानते हैं।

इन अर्चा स्वरूपों में जो स्वयं व्यक्तार्चारूप है, वह महान शक्तियुक्त हो प्रकाशित होता है। ऐसे व्यात्तार्चारूपों में श्री श्री वेंकटेश्वर स्वामी अद्वितीय है, जो ब्रह्माण्ड में ही अग्रस्थान में देदीप्यमान होता है।

इस प्रकार पुराणों में वर्णित ही नहीं, वर्न सहस्र भक्तों का आश्रय होकर दयापारवश्य से उन्हें नेत्र, पुत्र, कलत्र आदि वरदान देते हैं उनसे समर्पित सब प्रकार के रत्नाभूषणों को वात्सल्य तथा प्रेम से स्वीकारते हुए शेषशैल शिखराग्र पर आनंद-निलय में पद्म-पीठिका पर मन्दस्मित हो विराजमान हैं।

यह भारतीयों का महाभाग्य है। स्वामी के वैभव संबंधी जो जो अंश प्रस्तावित हुए हैं, वे सब वराहपुराण, भविष्योत्तर पुराण, आदित्य पुराण, स्कन्द पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण आदि पुराणों, वेदों और शास्त्रों में अभिवर्णित हैं। शास्त्रों का कथन है कि श्री वैकुण्ठ में श्रियःपति श्रीमन्नारायण के दर्शन करके भक्त मुक्त हो जाते हैं। यथा –

'नित्यांजलिपुटा हृष्टा नम इत्येव वादिनः' यहाँ के कथनानुसार अंजलिबद्ध होकर, प्रणाम करते हुए अवाङ्मानसगोचर आनंद पाते हैं।

इसी प्रकार अब वेंकटाद्रि पर श्री बालाजी के दर्शन करनेवाले भक्त तन्मय होकर पुनः पुनः दर्शन करने की आकाँक्षा से बारंबार स्वामी को देखते हुए अंजलिबद्ध होकर प्रणाम करते हुए नित्यानंद का अनुभव करते हैं।

श्रियःपति अपने अश्वत्थ हिरण्मय भवन, अपराजितपुर इत्यादि परमानंददायक स्थानों से प्रकाशित वैकुण्ठ को छोडकर परमानुराग से तत् समान स्थानों से प्रकाशित इस वेंकटाद्रि पर विराजमान होने के कारण तिरुमल को 'कलियुग-वैकुण्ठ' मानते हैं।

जो भक्त श्री बालाजी के दर्शन से(तृप्ति न होनेवाला) आनंद सागर मग्न होते हैं, उन्हें तात्कालिक मुक्त जीव कहते हैं।

ब्रह्मादि देवतागण इस विषय को समझने लगे कि श्रीमन्नारायण अपनी लीलाविभूति से संसारबद्ध जीवों का उद्धार करने श्री वैकुण्ठ से श्री वेंकटाद्रि पर पधारे हुए हैं। इस प्रकार समझने के बाद वे भी वेंकटाद्रि पर पधारकर पुण्य-तीर्थों में नहाकर श्री स्वामी के दर्शन और आराधना करके तीर्थ-प्रसाद

श्री वेंकटेश्वर स्वामी ब्रह्मोत्सव का ध्वजारोहण

विज्ञानसम्पन्नमतिप्रपन्ने,
लक्ष्मीकटाक्षाञ्चित पुण्यमूर्तिः ।
हरिप्रियो वैष्णवधर्मवेदी,
खगेश्वरो वः श्रियमातनोतु ॥

को स्वीकारने लगे; स्वामी के उत्सव मनाकर साधारण भक्त भी ऐसे उत्सव मनाने के प्रेरणदायक हो गए।

इसके बाद देश के कोने-कोने से जनसमूह तिरुमल की यात्रा स्वामी के दर्शन के लिए गोविंद नाम और भजन करते पैदल आने लगे। इस प्रकार तिरुमल पर पहुँचकर श्रीस्वामि-पुष्करिणि, आकाश गंगा, पापविनाश, पाण्डवतीर्थ आदि पुण्य तीर्थों में स्नान करके अपने नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करते थे; श्रद्धा और भक्ति से श्री बालाजी के मंदिर में चलकर आनंद-निलय विमान की परिक्रमा करके अपनी प्रार्थना से मिनौती समर्पण करते थे; श्री स्वामी के दर्शन करके तीर्थ-प्रसाद स्वीकार करते; स्वामी की विशेष पूजा और उत्सव मनाया करते थे; मिन्नतों को समर्पित करके अपने को धन्य मानकर अपने स्वस्थल वापस जाते हैं। यही क्रम आज भी आचार के रूप में चलता है।

भारत देश में हिन्दू-धर्म में सब आस्तिक होने पर भी भेदभाव और पूर्व-जन्म संस्कार विशेष से शैव, शाक्तेय आदि के धर्मावलम्बी होना अवश्यंभावी हो गया था। उन धर्मों के प्रचारकों ने सब को अपने-अपने धर्म में लेने के प्रयत्न किए, पर ऐसा कभी न हुआ, न होगा और न हो सकेगा। उदारवादी महापुरुषों ने धर्म का समन्वय करने के यत्न में बहुत प्रयास किया। परंतु ऐसे प्रयत्न भी अन्य नए-धर्म की स्थापना का उद्यम ही रह गया। इस प्रकार मतमतांतरों की संख्या बढ़ने लगी; एकत्व की साधना में असफल हुए। क्रमशः नास्तिकता बढने लगी।

भारत में इस प्रकार बहुत उप-शाखाओं के होने पर भी सब धर्मावलम्बी, नास्तिक और आस्तिक श्री स्वामी के प्रति व्यतिरेक भावना न रखकर बालाजी के सान्निध्य में आते हैं; अपने परविार सहित स्वामी के दर्शन करके तीर्थ-प्रसाद स्वीकार करके आनंद से वापस जाते हैं।

विशेषता यह है कि श्री वेंकटेश्वर परतत्त्व रूपा श्रियःपति के अर्चारूप में रहकर जीवों का उद्धार करने वेंकटाद्रि पर विराजमान हैं। इस अर्चारूप के

बारे में कई मत-भेद हैं, जो इस प्रकार हैं – श्री स्वामी के दर्शन करके विभिन्न धर्मावलम्बी अपने उपास्य देवता के मर्यादा के लिए स्वात्म गौरव की काँक्षा से भिन्न मत्त प्रस्तुत करते हैं ।

फालनेत्र के न होने पर भी स्वर्ण नागभरणधारी हैं। 'वेंकटेश्वर' नाम ईश्वर शब्द का सूचक है। अतः वह शिव रूप है। शिव-भक्त इस मत के हैं।

कतिपय भक्तों का मत है कि उसके चार मुख न होने पर भी पद्म-पीठिका पर आसीन होने से वह ब्रह्मा है।

कतिपय लोग स्वामी के शरीर की सरंचना देखकर कहते हैं कि वह 'देवी' का ही रूप है और इसीलिए शुक्रवार अभिषेक किया जाता है।

कुछ लोगों का मत है कि 'नामैकदेशे नामग्रहणं' के न्याय से भीमसेन को भीम और सत्यभामा को भामा जिस प्रकार कहते हैं, उसी प्रकार कुमारस्वामी की पुष्करिणी को 'स्वामि-पुष्करिणि' कहते हैं और कुमार स्वामी की पुष्करिणि के तट पर स्थित होने से वह मूर्ति कुमारस्वामी की ही है।

कुछ लोगों का मत है कि स्वामी के निवास के ग्राम का नाम 'तिरुपति' नहीं 'त्रिपति' है और कालान्तर में वह तिरुपति हो गया है। हो सकता है कि स्वामी का नाम ही ग्राम का नाम चालू में रहा हो। 'त्रिपति' का नाम इससे निष्पन्न हुआ है कि –

'त्रयाणां ब्रह्मा विष्णु रुद्राणां पतिः' – अर्थ यह है कि इस व्युत्पत्ति से वह ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र का भी प्रभु है। अतः श्री वेंकटेश्वर स्वामी इन तीनों में कोई नहीं है; अपितु इन तीनों से अतीत त्रिमूर्तियों का वह प्रभु है। विभिन्न मतों से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक शाखा अपने उपास्य देवता का आरोप निग्रहानुग्रह संपन्न कलियुग के प्रत्यक्ष दैव पर करके अपने उन्हें (स्वामी को) अपना उपास्य-देव सिद्ध करने के व्यर्थ प्रयत्न करते हैं।

इस संदर्भ में महर्षियों से रचित पुराणों को भी देखना अप्रासंगिक न होगा – भागवत के दशम स्कन्द ८९वाँ अध्याय का कथन इस प्रकार है –

पूर्वकाल में सरस्वती नदी के किनारे जो दीर्घ-सत्र चला था, उस में यह वितर्क हुआ था कि मुख, भुज, नयन के विलक्षणों से युक्त सृष्टि-स्थिति और लयात्मक शक्तियों से प्रकाशित ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र देवाधीशों में 'को महान्' (कौन महान है)। इस महत्त्व को जानने के लिए महर्षियों ने ब्रह्मा-पुत्र भृगु महर्षि को भेजा था।

भृगु प्रप्रथम ब्रह्मा-सभा में गया और ब्रह्मा की स्तुति किये बिना चुप बैठा था। ब्रह्मा को जो क्रोध आया, उस क्रोधाग्नि को जप और विवेक से संयमित किया। इसके उपरान्त भृगु कैलास गया। उसे देखते ही शिव आगंतुक को अपना भ्राता मानकर आलिंगन करने गया। महर्षि बोला कि तुम (मेरे संकल्प से दूर रहनेवाले) हो – ऐसा कहकर उसका तिरस्कार किया। महादेव कुपित होकर अपने शूल से उसका अंत करने उद्युत हुआ। पार्वती देवी ने अपने पति के पादों को प्रणाम करके, उस प्रयत्न से विरत किया।

तदुपरान्त भृगु श्री वैकुण्ठ गया और वहाँ एकान्त में लक्ष्मी के साथ जो विष्णु था, उसके छाती पर अपने पैर से धक्का मारा। तत्क्षण श्री महाविष्णु ने अपने शेषतल्प से उतरकर महर्षि के पादों को प्रणाम किया और उचित आसन देकर प्रश्न किया।

विष्णु बोले – 'हे तपोधन! आपके आगमन को न जानने का मेरा अपराध क्षम्य हो। मुझे और मेरे लोक को तीर्थ श्रेष्ठ आपके पादोदक से पवित्र कीजिए। आपके पाद स्पर्श से मेरे पवित्र वक्षस्थल पर लक्ष्मी अनपायिनी (अनपायिनी= कभी न छोड सकनेवाली) रहेगी।' – मीठी बातों से भृगु को स्वांतन मिला। वह तृप्त होकर भक्ति के अतिशय से आनंद-भाष्पों से मौन रहा।

भृगु महर्षि ने सरस्वती नदी तट पर पहुँचकर सब महर्षियों से अनुभवों के बारे में कहा। ब्रह्मवादी महर्षियों ने मुक्तकंठ से निश्चय किया कि श्रीमहाविष्णु असमान निरवधिक परतत्त्व है।

पद्मपुराण के उत्तरखण्ड के अध्याय ६० में ऐसा कहा गया है – इसी घटना को प्रस्तावित करके श्री महाविष्णु के परतत्त्व और उसके अनुकूल कल्याण गुणों की स्तुति की गयी है।

भविष्योत्तर पुराण के द्वितीय अध्याय में इसी प्रकार का कथन है–

को वा भुंक्ते यज्ञ फलं (यज्ञ-फल का भोक्ता कौन है)?

कस्य वार्प्यते (किसे समर्पित किया जाता है)?

को वा ध्येयः (ध्यानगम्य कौन है)?

ऐसे वितर्क करके महर्षियों ने 'परतत्त्व' की परीक्षा के लिए भृगु को भेजा था। सब ने संशयमुक्त होकर श्री महाविष्णु को ही 'परतत्त्व' निश्चय किया। श्री महाविष्णु को ही यज्ञ-फल देने का प्रसंग है।

भृगुमहर्षि 'परतत्त्व' का निर्णय करके चले जाने के बाद लक्ष्मी देवी ने एकान्त में श्रीमहाविष्णु से कहा 'हे देवदेव! मेरा निवास स्थल आपका जो वक्ष स्थल है, उस पर महर्षि के धक्का देने पर भी आप सहनकर चुप रहे और मेरा अनादर किया है। मैं भूलोक जा रही हूँ।' इस व्याज से वह भूलोक गयी।

इस पुराण में यह भी कहा गया है कि महाविष्णु को विस्मय, अनुराग और दुःख एक साथ होने से वे लक्ष्मी का अन्वेषण करते अपने परमानंद स्थान वैकुण्ठ को छोडकर श्री वेंकटाचल को पधारे।

पद्मपुराण के अध्याय-३० में भी श्रीस्वामी लक्ष्मी के लिए श्रीशुकपुर के पद्मसरोवर के तट पर बहुत काल तक तप करते थे। तदनन्तर लक्ष्मीदेवी अपने प्रणय-कलह जन्य विरोध छोडकर पद्मसरोवर के पद्म में आविर्भूत हो गयी। ब्रह्मा आदि देवताओं के समक्ष में उसने दरहास से कल्हार-माला को श्रीस्वामी के कण्ठ में पहनाया। स्वयं स्वामी के वक्षस्थल पर विराजमान हो गयी। इस पुराण के अनुसार इस घटना के बाद तत्क्षण श्रीस्वामी अपने

वाहन खगराज पर प्रविष्ट होकर लक्ष्मी सहित पुष्करिणि के तट शेषाद्रि पर आनंद से रहते थे।

पंचकाल परायण अस्मदाचार्य ने एक दिन अपने स्वाध्याय के समय एक ऐतिह्य को अनुग्रह किया, जिसके अनुसार घटना-क्रम इस प्रकार है –

प्राचीन काल में एक बार 'परतत्त्व' निश्चय करने की सभा में (देवसभा) चतुर्वेद श्रूयमाण परतत्त्व का प्रतिपादक और वेदों में अग्रस्थान प्राप्त पुरुष-सूक्त जगत के प्रभु विराट्पुरुष के धर्मों का प्रतिपादन करता था; उस समय वहाँ प्रविष्ट प्रमुख ब्रह्मा, रुद्र आदि देवतागण अपने अपने मन में सोचने लगे कि जगत्-प्रभु का धर्म हममें भी वर्तमान है और यदि न हो, तो उनका संपादन किया जा सकता है। उनमें प्रत्येक देवता 'जगत्प्रभु' का दिव्य स्थान प्राप्त करने के उत्साह में रहे। इतने में उत्तरानुवाक वचन ऐसा सुन पडा–

'ह्री श्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ' – अर्थ है , जगत् प्रभु विराट्पुरुष का स्वरूप निरूपक धर्म 'लक्ष्मीपतित्त्व' है। इसे सुनते ही ब्रह्मादि देवतागण जगत्प्रभु होने के अपने विचारों को त्यजकर मौन बैठ गए। महाविष्णु लक्ष्मीपति होने के कारण जगत् प्रभु तथा परतत्त्व के रूप में प्रकाशमान हो गये। श्री परतत्त्व वेत्ता पराशर भट्टजी इस सूक्ति से यह स्पष्ट करते हैं कि उत्तरानुवाक भी इसका प्रतिपादन करता है कि परतत्त्व लक्ष्मीपतित्व से ही संपन्न होता है। यथा – **अधिजगावुत्तरश्चानुवाकः** ।

पूर्व पुरुष, पुराण और वेदों में भी इस प्रकार का निरूपण होने पर भी कतिपय भक्तों के संशयात्मक भावों को दूर करने के लिए ज्ञान-धुरीण पूर्वों ने श्री वेंकटेश्वर स्वामी और श्रीलक्ष्मी का अभिषेक एकान्त में करने के नियम भी त्यजकर सब के समक्ष में अभिषेक किया करते थे।

ऐसा करने से परम पुरुष श्री स्वामी का स्वयं-व्यक्त दिव्य स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध होता है। इस स्वरूप में प्रत्येक किसी भी देवता के आभरण, नेत्र, मुख नहीं होने से संशयात्मक अपने भ्रम से दूर होकर स्वामी

का यथातथा रूप-दर्शन पाते हैं। वे इस निश्चय पर आ सकते हैं कि यह स्वयं-स्वरूप किसी अन्य देवता का नहीं है। इसकी अपेक्षा और एक प्रमाण यह है कि वक्षस्थल पर लक्ष्मी माता का प्रत्यक्ष रूप है, जो यह सिद्ध करता है कि श्री बालाजी श्री महाविष्णु का ही अर्चा स्वरूप है। अतः शुक्रवार के दिन का अभिषेक स्वयं व्यक्त दिव्य स्वरूप का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस दिव्य दर्शन से संशयात्मक सही निर्णय करके कृतार्थ हो जाते हैं।

इस प्रकार श्रीमहाविष्णु का दिव्य अवतार श्री वेंकटेश्वर का निवास समस्त देशवासियों के लिए यात्रास्थल बन गया। श्री वेंकटाद्रि पर रात के समय ब्रह्मादि देवतागण से स्वामी की आराधना की जाती है। त्रिकालों में वैखानस शास्त्रविधि से आराधना होती है।

स्मृतियाँ और पुराण भी वैखानसाराधना को वैदिकाराधना कहते हैं। यथा –'**श्रौतं वैखानसं प्रोक्तं**'। वेदवेद्य श्री स्वामीजी की वैदिकाराधना विशेष बात है।

श्री स्वामी के उत्सव (पर्व) वैखानस शास्त्र के अनुसार तथा पुराणों के अनुसार अत्यंत वैभव से मनाए जाते हैं। पुराणों में यह स्पष्ट किया गया है कि श्रीस्वामी के उत्सव ब्रह्मादि देवतागण बहुत श्रद्धा-भक्ति से मनाते थे।

श्री स्वामीजी के आश्रय में जो जो पुण्य-तीर्थ हैं, उनका दिव्यत्व स्वामी के उपासक महर्षियों के स्नान करने से और तटों पर तपस्या करने से (दिव्यत्त्व) द्विगुणीकृत हो जाता है। यात्रियों के नहाने से भी पुण्य-तीर्थ श्री स्वामी के अनुग्रह के पात्र हो जाते हैं।

श्री स्वामी के जो जो उत्सव मनाए जाते हैं, वे सब शास्त्र विधि से और आचारों के अनुसार चलते हैं।

श्री स्वामी की सेवा के समय निवेदन के अनुसार किए जाते हैं। श्रीस्वामी की सेवा और दर्शन के लिए भक्त-जन श्रद्धापूर्वक जो भेंट चढ़ाते हैं, वे अल्प

होने पर भी 'पत्रं-पुष्पं' के न्याय से मानवों को कृतार्थ करके शेषत्व प्रसादते हैं।

श्री स्वामी के दर्शन और वैभवों को देखते हुए यात्री लोग फल की काँक्षा करनेवाले और फलासक्त न होनेवाले भी कृतार्थ हो जाते है। धीरे-धीरे मंदिर के अधिकारियों द्वारा यात्रियों की सुविधाएँ दिनों-दिन बढ़ती जाती हैं। अतः प्रत्येक दिन तीस हजार से अधिक संख्या में यात्रिक भगवद्दर्शन करते हैं। पुष्करिणी-स्नान, स्वामी-दर्शन और तीर्थ-प्रसादों से भक्तजन कृतार्थ हो जाते हैं।

कहा जाता है कि सन् १९७६ ई. तक श्री स्वामी को भक्तजनों से भेंटों और अर्जित (Paid) सेवाओं द्वारा प्राप्त धन-राशि करीब दस करोड से अधिक है। इस प्रकार स्वामी की आय बढ़ती ही जाती है। श्रीस्वामी के अनुग्रह के पात्र मंदिर के अधिकार-गण भी भक्तजन व यात्रियों की सुविधा के कई प्रबंध करते ही रहते हैं और आगे और भी उत्साह से करते रहेंगे। तिरुमल पर रहने की सुविधा होने से भक्तजन विभिन्न उत्सव और आराधनाएँ स्वामी के नाम पर करते हैं। अतः भक्तजन भी दर्शन करने तथा उत्सवादि कैंकर्य करने केलिए उत्सुक होते हैं।

उत्सव की परिभाषा है – 'उत्सूते हर्षं इति उत्सवः' – इसके अनुसार उत्सव का अर्थ आनन्द को अधिकाधिक रूप में उद्भुत करना है। अब हम इस पर दृष्टिपात करेंगे कि स्वामी के वैभव का आनन्द भक्तजन कैसे पाते हैं।

अखिल विश्व के ब्रह्माण्ड का जगत् प्रभु श्री स्वामी के उत्सवों में जुलूस के पहले भाग में मनोहरालंकृत ऐरावत जैसे मत्त गज ऊर्ध्वपुण्ड्रधारी हो निकलते हैं; उच्चैश्रव जैसे अश्व अपने अलंकारों से नेत्रानंद करते हैं; महेश्वर वाहन से भी अधिकाधिक अलंकारों से सज्जित वृषभ; वैष्णव रूपधारी परमेश्वर कैंकर्य-मुद्रालंकृत से भासित परिवारजन, उत्सव-पताकों के जैसे मन्दगमन करते हैं।

श्रीवैष्णव भागवतोत्तम द्वादशोर्ध्व-पुण्ड्रधारी होकर पद्माक्षमालाओं से सज्जित होकर 'नालायिर दिव्य प्रबंध गाथाओं' का मृदुमधुर कण्ठों से मस्त गाते हैं; विविध प्रांतों के विविध भाषा-भाषी यात्रिक भक्त-जन भगवदुत्सव संनिवेश संदर्शन से अमंदानंद- कंदलित हृदयों से मंदगमन करते हैं।

नादस्वर वादन-कला में निपुण, स्वर्ण-पदकों से सम्मानित प्रसिद्ध गायक स्वामी के उत्सव में उच्च-स्वर में गान करते अपने वाद-नैपुण्य से प्रेक्षक एवं श्रोताओं को आनंदमग्न करते चलते हैं; मंदिर के अधिकारी-गण, उनके अनुचर, उनके परिवार, राजनैतिक भट-वर्ग, स्वामी के संदर्शन के लिए आए हुए भक्त-जन संदोह के कोलाहल का नियंत्रण करते हुए आगे धीरे-धीरे चलते हैं; भक्त प्रेक्षक परस्पर संभाषण करते हैं कि श्रीवैकुण्ठ में भी न होनेवाला यह उत्सव तिरुमल को वैकुण्ठ ही बनाता है; श्री स्वामी के रथ के पृष्ठभाग में वैदिक श्रेष्ठ चतुर्वेदों का पारायण प्रवीण भागवतोत्तम के चित्त-हर वेदपठन से कर्णपुट अमृतधारा से भर जाते हैं।

लयब्रह्म नाम-संकीर्तन करते पुलकित गात्रों से तन्मय हो उत्सव की पंक्तियों में चलते हैं; मृदंग आदि वादनों के अनुरूप नृत्यकारों का नृत्य रमणीय होता है।

इस जन-संदोह के मध्य-भाग में स्वर्णिम वाहनों पर वज्रकवचादि मनोहर अलंकारों से, विचित्र पुष्पमालाओं, नाना रत्नाभरणों और सुवर्णाभरणों से सुसज्जित श्रीस्वामी अपने दोनों देवेरियों सहित आरूढ़ होकर राजसी ठाठ-बाट से तिरुवीथियों में पधारते हैं।

ऐसा मानना पडता है कि उत्सवों का अधिकाधिक वैभव और उनकी मनोहारिता से प्रसन्न श्रीवेंकटेश्वर स्वामी को वैकुण्ठ के प्रति अनासक्ति तथा कलियुग-वैकुण्ठ (तिरुमल) के प्रति आसक्ति के लिए ये उत्सव ही कारक हैं।

स्वामी के वैभव से संतुष्ट मंदिर के अधिकारियों के अभिमत के अनुरूप मंदिर में श्रीस्वामी की जो जो सेवाएँ प्रतिनित्य होती हैं और साल भर मनाए जानेवाले उत्सव आदि के बारे में भक्त-जनों के उपयोग के लिए 'तिरुमल-तिरुपति-यात्रिक दर्शिनी' नामक पुस्तिका मुझ से लिखी गयी थी। (इस पुस्तिका को देवस्थान प्रति संवत्सर प्रकाशित करता है)।

श्रीस्वामी के देवस्थान के सर्व कार्यनिर्वाहक श्रीमान् पी.एस.राजगोपाल राजु महाशय ने इस दिव्य ग्रन्थ की रचना शीघ्र होने का आदेश दिया; परंतु ग्रन्थ की रचना, शास्त्र की अपेक्षा आचार-व्यवहार पर आधारित होने के कारण पूरा करने में विलम्ब भी हुआ। दैवानुग्रह से यथाशक्ति इस वैष्णव ग्रन्थ में षडंशों का संग्रह करके अखिल भुवनैक नियन्ता, करुणासागर श्री वेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित किया। श्री स्वामीजी का देवस्थान आन्ध्रप्रदेश में होने पर भी यहाँ मनाए जानेवाले उत्सव द्रविड-देश संबंधी आचारों से प्रभावित होने से चान्द्रमान और सौरमान भेदों से उत्सवों का प्रारम्भ समय कभी-कभी बदलते जाते हैं। भक्त जन (पाठक) इसे ध्यान में रखें।

श्री स्वामीजी के देवालय के शासक व सभाध्यक्ष श्री अन्नाराव महाशय एवं देवालय के कार्यनिर्वाहक श्री पी.एस.राजगोपालराजु (E.O.) महाशय की श्रद्धा-भक्ति से हिन्दू-धर्म की जय-पताका सम यह मंदिर दिनों दिन परिवर्धित होता है। संसार भर के धार्मिक संस्थाओं में यह मंदिर अग्रगण्य हो प्रकाशमान है। श्री स्वामीजी की भाँति उनका मंदिर भी निस्समाभ्यधिक देवालय है। श्री वेंकटाद्रि निवासी सरस स्वामी अर्चावतार से अपने योगक्षेम का सतत विचार करनेवाले इन देवालय अधिकारियों और उनके परिवारों को भी आयुरारोग्य से संपन्न करें।

पाठक महाशय राजहंस के न्याय से इस ग्रन्थ के दोषों को त्यजकर, गुणों का मात्र ग्रहण करें। यही मेरी विनति है।

पण्डित वेदान्तं जगन्नाथाचार्य।

आस्थान विद्वान, तिरुपति।

प्रथम-भाग

श्री स्वामीजी की नित्याराधना के विधि-विधान

ॐ अपार कारुण्य औदार्य वात्सल्य सौशील्य स्वामित्व और कल्याण गुण संपन्न, कलि-युग का प्रत्यक्ष देव कामितार्थ प्रदायक श्री वेंकटेश्वरस्वामी वेंकटाद्रि पर आनंदनिलय में परमानंद अर्चावतार के रूप में विराजमान हैं। देवस्थान में स्वामी की नित्य जो जो सेवाएँ, महाद्वार खोलने व बंद करने तक जो सेवाएँ की जाती हैं उनका विवरण: –

सुप्रभात

ब्रह्ममुहूर्त के पहले (५६ घटिकाओं को) जागरण-वाद्य मधुर स्वर में वादनकार श्री स्वामीजी के देवस्थान में घोष करते हैं। घोष के समय अर्चक-बृन्द, जिय्यर-स्वामि-गण, एकांगी, श्रीवैष्णव आचार्य पुरुष, वेदवेत्ता, भागवतोत्तम भक्त-जन, मंदिर के अधिकारी, परिजन आदि लोग अपने नियत कर्मानुष्ठान के लिए स्वामी के महाद्वार के पास आते हैं। वहाँ से गोविन्द नाम का संकीर्तन करते हुए वे ध्वज-प्रदक्षिण के पार्श्व से आनंद-निलय के आगे आते हैं। विमान परिक्रमा करते हुए स्वामीजी के सुवर्ण द्वार के दोनों पार्श्वों में स्थित द्वारपालकों के पुरोभाग में आते हैं। प्रधान अर्चक स्वामी के स्वर्ण-द्वार के कवाटों के तालों को मन्त्र-पढ़ते हुए चाबी से खोलते हैं। उन कवाटों पर पिछली रात सरकारी अधिकारियों से तालों पर लगाए मुहर को अलग करते हैं। तदनन्तर ग्वाला जिसे स्वामी के प्रभात के समय कवाट खोलने का कार्य कैंकर्य के रूप में विरासत से प्राप्त हुआ है, उसके अनुसार कवाट खोल देता है। किवाड खोलते ही अर्चक-बृन्द महामुनि विश्वामित्र ने त्रेता-युग में श्रीरामचन्द्र के लिए जो सुप्रभात श्लोक गाये थे, उन्हें गाते हैं, जो इस प्रकार है–

कौसल्या सुप्रजा रामा पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते
उत्तिष्ठ नरशार्दूला कर्तव्यं दैवमाह्निकम्।

इसे पठन करते हुए अर्चकृबृन्द, जिय्यंगारों, एकांगियों और उस ग्वाल के साथ आलय में प्रवेश करते हैं। इधर सुवर्ण-द्वार के पास निरीक्षित भक्त-जन भी अर्चकों के स्वर में स्वर मिलाते हुए सुप्रभात का गान करते हैं। सुप्रभात का मधुर गान ऐसा गाया जाता है, मानों स्वामी करवट बदलकर धीरे-धीरे उठते हों। बाद श्री वेंकटेश स्तोत्र, प्रपत्ति और मंगलाशासन के गीत गाते हैं। आलय प्रवेश के बाद गर्भालय के किवाडों को अर्चक खोलता है। वे स्वामी की सन्निधि में जाकर स्वामी के पादारविंदों को प्रणाम करते हैं। स्वामी का ध्यान करके उनकी अनुमति से झूले पर शयन किए हुए भोग-श्रीनिवास के पास जाकर तालियों की ध्वनियों से प्रणवपूर्वक मन्त्र पढ़ते हुए भोगमूर्ति को जगाते हैं। भोगमूर्ति को स्वामी की सन्निधि में विराजमान कराते हैं। जिय्यंगार और एकांगी अंदर प्रवेश करके ज्योतिज्वलन तथा गर्भालय का समार्जन आदि करते हैं। इसके उपरान्त परिचारक परदा ड़ालता है और अर्चक स्वामी को नवनीत, दूध और शक्कर निवेदन करते हैं। कपूर, इलाची, फूगीफल के पत्ते मिश्रित चूर्णयुक्त सुगन्ध ताम्बूल समर्पण करते आरति देते हैं। अर्चक स्वयं तीर्थ सेवन और 'शठारि' से अपने को पूतकर वहाँ के सब लोगों को भी देता है। स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में खडे हुए अर्चकों से 'मंगलाशासन' पूरा होते ही स्वामी को मंगल आरति उतारने के बाद भक्तों को स्वामी की सन्निधि में जाने देते हैं। भक्तजन भी आतुर हो स्वामी के दर्शन-भाग्य पायेंगे।

विश्वरूप दर्शन

विश्वरूप दर्शन वह है, जो सुप्रभात के उपरान्त भक्तों को (स्वामी का दर्शन) मिलता है। रात की पूजा के बाद कवाट बंद होने के बाद ब्रह्मादि देवता स्वामी के दर्शनार्थ आते हैं। प्रार्थना, ध्यान और अर्चना करके वे तीर्थ

लेकर परमानंद से जाते हैं। इसलिए स्वामी की सन्निधि में तीर्थ फल पुष्प भी रखे जाते हैं। देवताओं के तीर्थ लेने के बाद जो तीर्थ बचा हुआ है, उसे वहाँ के आचार्यों, जिय्यंगारों, वैष्णव-गोष्ठि में तथा भक्तों में भी बाँटते हैं। विश्वरूप दर्शना काँक्षी भक्त बहुत उत्साह से उस समय के दर्शन के लिए आते हैं। वे सब भगवान के दर्शन करेंगे। संप्रदायवेत्ता इस दर्शन को विशेष स्थान देते हैं।

शुद्धि (मांजन)

विश्वरूप दर्शन के उपरान्त आलय का पूरा संमार्जन करते हैं।

प्रात:काल की आराधना

इस आराधना के पहले श्री जिय्यंगार पुष्प-संग्रह-स्थान 'यमुनात्तुरै' में जायेंगे। वहाँ पुष्प-कैंकर्य करनेवाले नाना विध पुष्प कमल मुकुल तुलसी दवन (सुगन्ध पत्र विशेष) और मरवम् (सुगंध पत्र) से प्रत्येक विधि से तैयार की गयी पुष्प-मालाओं तथा पुष्पों व तुलसीदलों से भरे वेणुमय पात्र (बाँस से बनी टोकरियाँ) अपने सिरों पर धरकर भगवद्ध्यान से घंटानाद करनेवाले वादक के पीछे ध्वजदण्ड के परिक्रम से भगवान की सन्निधि में जायेंगे। अर्चक फूलों को शुद्धकर, पूर्वांग पूरा करके घंटानाद करते हुए अखिल जगत का ब्रह्माण्ड नायक श्री वेंकटेश्वर स्वामी की आराधना श्री वैखानस शास्त्र विधि से करता है। क्रमशः कौतुक मूर्ति (उत्सव मूर्ति) श्री भोग श्रीनिवास को चांदी से बनी चतुष्कोणाकृत पीठ पर विराजमान करेंगे। पुरुषसूक्त के पठन से अभिषेक प्रारम्भ होगा। वैष्णव वेदवेत्त सूक्त का पठन करते समय अर्चक अभिषेक-कार्य पूरा करेंगे। बाद को जिय्यर स्वामी-गण 'नीराट्ट' (तमिल प्रबंध काव्य) का पठन करते हैं। इसके उपरान्त वस्त्राभरणों तथा ऊर्ध्वपुण्ड्रादि से सुसज्जित करके स्वामी के सन्निधान में विराजमान कराते हैं। इस कार्य के बाद श्री बालाजी के स्वर्ण-पादों को स्नान-पीठ पर रखकर भक्ति और श्रद्धा से उनका भी अभिषेक करने के बाद उन्हें स्वामी के पादाब्जों में धरवाते हैं।

तदुपरान्त श्री स्वामी की सन्निधि में स्थित अतुल शक्तिमान श्री सीताराम, नरसिंह, गोपाल, मत्स्य, कूर्म आदि सालग्राम मूर्तियों को स्नान-पीठ पर रखकर अभिषेक करने के बाद पुनः नियमित स्थानों पर रख देते हैं। इस प्रकार अभिषेकित जल त्रिपथगा तीर्थों के समान है उसे भक्तों का तारण करने के लिए बडे पात्रों में पतद्ग्रहपात्र में प्रवाहित किया जाता है। श्री स्वामीजी के साथ अन्य महान् मूर्तियों तथा गर्भालय के देवताओं की विधि-विधान से उपासना की जाती है। इस समय श्री वैष्णव स्वामी और जिय्यंगार श्री तोन्डरडिप्पोडि आल्वार से रचित दिव्य-प्रबंध के साठ पाशुरों का गान करते रहते हैं। इसके अनन्तर अलंकारासन युक्त 'तोमाल-सेवा' का प्रारम्भ होता है।

तोमाल-सेवा (तोमाला=भुजाओं से पादों तक सजाई जानेवाली बृहत माला।)

श्री जिय्यंगार-बृन्द, आचार्य पुरुष, अध्यापक, श्री वैष्णव स्वामी सब मिलकर मुक्तकण्ठ से मृदु मधुर रीति से श्री आण्डाल विरचित 'तिरुप्पावै' (तीस) पाशुरों तथा दिव्यप्रबंध से अठ्ठाईश (२८) पाशुरों का गान करते रहते हैं। इसी समय अर्चक बडी श्रद्धा भक्ति से श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति को, श्रीदेवि-भूदेवि को और श्री स्वामी को कण्ठमालाएँ, हृदय पर्यन्त मालाएँ, कटि पर्यन्त मालाएँ, जानु-पर्यन्त मालाएँ, पादपर्यन्त मालाएँ, कठारि मालाएँ, शंख चक्र मालाएँ, शिरोमालाएँ, शिखर मालाएँ, जो नाना पुष्पों से तैयार की गयी हैं, उन्हें समर्पण करते हैं। क्रमशः अन्य देवताओं को भी पुष्पमालांकृत करते हैं। तोमाल-सेवा के नाम से जो अर्जित-सेवा की जाती है, उसमें भक्त-जन अलंकारासन में प्रविष्ट श्री स्वामी के दर्शन के लालायित होते हैं और दर्शन से तन्मय हो जाते हैं। इसके उपरान्त मन्त्र-पुष्प का पठन होता है; नक्षत्र आरति, कपूर-आरति के बाद श्री स्वामी का आस्थान (कोलुवु) चलेगा।

'कोलुवु' (आस्थान)

श्रीनिवास प्रभु को (आस्थान श्रीनिवास) स्वर्ण-द्वार के आगे आस्थान मण्डप जो है, उसमें सिंहासन के साथ स्वर्णछत्र, विंजामर आदि राजोचित वैभव के साथ श्रीनिवास को सिंहासन पर अधिष्ठित करते हैं। अर्चक श्रीस्वामी को महाराजोचित उपचार करते हैं। इस समय के अर्चक को दक्षिणा के रूप में ताम्बूल, फल और तिल-तण्डुल दान में दिये जाते हैं। अर्चक उसे स्वीकार करके कहता है 'श्री स्वामी नित्य ऐश्वर्य युक्त हो।' ऐसा कहने के बाद मंगलाशासन करते हुए स्वामी के दिव्य पादाब्जों पर अंजलि से पुष्प समर्पित करेगा। इस विधि के उपरान्त मिराशीदार श्रद्धालु होकर भक्ति से दिव्य-प्रबंध, चतुर्वेद, उपनिषत्, पुराण, इतिहास, कल्पसूत्र, ब्रह्मसूत्र और भाष्य इन सब को स्वामी को सुनाते हैं। पंचाग के अनुसार उस दिन की तथा (आगमी कल) की तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, ग्रहों का संचार, उत्सव आदि विशेषों के साथ सुनाए जाते हैं। बाद में पिछले दिन भक्तों ने जो भेंट चढ़ाईं थीं, जो धन समर्पित किया था, उन में सिक्कों को अलग करके उनका भी विवरण सुनाते हैं। उस कार्य के पूरा होते ही स्वामीजी को गुड़ मिश्रित तिल-चूर्ण समर्पित करते हैं। जिय्यंगारों और अधिकारियों आदि को आरति के बाद उसी चूर्ण को प्रसाद के रूप में वितरण किया जाता है। आस्थान का कार्य पूरा होते ही राजोचित उपचारों सहित स्वामी के सान्निध्य में विराजमान कराए जायेंगे। इस सेवा के उपरान्त सहस्रनामार्चन प्रारंभ होगा।

सहस्रनामार्चन

अर्चक श्री स्वामी के सान्निध्य में पादाब्जों के समीप कूर्मासन पर बैठकर संकल्प करके घंटानाद करते हुए सर्व उपचार करता है। बाद तुलसी तथा पुष्पों को हाथ में लेकर 'ॐ वेंकटेशाय नमः' कहते हुए श्री स्वामी के पादाब्जों में समर्पित करता है। इस सयम पूजा के आखिरी तक मिराशीदार भागवतोत्तम ब्रह्माण्ड पुराणान्तर्गत श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य सहस्रनामों

का मधुर-स्वर से गान करते रहते हैं। प्रणव का आदि और अंत में नमस्संपुटीकरण (नाम के आगे और अंत में नमः कहना) करके उच्च स्वर से चलता रहेगा। अर्चक एकाग्रता से संसार सागर समुत्तरण सेतु श्री स्वामी के पादाब्जों पर तुलसी और पुष्प समर्पित करता रहता है। अर्चक के लिए यह दिव्य कार्य सहस्र जन्मान्तर पुण्य फल ही है। इस अर्चना के बाद स्वामी के पादाब्जों पर समर्पित पुष्पादि लेकर पट्टमहिषियों श्री भूदेवियों के चरणारविन्दों में 'ॐ श्रीं श्रियै नमः' कहते हुए पूजा का प्रारम्भ करेगा। इस समय मिराशीदार, भागवतोत्तम वराह पुराणान्तर्गत लक्ष्मीनामों का श्रद्धान्वित हो गायन करता है। अर्चक भी एकाग्र निष्ठा से जगन्मातृ स्थान में सुशोभित श्री भूदेवियों की पूजा करता है। सहस्रनामार्चन दर्शन के अभिलाषी भक्तजनों का इस दर्शन से नेत्रपर्व होता है और अपने जन्म को धन्य मानकर परमानंद पाते हैं। श्री स्वामी और श्री माताओं का पूजन पूरा होते ही नक्षत्र आरति और कपूर-आरति देते हैं। इस अर्चन में भागलेनेवाले भक्तों की दर्शन-सेवा के बाद श्री स्वामी का भोजन करने आसन लगाया जायेगा। लघु-शुद्धि भी होती है।

प्रात: निवेदन – प्रथम घंटी

श्री स्वामी का परिचारक स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में खडे होकर स्वामी का नैवेद्य पकानेवाले पाचकों से उच्च-स्वर में कहता है कि श्री स्वामी के निवेदन के लिए 'प्रसाद' सिद्ध किया जाय' – इसे सुनते ही पाकशाला से कैंकर्यक मात्रा-प्रसाद, विशेष प्रसाद, प्रार्थना-प्रसाद और अन्य-प्रसाद लाकर स्वामी के दृष्टि-प्रसार के स्थान पर रखते हैं और स्वामी के दिव्य दर्शन पाकर अपने को धन्य मानते हुए चले जाते हैं। अर्चक अंदर जाकर तृतीय द्वार बंद करते हैं। अनुग्रह प्राप्त परिचारक आस्थान मण्डप में स्वर्ण-द्वार के दक्षिण में स्थित बृहत महा घंटाओं के बीच बैठकर दोनों घंटाओं के अंतर्भाग के दण्डों को दोनों हाथों में लेकर गर्भालय में श्री स्वामी और अन्य देवताओं से भी निवेदन प्रसाद के रूप में स्वीकार करने की प्रणव-ध्वनि से (घंटी को) बजाता

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की रथ-यात्रा

दृश्यमांन रथं विद्धि
पुरुषस्य शरीरवत् ।
अंतरंगे सुखासीनं
अच्युतं प्रणमाम्यहं ॥

है। घंटों के ध्वनि-तरंगों के प्रणव-नाद से देवालय का समस्त प्रांत गूँज उठता है। इसीको घंटानाद कहते हैं। प्रधान अर्चक प्रत्येक पदार्थ का मन्त्रपूर्वक समर्पण करके स्वामी का 'ोज्यासनोचित उपचार करता है। इलाची, फूगीफल, कपत्थ, हरा-कपूर मिश्रित ताम्बूल (मुखवास) को भी समर्पित करता है। कपूर की आरति के अनन्तर स्वामी की अनुमति से अर्चक स्वामी के प्रसादों में से अपना भाग ले लेता है, जिसे अन्य पात्र में रखता है। अर्चक बृन्द घंटाकाल के समय बंद कवाटों को खोल देते हैं। महाघंटाराव प्रणव ध्वनि बंद होती है। श्री स्वामी के निवेदित प्रसादों को कैंकर्यवान आलय से निर्णीत स्थान पर ले जाकर रखते हैं, जो भक्तों और अधिकारियों में बाँटा जाता है।

होम

इस निवेदन के अनन्तर यागशाला में होम रखा जाता है।

बलि

आलय के देवता, द्वार-देवता, द्वार-पालक, अनपायिनों आदि देवताओं में नित्यतृप्त पूजाकांक्षी देवताओं की भी पूजा होती है और बलिकांक्षी देवताओं को आलय के चारों ओर उनके जो बलिपीठ हैं, उन पर मन्त्रपूर्वक बलि का समर्पण करते हैं। दिवान्क्तन्चर भूत यक्ष पिशाचियों के लिए भी ध्वजदण्ड के पृष्ठ-भाग में स्वर्ण-बलि पीठ के पार्श्व में मन्त्रपूर्वक बलि चढ़ाते हैं। इस समय अर्चक अन्य देवताओं की आराधना करते हैं। उन्हें प्रसाद निवेदन करने के बाद श्री भाष्यकारों की भी आराधना करके स्वामी का प्रसाद उन्हें समर्पित करते हैं।

'शात्तुमोरा' - घंटाराव

(इस देवालय की विशेषता 'शात्तुमोरा' है, जिसका साधारण अर्थ मंगलाशासन अथवा मंगल-आरति है।) श्री स्वामी के सान्निध्य को जिय्यर

स्वामी बृन्द, आचार्य पुरुष, एकांगी, श्री वैष्णव स्वामी आते हैं। 'तिरुप्पावै' के तीस पाशुरों के दिव्य-प्रबंध से शेष दो पाशुरों का मंगलाशासन करते हुए इस शात्तुमोरा में गाते हैं। कर्पूर-आरति के बाद गोष्ठि को तीर्थ और चंदन आदि का वितरण होगा। स्वामी के दर्शन करके श्री वैष्णव स्वामी-बृन्द सस्वरूप का भगवान से अनुसंधान करके दिव्य भावनाओं से बाहर आते हैं। श्री बालाजी के प्रातः समय की आराधना यही है।

सर्वदर्शन

विशेषाशेष लोक शरण्य श्री स्वामी के इस समय दर्शन 'सर्वदर्शन' नाम से प्रसिद्ध है। इस समय किसी विशेष के बिना स्वामी सब के लिए समदर्शी हो दर्शन देते हैं। समस्त भक्तों को दर्शन, तीर्थ-प्रसाद, शठारि दिलवाकर उनके सुख-दुःखों को उनकी प्रार्थना द्वारा करुणालू होकर सुनता है। पर देखने में अनभिज्ञ का अभिनय करते बैठे रहते हैं। स्वामी की और सर्वदर्शन की भी विशेषता यही है। [इस दर्शन में बहुत समय तक प्रतीक्षा कर सकनेवाले भक्त क्यू में बिना शुल्क के आते हैं। जो शीघ्र जाना चाहते हैं, उन्हें नियमित शुल्क चुकाकर जाना पडता है।]

शुद्धि

श्री स्वामी की माध्याह्निक आराधना के लिए सर्वदर्शन बंद करके आलय साफ करने की रीति को शुद्धि कहते हैं।

माध्याह्निक आराधना

अर्चक अपने नियत कर्मानुष्ठान करके स्वामी की माध्याह्निकाराधना करने संसिद्ध होकर स्वामी के सान्निध्य में आएँगे।

अर्चक श्री स्वामी के पुरोभाग में कूर्मासन पर बैठकर संकल्प करके आराधना प्रारम्भ करता है। माध्याह्निकाराधनोपयुक्त उपचार समर्पण करता है। अन्य देवताओं को भी इसीं प्रकार का उपचार करता है।

अष्टोत्तर शतनामार्चन

अर्चक श्री वेंकटेश्वर के अष्टोत्तर शतनामार्चन का संकल्प करेगा। वराह-पुराणान्तर्गत इन शतनामों का प्रारंभ 'ॐ वेंकटेशाय नमः' प्रथम नाम से करता है। मिराशीदार वाद्यारि उस नाम का अनुवाद मृदु मधुर कण्ठ से 'ॐ श्री शेषाद्रि निलयाय श्री वेंकटेशाय' कहते हुए अष्टोत्तर शतनामों का भी पठन इसी प्रकार दोनों से किया जाता है। अर्चक प्रत्येक नाम के अंत में तुलसी और पुष्प लेकर श्री स्वामी के पादाब्जों में श्रद्धा-भक्ति से समर्पित करता रहेगा। इस अर्चना में नामों का श्रवण करनेवालों का जन्म धन्य होता है। शतनामार्चन पूरा होते ही स्वामी को समर्पित उन पुष्पों को लेकर स्वामी के नित्य समाश्रित देवियों श्री भूदेवियों की पूजा लक्ष्मीनाथ 'ॐ श्रीं श्रियै नमः' का पठन सहित करेंगे। लक्ष्मीनाथ भी वराह-पुराणान्तर्गत हैं। मिराशीदार नामोच्चरण करता रहेगा; अर्चक प्रत्येक नाम के अंत में तुलसी और पुष्प देवियों के पादाब्जों पर समर्पित करता रहेगा। नामार्चन के पूरा होते ही नक्षत्र और कर्पूर आरति दी जाती है और जिय्यर तथा नाम पाठक की शठारि होती है।

दुपहर का - निवेदन (द्वितीय घंटा)

परिचारक स्वर्ण-द्वार पर खडे होकर पचनालय के कैंकर्यवानों को सुन पडने के लिए विचित्र शब्दनाद इस प्रकार करेगा कि 'श्री स्वामीजी का प्रसाद सिद्ध हो जाय'। तत्क्षण पचनालय से मध्याह्नकाल के प्रसाद जैसे शुद्धान्न, विशेष प्रसाद, प्रार्थना प्रसाद और उत्सव प्रसाद श्रद्धावान हो स्वामी के दृष्टि-प्रसार के स्थान पर रखते हैं। श्री स्वामी को प्रणाम कर अपने जन्म धन्य मानकर चले जाते हैं। तदुपरान्त अर्चक-स्वामी-बृन्द आलय के अंदर जाकर द्वार बंद करता है। अर्चक श्री स्वामी और अन्य देवताओं को भी प्रसादों का निवेदन करके भोज्यासन योग्य उपचार करता रहेगा। स्वर्ण-द्वार के दक्षिण भाग में जो दो महाघंटाएँ हैं, उन दोनों के बीच बैठकर आलय के द्वार बंद करते ही घंटानाद प्रारंभ होगा और निवेदन के अंत तक घंटाराव

प्रणव की तरंगों से परिव्याप्त होता रहेगा। इसके बाद अर्चक स्वामी को सुगन्ध युक्त ताम्बूल (मुखवास) समर्पण कर क्षमामन्त्र का पठन करेगा। अर्चक अपने लिए नियत प्रसाद को स्वीकार कर तदनन्तर द्वार खोलेगा। घंटारव भी शमित होगा। प्रसादों को निर्णीत स्थान पर कैंकर्यवान ले जाएँगे। श्री भाष्यकारों को भी निवेदन समर्पित किया जायेगा। इसके बाद श्री मलयप्प स्वामीजी जगन्माताएँ श्री-भूदेवियों सहित तिरुच्चि वाहन पर विराजमान होकर समस्त वैभव वाद्यों के साथ रंग-मंडप में पधारेंगे, जहाँ कल्याणोत्सव के उत्साही भक्त अपने अभीष्टों को स्वामी से प्रार्थना के रूप में निवेदित करते हैं। मलयप्प स्वामी देवियों सहित यहीं विराजमान होकर श्याम तक भक्तवत्सल अपनी संतान जैसे भक्तों से प्रार्थना रूप में किए जानेवाले कल्याणोत्सव, वसंतोत्सव, ब्रह्मोत्सव, वाहनोत्सव, आइने-महल (दर्पण महल) का उत्सव इन सब का अवलोकन करते हैं। भक्तों की प्रार्थना के अनुसार प्रार्थना रूप वाहन-सेवा के वाहन पर बैठकर तिरुवीथियों में विहार करके देवियों सहित श्री स्वामी के सान्निध्य में अपने-अपने स्थानों पर विराजमान होंगे। इस समय गर्भालय में श्री बालाजी की माध्याह्निकाराधना पूरा होते ही अधिकारी, दर्शनाभिलाषी स्वामी के दर्शन करेंगे। इसके उपरान्त सर्वदर्शन प्रारंभ होता है।

सर्वदर्शन

श्री बालाजी मध्याह्न से साँझ तक सर्वदर्शन नाम से जो जो भक्त जन आते हैं, उनको शुभ दर्शन देते हैं। भक्ति और मनौती के रूप में जो भेंट चढ़ाए जाते हैं, सब को समदृष्टि से स्वीकार करते हैं। इस समय स्वामी ऐसा दीख पडते हैं, मानों अपने प्रिय भक्तों की प्रार्थना के अनुसार उनका अभीष्ट पूरा करने के विचार में हों।

प्रतिदिन सबेरे से साँझ तक श्री स्वामी को पूर्वदिन में समर्पित सब प्रकार की भेंटों का वर्गीकरण मंदिर के अधिकार-गण और परिचारक बृन्द

आस्थान मण्डप के कुबेर-भाग में करते हैं। सब की गणना लिखित रूप में करके बडी पेटियों में रख मुहुर लगाते हैं। इसी कार्य का नाम 'परकामणि' है। (कुछ दिनों से पराकामणि का स्थान मण्डप में भक्तों की बढ़ती संख्या के कारण बदल दिया गया है। – अनुवादिका)

शुद्धि

श्रीस्वामी की शाम की आराधना के लिए सर्वदर्शन बंद करके आलय को साफ करते हैं, जिसे शुद्धि कहते हैं।

साँझ की आराधना

श्री स्वामी की आराधना के लिए अर्चक अपने नियत कर्मानुष्ठान करके आलय में आता है। श्री जिय्यंगार-बृन्द पुष्प-संग्रह स्थान यामुनात्तुरै जाकर नानाविध सुगन्धित पुष्पों एवं मालाओं तुलसी दलों से भरे वेणु-पात्र (वेणु से बनी बडी टोकरियाँ) श्रद्धावान हो, अपने सिर पर रखे हाथ से घंटानाद करते स्वामी के सान्निध्य में रखेंगे। अर्चक पुष्प-संचय की शुद्धि करके पूजा प्रारम्भ करेगा। शाम के उपयुक्त उपचार समर्पित करेगा। श्री जिय्यंगार और वैष्णव स्वामी दिव्य प्रबंध के पाशुरों का पठन करेंगे। उपचारों के पूरा होते ही तोमाल-सेवा प्रारम्भ होगी।

तोमाल सेवा

अर्चक श्री स्वामी को पुष्प-मालाएँ समर्पित करता रहेगा। श्री वैष्णव स्वामी दिव्य प्रबंध का गान करते रहेंगे। मन्त्र-पुष्प के पठन के बाद नक्षत्र और कपूर आरति होगी। तोमाल सेवा पूरी होती है।

अष्टोत्तरशतनामार्चन

प्रातःकालीन आराधना की भाँति इस समय भी अष्टोत्तर नामार्चन तथा श्री भूदेवियों का लक्ष्मी-नामार्चन। अर्चना के बाद जिय्यंगार-बृन्द वैष्णव स्वामियों तथा नाम-पाठकों की शठारि होगी। निवेदन के लिए लघु-शुद्धि होगी।

निवेदन (घंटाकाल)

प्रातःकालीन आराधना की भाँति इस समय भी परिचारक की पुकार सुनते ही पाकशाला से 'प्रसाद' मधुर भक्ष्य, दोसै लाकर श्री बालाजी के अर्चक आलय में जाकर कवाट बंद करेगा। प्रतिदिन की भाँति अर्चक श्री स्वामी की कटाक्ष के सामने रखे भक्ष्यों को समर्पित करेगा। इस समय घंटानाद (बृहत् घंटा) चलता रहेगा। समर्पण के पूरे होते ही कवाट खोल देगा और घंटाराव भी बंद होगा। स्वामी को समर्पित मधुर भक्ष्य आदि 'प्रसादों' को निर्णीत स्थान पर रखेंगे। उस 'प्रसादम' से चौथा भाग पुनः स्वामी के समर्पण के लिए लाते हैं। कवाट बंद करते हैं। इस निवेदन के समय छोटी-घंटा बजायी जाती है। निवेदन के बाद कवाट खोला जायेगा और कैंकर्यवान उस प्रसाद के पात्र ले जायेगा। एकान्त में 'शात्तुमोरा' होगी। इसके अनन्तर सर्वदर्शन प्रारम्भ होगा।

सर्वदर्शन

करुणान्तरंग श्रीनिवास के प्रातः कालीन तथा माध्याह्निक दर्शन जो भक्त नहीं कर सके हैं, उनके लिए वात्सल्य से पुनः शाम को भी दर्शन देने के लिए सम्मत हुए हैं। भक्तजन स्वामी के दर्शन करके विमान परिक्रम (आलय परिक्रम) करते जायेंगे। इसी परिक्रमा में श्री स्वामीजी की 'हुन्डी' में अपनी भेंट चढ़ाते हैं। इससे भक्तजन आनन्द पाते हैं। जब 'शयनासन' का समय होगा, तब सर्वदर्शन बंद किया जाता है। स्थान-शुद्धि की जायेगी और उस स्थान को रंगवल्लियों से अलंकृत करेंगे। एकान्त-सेवा का प्रारम्भ होगा।

एकान्त-सेवा (शयनासन)

इस सेवा के पूर्व-रंग के रूप में परिचारक गर्भालय के पुरोभाग के आलय में चाँदिनी के जंजीरों से बनाए स्वर्ण पलंग और उस पर बिछाने के

लिए रेशमी बिस्तर, रेश्मी सिरहाने और रेश्मी दुपट्टे बिछाकर कर तैयार रखते हैं। नाना प्रकार के फल, दूध, शर्करा, बादामी, काजू आदि के साथ इलाची, पूगीफल, कपित्थ, तक्कोल आदि से बने चूर्णयुक्त ताम्बूल स्वामी के सान्निध्य में रखते हैं। तदुपरान्त अर्चक द्वार बंद करके श्री स्वामी को शयनासन के सब उपचार करते हैं। कपूर-आरति देने के बाद श्री स्वामी के पाद-द्वय को अनुसंधान करके अर्चक क्षमा-मन्त्र का पठन करता है। अपनी रक्षा भार प्रभु पर रखते हुए प्रार्थना करता है। इस सेवा से अपने को धन्य मानकर श्री भोग श्रीनिवास को पहले ही सज्जित स्वर्ण शयन के रेश्मी बिस्तरों पर लिटाते हैं। कवाट खोले जाते हैं। इसी समय ताल्लपाक अन्नमाचार्य के वंशजों को विरासत में प्राप्त रीति के अनुसार तम्बूर-नाद से अन्नमाचार्य के गीत मन्द्र-स्वर में मृदु मधुर कण्ठ से गए जाते हैं। ये गीत स्वामी के झूले के गीत माने जाते हैं। एकान्त-सेवा अर्जित है। इस दर्शन द्वारा भक्तजन श्री बालाजी का शयन-वैभव देखकर आनंद से उल्लसित होते हैं। शयनासन की आरति दी जायेगी। उपस्थित भक्तों में तीर्थ-प्रसाद का वितरण होगा। क्रमशः भक्त-जन चले जाते हैं। अर्चक रात के समय ब्रह्मादि देवताओं द्वारा श्रीस्वामी की पूजा करने के लिए उचित फल तीर्थ आदि का प्रबन्ध करता है। एक बार स्वामी की सन्निधि में सब सुविधाओं को देखकर अर्चक अपने मनोरथ का भी निवेदन करके स्वामी की अनुमति लेकर गर्भालय से बाहर निकलता है। वह तृतीय कवाटों पर ताला लगाकर स्र्वण-द्वार के पास आता है। इस द्वार का भी मन्त्रपूर्वक चाबी से अन्तर्बन्ध करता है। इसके उपरान्त आलय के अधिकारी अपनी ओर से कवाटों पर अपनी तालाएँ लगाकर मुहर डालते हैं। सबके सब भगवान का ध्यान करते हुए विमान की वंदना भी करके महाद्वार के पास आते हैं। वहाँ सरकारी पुलिस को नियत स्थान पर नियमित करके सब अपने को कृतार्थ मानकर स्वस्थान चले जायेंगे।

बृहस्पति-वार की विशेषता

पूलंगि-सेवा (= फूलों से सुसज्जित सेवा)

विभूति-द्व नायक लीला-विभूति से चेतन जीवों का उद्धार करने के लिए कुछ काल तक निवास करने के लिए तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में श्री वेंकटेश्वर स्वामी विराजमान हैं। इस मूर्ति की प्रति गुरुवार प्रत्येक पूजा विशेष रूप से होती है। इस नित्य कैंकर्य में विशेष पूजा (पूलंगि-सेवा) होती है। इसे भक्त-परायण अन्नकूटोत्सव (तिरुप्पावडा) अर्जित रूप से कराते हैं।

बृहस्पति-वार श्रीस्वामी की प्रातः कालीन आराधना के उपरांत अन्तर्द्वार के कवाट बंद करके स्वामी के अलंकृत स्वर्णाभरण रत्नाभरण, स्वर्ण-हार, पीताम्बर सब निकाल कर भद्रता से भण्डार गृह में रखते हैं। सबसे विशेषता यह है कि श्री बालाजी के जो कपूर के ऊर्ध्वपुण्ड्र हैं, उनमें आधा भाग घटाकर संवार करते हैं, जिससे भक्त-जन उस दिन के दर्शन में स्वामी के नयनारविंदों के दर्शन कर सके। इसी को 'नेत्र-दर्शन' कहते हैं। इस दिन स्वामी को २४ हाथों के नाप का जरी-किनारे युक्त धोती को पहनाएँगे। फिर १२ हाथों के नाप का वैसा ही जरीदार धोती को उपवीत के जैसे मोढ़कर पहनवाते हैं। स्वर्ण-पादों स्वर्ण-कटि और वरद हस्त को, कर्णाभूषणों को शंख-चक्रों को तथा स्वर्ण-सालग्राम हार को धरवाते हैं। तत्क्षण अन्तर्द्वार खोले जायेंगे। इस दर्शन में श्री स्वामी जीवों को शुभदायक शंख-चक्र से वैकुण्ठ कटि-हस्तों से सहज वस्त्र एवं उपवीत जैसे अलंकृत वस्त्र से मनोहर रम्य-रूप में वक्षस्थल पर श्री भूदेवियों सहित दिव्य दर्शन देते हैं। (कहा जाता है कि इस दर्शन में भक्त अपने त्रिकरणों से स्वार्थ रहित हो जो चाहता, बालाजी से जो प्रार्थना करता, वह अवश्य सफल करेगा। – अनुवादक।)

शुद्धि (मांजन)

देवालय की शुद्धि के बाद श्रीबालाजी की माध्याह्निकाराधना प्रारम्भ होगी।

माध्याह्निकाराधन

तोमाल-सेवा के पूरा होते ही प्रसाद-निवेदन का समय होगा।

माध्याह्निक प्रसाद निवेदन

श्री स्वामी का (तिरुप्पावडा) अन्नकूटोत्सव होते समय आस्थान मण्डप में आवरण-यवनिका का प्रबंध होगा।

तिरुप्पावडा (अन्नकूटोत्सव)

यह सेवा अर्जित है। पाचक-कैंकर्यवान् चार सौ पचास किलो (४५० किलो) चावल (छे बोरियाँ) से जो अन्न-प्रसाद (चित्रान्न) तैयार किया गया है, उसे श्री प्रभु के दृष्टि-प्रसार के स्थान पर ला रखेंगे। इस प्रसाद को बृहत् पात्रों में लाते हैं। इस अन्न-कूट को शिखर रूप में बनाएँगे। सब (आठों) दिशाओं के समीप अर्ध-नारिकेल-भाग और पुष्प भी रखते हैं। कूटोत्सव का यह अलंकार बडा नेत्रपर्व करता है। तदुपरान्त स्वामीजी को लड्डू, जिलेबी, दोसे, अप्पं, खीर प्रसाद के रूप में निवेदित करते हैं। इन सब को स्वामी के दृष्टि-गोचर के स्थान पर रखते हैं। अब बृहत् घंटानाद सुन पडता है। अर्चक स्वामीजी को सकल पकवान् निवेदन करेगा। अन्न राशि का भी निवेदन होने पर अन्त्योपचार करते हैं। तदनन्तर भाष्यकारों को निवेदन समर्पित किया जायेगा।

इसके बाद आवरण की यवनिका को हटा देते हैं। इस तिरुप्पावडा अर्जित होने के कारण इसके भक्तों का आह्वान करके उन्हें 'दत्त' करते हैं। श्री बालाजी की कपूर आरति होगी। अर्चक अपने नियत भाग प्रसाद ले लेगा। वैष्णव गोष्ठि को स्थान पुरस्कार के रूप में प्रसाद दिया जायगा। तदुपरान्त इस अर्जित सेवा के भक्तों और उसके बन्धुजनों को श्री स्वामी के दर्शन होंगे। उन्हें वस्त्र भी पुरस्कार के रूप में दिए जायेंगे। वे अपने स्वस्थान में चले जायेंगे। सर्वदर्शन प्रारम्भ होगा।

सर्वदर्शन

इस सर्वदर्शन में श्रीस्वामी अपने भक्त-जनों को अपने कटाक्ष वीक्षण से कृतार्थ करते हैं। भक्त-जन भी इस समय दिव्य नेत्र-दर्शन से लब्ध अमन्दानन्द कन्दलित हृदयों से श्रीबालाजी के स्वयं व्यक्त रम्य रूप को बारंबार देखते-देखते वापस लौटते हैं।

शुद्धि

इस बाद सर्वदर्शन को बंद करके आलय साफ किया जायेगा। इसीको शुद्धि कहते हैं।

सायंकालिक आराधना

अर्चक अपने कर्मानुष्ठान से निवृत्त होकर आचार से देवालय में प्रवेश करेगा। श्री स्वामी के सान्निध्य में रहेगा।

श्री जिय्यंगार-बृन्द और एकांगी यामुनत्तुरै नामक पुष्प-संग्रह के स्थान पर जायेंगे। वहाँ पुष्प कैंकर्यवानों से जो पुष्प-मालाएँ तैयार की गयी होती हैं, उनसे तथा नाना-पुष्पों से भरे हुए वेणु-पात्रों (टोकरियाँ) को अपने सिरों पर रखे जाझंटा (हाथ से घंटा) बजाते हुए मंगलवाद्यों के साथ ध्वज की परिक्रमा के रूप में स्वर्ण-द्वार से होकर आते हैं। स्वर्ण-द्वार पर वाद्यकार रह जाते हैं। पुष्पों को श्रीस्वामी के सामने रखते हैं।

इतने में अर्चक गर्भालय में श्रीस्वामी के तन और किरीट पर गात्र-संवरण नामक वस्त्र पहनवाता है। इस वस्त्र को 'कपायिमि' कहते हैं। सायंकालीन आराधना प्रारम्भ होगी। जिय्यर रेशमी चामर डुलाता रहता है। दिव्य प्रबंध का गान भी करता है। अर्चक श्रीस्वामी का अलंकारासन पूरा करके तोमाल सेवा प्रारम्भ करता है। जिय्यंगार बृन्द श्री वैष्णव स्वामी, आचार्य पुरुष, सब आलय के तृतीय अन्तरद्वार के पुरोभाग में कतारों में पद्मासनों पर बैठकर दिव्य-प्रबंध के नित्यानुसंधान एक सौ चालीस पाशुरों

का मधुर गान करते हैं। स्वर्णद्वार के पुरोभाग के आस्थान मण्डप में जो गरुडाल्वार की मूर्ति है, वहाँ उसकी सन्निधि में मंगल-वादन चलेगा। स्वर्ण-द्वार पर जो साधारण परदा डाली गयी थी, उसके स्थान पर 'पूलंगि परदा' को लगाते हैं, जो 'वेल्वेट' से बना हुआ है और जिसके मध्यभाग में श्री बालाजी की मूर्ति का बहु रम्य चित्र शोभित है।

पूलंगि-सेवा (तोमाल सेवा)

अर्चक बृन्द अन्तर्द्वार का कवाट बंद करके एकान्त में स्वामी का पुष्पालंकारण करेंगे। पुष्प-मालाओं को श्री स्वामी के तन पर वस्त्र के रूप में, भुज-वस्त्र (उत्तरीय) के रूप में, आभरणों के रूप में, शंख-चक्रों के रूप में अलंकृत करते हैं। दुष्ट-शिक्षण दक्ष सूर्यकटारि नामक खड्ग को स्वामी के वाम-हस्त में रखकर उसे भी पुष्पमालाओं से सुसज्जित करते हैं।

इस अलंकार में श्रीस्वामी के समस्त अंगों पर पुष्पमालाएँ और नाना-वर्ण-पुष्प शोभित होते हैं। इस दिव्य दृश्य में भव्य सौंदर्य से स्वामी पुष्पास्त्र मन्मथ से सहस्रों गुन अधिक सम्मोहन रूप में भक्तों को दर्शन देते हैं। इस सुशोभित दर्शन को 'पूलंगि सेवा' कहते हैं।

इस प्रकार पुष्पों को समर्पित करने के बाद अन्तर्द्वार खोलकर कपूर आरति देंगे। प्रबन्ध पारायण करनेवाले भी श्री स्वामी की सन्निधि में जायेंगे। पारायण पूरा होते ही मन्त्रपुष्प के पठन के बाद आरति दी जायेगी।

अर्चना

प्रति नित्य की भाँति इस समय श्री स्वामी और उभय देवियों की अर्चना और आरति होगी।

निवेदन

अर्चना के अनन्तर 'चित्रान्न' (इमली काली मिर्च से बनाया विशेष अन्न), पोंगल (मूंगी-दाल का अन्न), दोसे, मधुर पकवान ही नहीं, वर्न

शैत्योपचार के लिए 'वडपप्पु' (भीगा हुआ मूंग-दाल), 'पानकम्' (गुड का शरबत) निवेदित किये जायेंगे। मधुरान्न का निवेदन एकान्त में होगा, जिसे तिरवैसादम कहते हैं और मंगलाशसन होगा। इसी को 'शात्तुमोरा' कहते हैं। (तिरुवैसादम = अतिमधुर भक्ष्य, जिसका निवेदन एकान्त में होता है।)

पूलंगि-दर्शन

आलय के सब अधिकारी-गण 'पूलंगि' धरे हुए श्री स्वामी के दर्शन करेंगे और क्षमाप्रार्थी हो चले जाते हैं।

पूलंगि-दर्शन कुछ सालों पिछले अर्जित-सेवा के अन्तर्गत था। वर्तमान में वह सर्वदर्शन के रूप में होता है। इस दर्शन में भक्त-जन श्रीस्वामी के विशेष कटाक्ष के पात्र होकर तीर्थ स्वीकार करके अपने को धन्य मानता है।

इस प्रकार बृहस्पतिवार में पूलंगी धरे हुए स्वामी के सम्मोहन रूप से आनंदविभोर हो जाते हैं तथा पुनः पुनः उस दिव्य रूप-स्मरण से कृतार्थ हो जाते हैं।

शुद्धि

इस पूलंगि-सेवा के अनन्तर देवालय की शुद्धि होगी।

एकान्त सेवा

प्रति नित्य की भाँति एकान्त-सेवा चलेगी। भक्त-जन और आलय के सब अर्चक आदि भी इस सेवा के बाद अपने गृह चले जायेंगे। बृहस्पति वार की विशेषता यही है।

शुक्रवार का अभिषेक

समस्त चराचर का जगन्नियन्ता वेंकटाद्रि नाम से विख्यात तिरुमल गिरि पर, लक्ष्मी सहित भुजान्तर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर के

वक्षस्थल पर नित्य वासिनी माता श्रीलक्ष्मीजी का प्रति-शुक्रवार अभिषेक होता है।

शुक्रवार की सुबह श्री स्वामी बृहस्पतिवार की पूलंगि सेवा के रूप में ही दर्शन देंगे। इसीको विश्वरूप-दर्शन कहते हैं।

इस दर्शन के उपरान्त अर्चक अन्तर्द्वार बन्द करके एकान्त में श्रीस्वामी के पुष्पालंकारों के निकालने के बाद द्वार खोल देते हैं।

शुद्धि

आलय को साफ करके प्रातःकालीन आराधना का प्रारम्भ होगा।

प्रात:काल की आराधना

नित्य की भाँति तोमाल-सेवा, सरकारी-सेवा (कोलुवु), अर्चना, प्रसाद का निवेदन और शात्तुमोरा एकान्त में ही किए जाते हैं।

अभिषेक के पूर्वांग

प्रातः कालीन आराधना के उपरान्त अर्चक यवनिका डालता है। एकान्त में श्री स्वामीजी के शुक्रवार के अभिषेक का संकल्प करते हैं। उचित उपचारों का समर्पण करने के बाद अष्टोत्तर शतनामार्चन का पठन होगा। अभिषेक के पूर्वांग के रूप में श्री बालाजी के ऊर्ध्वपुण्ड्र में से आधा भाग कम करेंगे। वस्त्र और उत्तरीय के स्थान पर स्नान के समय 'शाटी' को अथवा स्नान-कौपीन पहनवाते हैं।

इस समय परिचारक पहले ही श्रीस्वामी के सान्निध्य में दो बृहत् गागरों में (गंगालों में) गोक्षीर और दो बृहत पात्रों में श्री स्वामी के कनक-वापी (बंगारु बावि) से शुद्धोदक ला रखेंगे।

इस समय महाद्वार के दोनों पार्श्वों में विविध अलंकारों से दो मत्त-गज ऊर्ध्वपुण्ड्रों से अभिषेक का दर्शनानन्द से आनंद विभोर होकर घींकार करते हैं। वे ऐसा लगते हैं कि मानों विष्णु-भक्त गजराज गज-पालक स्वामी के

शासन का पालन करते हों। महाराज के उचित चिह्न गजराज यात्री-भक्तों का भी सत्कार पाते हैं। इस प्रकार दोनों भक्त गजराज अभिषेक के अंत तक महाद्वार के पास खडे रहते हैं।

अभिषेक का समयानुवर्ती जिय्यंगार, एकांगी, परिचारक, आचार्य और वैष्णव स्वामी आलय के प्रथम-प्राकार में सुगन्धों का जो छोटा कमरे (अरा) है, वहाँ जाकर श्री स्वामी के ऊर्ध्वपुण्ड्र के लिए जो कर्पूर मिश्रित कस्तूरि का रजत-पात्र है, उसे जिय्यंगार श्रद्धावान हो लेता है; अधिकारी-गण केसर मिश्रित चंदन से भरे रजत-पात्र को और परिचारक 'परिमलं' नाम से व्यवहृत चंदन, कपूर व केसर मिश्रित सुगन्ध भरे रजत-पात्र को श्रद्धालु हो अपने हाथ में लेते हैं। कोई भक्त जाफ्रा-पात्र को, कोई कस्तूरि के पात्र को अपनी सेवा के अनुरूप लेता है। ये सब मंगल वादनों के और श्वेत-छत्रादि मर्यादाओं के साथ वहाँ से निकलते हैं। ध्वजदण्ड की परिक्रमा और विमान की परिक्रमा करते हुए स्वर्ण-द्वार के पास आते हैं। वहाँ से अधिकारीगण, जिय्यंगार, एकांगी, परिचारक और अभिषेक-सेवा परायण भक्त आलय के अंदर जाते हैं तथा उन पात्रों को स्वामी के सान्निध्य में समर्पित करते हैं। यवनिका हटायी जाती है।

अभिषेक - महोत्सव

श्रीलक्ष्मी समाश्लिष्ट भुजान्तर श्री स्वामीजी का अभिषेक महोत्सव प्रारम्भ होगा। अर्चक श्रीस्वामी और माताजी के पादों को प्रणाम करके अभिषेक-उचितासन पर वाक् का संयमी हो खडे होता है। जिय्यंगार आकाश गंगा जल से भरे स्वर्ण-शंख अर्चक को देता है। अर्चक उसे लेकर 'हरिः ॐ' सहस्रशीर्षा पुरुष, जो चतुर्वेद श्रूयमाण पुरुषसूक्त है, उसका पठन श्रद्धा-भक्ति से करते श्रीदेवी से शोभित श्रीश्रीनिवास के परतत्त्व रूपी शिरोभूषण किरीट पर अभिषेक करता है। आचार्य श्री वैष्णव और वेदपाठक उसी अर्चक से पठित नाम का अनुवादन करते हैं। पांच सूत्रों और पंचोपनिषदों का

यह पठन-पाठन मुक्त-कण्ठ से मधुर-स्वर से अभिषेक की समाप्ति तक चलता रहेगा।

श्री स्वामी के पुरोभाग में आलय के अधिकारी-गण तथा इस अभिषेक दर्शन के सेवाकाँक्षी भक्त-जन स्वामी को प्रणाम करते बैठते हैं। श्री बालाजी के विकसित पद्म सदृश नेत्र-द्वय के दिव्य सौंदर्य को स्मित-पूर्ण दिव्य मुखारविंद को गण्डस्थल सौंदर्य, को आद्यन्त सुकुमार गुण-गुम्भित स्वयं व्यक्त स्वरूप को, जिसका नित्य स्तोत्र रुद्र, इन्द्रादि देवताओं से किया जाता है, ब्रह्मत्त्व को प्रदान कर सकनेवाले कटाक्ष-वीक्षण को तथा संसार रूपी सागर समुत्तरणैक सेतु प्रपन्नों के शरण-वरणीय श्री पादारविन्दों को तन्मय हो देखते रहते हैं। इस अभिषेक-दर्शन से भक्त स्वामी के दिव्य समक्ष अपनत्व खो लेता है, जो मोक्ष का सही मार्ग है।

क्षीराभिषेक

स्वर्ण-शंखाभिषेक के उपरान्त क्षीराभिषेक प्रारम्भ होगा। अर्चक श्री जिय्यंगार से दिए जानेवाले क्षीर भरे पात्र को और क्षीर-भरे शंख को लेकर श्री स्वामी को एकाग्र दृष्टि से देखते हुए अभिषेक करता रहेगा। वेदवेत्ता वेदों का पारायण करते रहते हैं। भक्त-जन श्री स्वामी के अभिषेक महोत्सव के दर्शन से तन्मय हो जाते हैं। उनका आनंद अवर्णनीय है। इस प्रकार दो बृहत गागरों के गोक्षीर से अभिषेक होने के बाद श्रीस्वामी के वैकुण्ठ हस्त से जो क्षीर गिरता है, उसे पात्र में लेकर अर्चक सब में वितरण करता है।

शुद्धोदकाभिषेक

श्री स्वामीजी का जब शुद्धोदकाभिषेक होता है, तब परिचारक कनक-वापी (बंगारू-बावि) से शुद्धोदक को कलशों से लाकर बडे (गागरों) पात्रों में भरते रहते हैं। कुछ समय के बाद अभिषेक पूरा हो जाता है। तत्क्षण अर्चक जाफ्रा और चंदन के गोलों को श्रीस्वामी के हाथ में रख देते हैं। उन्हें लेकर स्वामी के हाथों पर रेखांकित करते हैं। जो बचा चंदन आदि को अर्चक जिय्यंगारु तथा अधिकारीगण अपने नियत भाग ले लेते हैं।

उद्वर्तन (=मूर्ति पर सुगन्धित द्रव्य लगाना)

अर्चक सुगन्ध परिमल द्रव्यों को स्वामी के पादों से किरीट तक लगाते हैं। इस कार्य को नलुगु कहते हैं। सुगन्धों के लगाने के बाद शुद्धोदकाभिषेक प्रारम्भ होगा। इस अभिषेक में श्री स्वामी के आयुधों एवं अंगांगों से सुगन्ध के साथ जो पवित्र जल अधोभाग में प्रवाहित होता है, उसे अति पवित्र मानकर प्रत्येक रजत पात्रों में लेते हैं। इस प्रकार संग्रहीत परिमल दिव्य-जल को अर्चक जिय्यंगार तथा वहाँ के अधिकारी-गण अपने नियत भाग के रूप में लेते हैं। इस अभिषेक की यह मुख्य विशेषता है।

अभिषेक के अनन्तर श्री बालाजी के वैकुण्ठ हस्त से जो दिव्यजल अधोभाग में क्रमशः गिरता है, उसे पात्रों में संग्रहीत करके तदुपरान्त की पूजा करनेवाले अर्चक भी अपने अपने नियत भाग लेते हैं। पाप-विमोचक इस तीर्थ का वितरण भक्तों में भी करते हैं।

श्रीलक्ष्मी का हरिद्राभिषेक

श्री स्वामी का पुनः शुद्धोदकाभिषेक होता है। इस समय श्री वेंकटेश्वर के वक्ष-स्थल में स्थित अनपायिनी अम्मा श्री लक्ष्मी देवी का हरिद्राभिषेक हरिद्रा-पात्र से हरिद्र-मिश्रित जल से अभिषेक करते हैं।

इस समय इस दर्शन के आकाँक्षी भक्त इस अर्जित सेवा में भाग लेकर स्वामी के वक्ष-स्थल में स्थित श्रीलक्ष्मी देवी के दिव्य दर्शन करके परमानंद पाते हैं। इस शुक्रवाराभिषेक की और एक विशेषता भी है। श्री बालाजी की अर्चामूर्ति के विषय में जो संदेह कतिपय विद्वानों में व्याप्त हैं, वे इस दर्शन से दूर हो जाते हैं। कोई समझता है कि नागाभरणों से युक्त स्वामी रुद्रावतार का होगा; किसी का मत है कि शुक्रवाराभिषेक से शक्त्यावतार है; पद्म-वेदी पर आसीन होने से ब्रह्मावतार होगा; अथवा कुमार स्वामी का अवतार होगा। इस प्रकार के संदेह अभिषेक के समय की मूर्ति को प्रत्यक्ष देखने से उनके मन संदेह रहित होते हैं और वे विष्णु-भक्त हो जाते हैं।
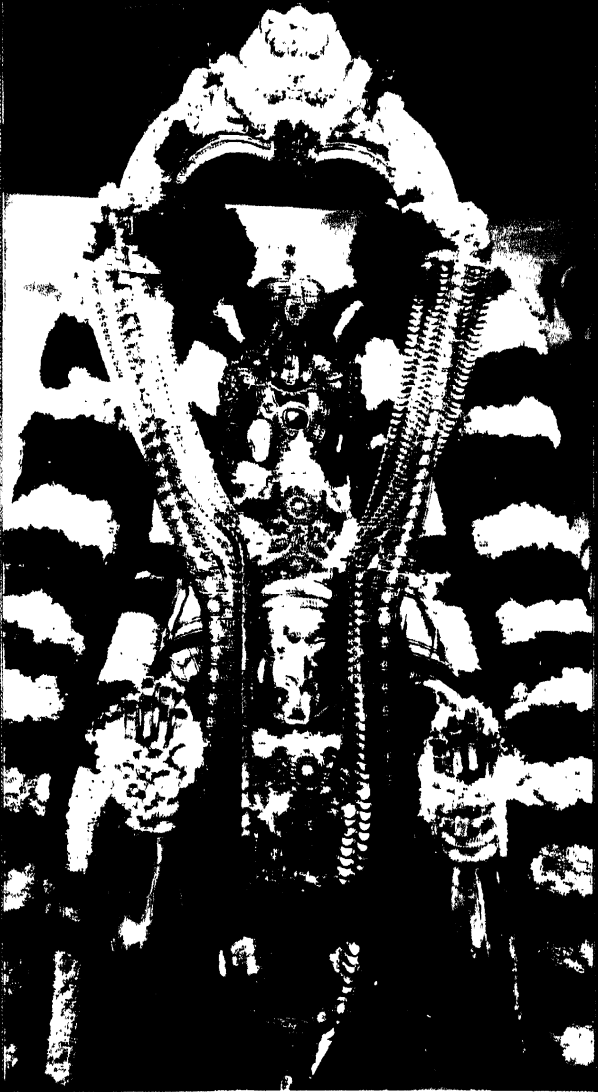
श्री वेंकटेश्वर स्वामी की गरुड-सेवा

वाहनाय महाविष्णोः
पक्षीन्द्राय बलात्मने ।
गरुडाय नमस्तुभ्यं
सर्वसंपत् समृद्धये ।।

इस अभिषेक का महान् उद्देश्य यह भी है कि बृहस्पति वार की पूलंगि-सेवा परायण भक्तों के हृदयों में श्री वेंकटेश्वर स्वामी अपने सदा सम्मोहित जगन्मोहित स्वरूप से भक्ति के बीज बोते हैं। इस प्रकार भक्तों के हृदय-रूपी भूमि में भक्ति के जो बीज पूर्व दिन बोते हैं, उन्हें शुक्रवार के श्रीलक्ष्मी सहित स्वयं व्यक्त दिव्य अर्चारूप के निज दर्शन से उन बीजों को अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित होने के लिए करुणासागर अपने दया-रस वृष्टि उन पर करते हैं। ऐसा महान्, शुभ एवं मोक्षगामी दर्शन प्राप्त करना चेतन जीवियों का अहोभाग्य समझना चाहिए।

शुद्धोदकाभिषेक

श्री स्वामीजी का पुनः शुद्धोदकाभिषेक होता है। अष्टोत्तर शत कलशों से आकाश-गंगा तीर्थ से लाए हुए पवित्र-जल स्वर्ण शंखों में भरकर अभिषेक करते हैं। इस अभिषेक-तीर्थ को पात्रो में संग्रहीत करते हैं। इस पवित्र-जल का प्रोक्षण अर्चक अपने जन्मों से अर्जित महाभाग्य से अपने सिर पर करता है। श्री स्वामी के सान्निध्य में जो जो जिय्यंगार-बृन्द, एकांगी, आचार्य पुरुष, अधिकारी-गण – इन सब के सिरों पर अर्चक यह कहते हुए प्रोक्षण करता है 'पूतोभव'। (पवित्र हो जाओ)

इसके उपरान्त यवनिका डाली जाती है। अर्चक स्नान वेदी से उतरता है। चतुर्वेद-पारायण भी समाप्त होगा। जिय्यंगार बृन्द, आचार्य-पुरुष, अध्यापक तथा वैष्णव स्वामी-बृन्द द्रविड-वेद 'नीराट्टं' (पदयों) से दस पाशुरों का गान करते हैं।

प्लोत विमार्जन

श्रीस्वामी के स्नान-वस्त्रों को अर्चक हटाकर प्लोत-वस्त्र (सूखा-वस्त्र) से स्वामी के तन को पोंछते हैं। श्री स्वामी के किरीट को सूखे वस्त्र से सुंदर रूप से अलंकृत करते हैं। जिय्यंगार रेश्मी वीवन (आलवट्टं) डुलाता रहेगा। अर्चक चतुर्विंशति हाथों के नाप की जरी-किनारेदार धोती तथा द्वादश हाथों नाप का 'उत्तरीय (भुज-वस्त्र) पहनवाते हैं। कपूर और कस्तूरी

से श्रीस्वामी के मुख-मण्डल को दीप्त करनेवाले ऊर्ध्वपुण्ड्र को यथा-प्रमाण में रम्य रीति से सजाते हैं।

दिव्य प्रबंध का पाठन रुक जाता है। श्री स्वामी को नवनीत, शक्कर निवेदन करते हैं। ताम्बूल समर्पण के उपरान्त स्वर्ण-नीराजन पात्र से आरति दी जाती है। इसके अनन्तर कपूर की आरति देते समय यवनिका हटाते हैं।

इस समय अभिषेक-दर्शन परायण भक्तों में मनोहर संचलन उत्पन्न होता है। वे आर्ति, प्रतीक्षा, औत्सुक्य मिश्रित भावना से स्वामी के दिव्य सौंदर्य से अपहृत-चित्तवान हो अनिमेष नेत्रों से दर्शन-भाग्य प्राप्त करते हैं; वापस जाते समय बारंबार पीछे अपने गर्दन उठा-उठाकर देखते जाते हैं। अभिषेक के पूरा होते ही देवालय के अधिकारी-गण, जिय्यंगार मंदिर के पुरोभोग में जायेंगे।

अर्चक वहाँ आकर अधिकारियों, अभिषेक-सेवा के कैंकर्यवानों और दर्शन के भक्तों सब के सिरों पर श्रीस्वामी के अभिषेक-जल का प्रोक्षण करते हुए उन्हें पुनीत करते हैं। अभिषेक -दर्शन जो अर्जित-सेवा है, इस प्रकार समाप्त होता है।

अलंकारों का समर्पण

अर्चक श्री स्वामी के ऊर्ध्वपुण्ड्र के लिए श्रीजिय्यंगार से दिए हुए स्वर्णपात्र को अपने हाथ में लेते हैं। प्रबंध का पठन करके उस शेष परिमल को अपने नियमित भागों को लेकर अन्तर् द्वार के पुरोभाग में जायेंगे। अर्चक अन्तर् द्वार-बंद करके एकान्त में श्रीस्वामी को ऊर्ध्वपुण्ड्र वस्त्राभरण इत्यादि अलंकार समर्पण करेंगे। इस समय जिय्यंगार-बृन्द, अध्यापक, आचार्य-पुरुष अन्तर् द्वार के पुरोभाग में पंक्तियों में पद्मासनस्थ होकर 'नाच्चियार तिरुमोळि' से (१५०) पाशुरों का गान करेंगे। तदुपरान्त अर्चक श्रीस्वामी के फाल-भाग पर यथा रीति से ऊर्ध्वपुण्ड्र और उसके मध्य कस्तूरि-तिलक पुण्ड्र अति रम्यता से सजाते हैं। दिव्य-प्रबंध का गान बंद किया जाता है।

श्री स्वामी को शंख-चक्र और ऊर्ध्वपुण्ड्रों से चित्रित सुनहले किनारेदार चौबीस हाथों नाप की रेश्मी धोती तथा द्वादश हाथों की लम्बाई दो हाथों की चौड़ायी का उत्तरीय (भुज-वस्त्र) पहनवाते हैं। हृदय-स्थान पर गात्र-संवरण-वस्त्र, जिसे 'कपायिनी' कहते हैं और उसके साथ ही कठारि-वस्त्र से भी सजाते हैं। इस कठारि-वस्त्र से श्री स्वामी का सूर्यकठारि नामक खड्ग बहुल प्रकाशित हो, भक्तों को दर्शन देता है।

श्री स्वामी का आभरणों से अलंकरण

१. **स्वर्ण-पद्म-वेदिका** – श्री स्वामी के पादों के अधोभाग में सजाया जाता है।

२. **सुवर्ण – पाद-द्वय** – श्रीस्वामी के पादों को पहनवाया जाता है।

३. **लघुघंटिकाओं के नूपुर** – श्रीस्वामी के पाद-युग्म के आभरण।

४. **पागडाल** – नूपुरों के ऊपरी भाग के पाद-युग्म आभरण।

५. **कांचीगुण** – मध्य-भाग का आभरण।

६. **उदर-बन्ध (नागफणि से सज्जित)**– मध्या-भरण (कमरबंद)।

७. **दशवतार रशना (लघु घंटिकाओं से युक्त)** – कमर-बन्ध के इस आभरण की लघु-घंटिकाओं पर दशावतार के चित्र, पंचव्यूह के चित्र, श्रीस्वामी और उभय देवेरियों के चित्र-कुल १८ चित्र चित्रित किये गये हैं।

८. **लघु कण्ठाभरण** – कण्ठाभूषण।

९. **लम्बा कण्ठाभरण** – जो वक्षस्थल पर्यन्त होता है।

१०. **बाघ के नख आकार का स्वर्ण-हार**– नाभि पर्यन्त पाँच पंक्तियों का हार।

११. **स्वर्ण - यज्ञोपवीत** – रत्नग्रंथियों का छे पंक्तियों का हार।

१२. **साधारण यज्ञोपवीत** – जो षण्णवति से बनाया हुआ है।

१३. **तुलसी-पत्र हार** – कटि-हस्त पर्यन्त १०८ पत्रों का हार।

१४. **चतुर्भुज लक्ष्मी-हार** – जानु पर्यन्त १०८ लक्ष्मी की प्रतिमाओं से बना हार।

१५. **अष्टोत्तर शतनाम हार** – जंघा पर्यन्त १०८ अष्टोत्तर शतनामों के डालरों से बना हार।

१६. **सहस्रनाम हार** – सहस्रनामों से अंकित पाँच पंक्तियों का हार।

१७. **सूर्य कठारि** – नाभ्यादि पाद पर्यन्त कठारि वस्त्र संबंधिनी हार।

१८. **वैकुण्ठ हस्त** – दक्षिण हस्त का अलंकार।

१९. **कटि हस्त** – वाम हस्त का अलंकार।

२०. **कंकण** – हस्ताभूषण।

२१. **कंकण** – भुजदण्ड आभूषण।

२२. **नागाभरण** – भुजदण्ड आभूषण।

} भुजाभरण

२३. **भुजकीर्त** – भुज-आभूषण।

२४. **कर्ण-पत्र** – कर्ण आभूषण।

२५. **शंख-चक्र** – अन्य हस्तों पर।

२६. **किरीट** – शिरोभूषण, जो परत्व व्यंज़क है।

ये सब आभरण स्वर्ण के हैं। प्रतिदिन इनसे सज्जित करते हैं।

विशेष पर्व दिनों में १. रत्न किरीट, गरुत्मन्त मेरुपच्च (हरे वर्ण) का रत्नमय चक्र और शंख; रत्नमय कर्ण-पत्र, रत्नमय वैकुण्ठ हस्त, रत्नमय कठिहस्त, तीन पंक्तियों का रत्नमय मकर कण्ठि और स्वर्ण पीतांबर – इन दसों आभरणों का समर्पण होता है। इनके अलावा अन्य रत्नाभरण, नाना प्रकार के रत्नजडितहार उत्सव के अनुसार समर्पित किये जाते हैं। इस प्रकार श्री स्वामी का अलंकार अमूल्य वस्त्रों एवं आभरणों से वैभवालंकार रम्य रीति से संपूर्ण होने के बाद अन्तर् द्वार खोले जायेंगे।

सुवर्ण लक्ष्मी अभिषेक

श्रीस्वामी के वक्षस्थल स्थित सुवर्ण-प्रतिमा रूपा श्रीलक्ष्मी का गर्भालय में मन्त्र सहित परिमल द्रव्य तथा हरिद्रा से अभिषेक सम्पन्न होता है। श्री वैष्णव स्वामी बृन्द और आलय के अधिकारी-गण दक्षिण भाग में कुलशेखर पडि (कुलशेखर आल्वार से समर्पित सीढ़ियाँ) के पुरोभाग में आते हैं।

अर्चक पंचलोहयुक्त पात्र सहित रजत थाली पर स्वर्ण-पात्र के ऊपर वेदिका पर लक्ष्मी देवी को आसीन कराता है। अभिषेक के उपयुक्त उपचार समर्पित करता है। तदनन्तर पंचलोह-पात्र से परिमल तीर्थ को स्वर्ण-शंख में लेता है। श्रद्धा-भक्ति से श्रीसूक्त का पठन –'हरिः ॐ' – हिरण्यवर्णां हरिणीं' करते हुए अभिषेक का प्रारम्भ करेगा। पवित्र वेद-पारायण करनेवाले अर्चक मुखोद्गत मन्त्र-वाक्य का अनुवादन श्राव्य कण्ठ से करते हैं। श्रीसूक्त सहित परिमल और हरिद्रा से अभिषेक के उपरान्त अर्चक प्लोत-वस्त्र (सूखा वस्त्र) से पोंछकर रेशमी की जरी किनारेदार साडी पहनवाते हैं। तिलक का धारण कराते हैं। इस अलंकार के अनन्तर श्रीलक्ष्मी देवी को श्रीस्वामी के वक्ष-स्थल के दक्षिण-भाग में स्वर्ण-हार से आवृत्त कर आसीन कराते हैं। भूदेवीजी का भी श्रीस्वामी के वक्षस्थल के वाम-भाग पर स्वर्ण-प्रतिमा के रूप में विराजमान कराते हैं। यह सनातन आचार है।

इस प्रकार श्री भूदेवियों सहित मनोहर वस्त्रभूषण-मालाओं से दीप्तिमान श्री स्वामी की आरति होगी। यही अभिषेक महोत्सव है। कपूर की आरति नीराजन पात्र से होगी।

माध्याह्निकाराधन

श्रीस्वामी तथा उभय देवेरियों को शुक्रवार का अभिषेकालंकारों के पूरा होते ही माध्याह्निकाराधना के वास्ते अर्चक कर्मानुष्ठान करके आलय मर्यादाओं से आलय में प्रवेश करता है। अर्चक श्रीस्वामी की सन्निधि में जाता है।

प्रतिनित्य की भाँति श्री जिय्यंगार बृन्द यामुनात्तुरै नामक पुष्पसंग्रह स्थान पर जाते हैं। वहाँ तैयार रखे हुए तुलसी तथा पुष्पों की मालाएँ और पुष्पों से भरे वेणु-पात्रों में (बाँसुरी की टोकरियाँ) लेकर श्रीस्वामी के सान्निध्य में रखते हैं।

तोमाल सेवा

अर्चक श्री स्वामी के माध्याह्निक उपचारों के अनन्तर तोमाल-सेवा का प्रारम्भ करेगा। इस समय श्री जिय्यंगार बृन्द, अध्यापक तथा श्रीवैष्णव स्वामी 'सिरिय तिरुमडल' नामक (७२) दिव्य प्रबंध पाशुरों का गान करेंगे। तोमाल-सेवा के पूरा होते ही मन्त्र-पुष्प का पठन होगा और इसके अनन्तर आरति होगी।

अर्चन

अष्टोत्तरशतनामार्चन तथा आरति होगी।

माध्याह्निक निवेदन (द्वितीय घंटा)

इस समय पाक-शाला से पाचक-कैंकर्यवान शुक्रवार के निमित्त तैयार किये गए प्रसादों, भक्ष्य-भोज्य, शैत्योपचारी भीगा-मूँगीदाल गुड का शरबद् (पानकम्) लाकर श्रीस्वामी के पुरोभाग में रखेंगे। बृहत घंटानाद प्रारम्भ होगा। अर्चक अन्तर् द्वार बंद करके एकान्त में श्रीस्वामी को प्रसादों का निवेदन करेंगे। इस कार्य के उपरान्त घंटानाद बंद होगा। प्रसादों को निर्णीत स्थान पर ले जाते हैं। अर्चक श्रीस्वामी के परिवार देवताओं को 'बलि' समर्पण करके शेष-भाग को भूत-वेदी पर रखेगा। अन्य देवताओं तथा भाष्यकारों को भी निवेदन किया जायगा। एकान्त में शात्तुमोरा (मंगलाशासन) होगा।

कल्याणादि उत्सव

तदुपरान्त (माध्याह्निकाराधना के उपरान्त) श्री मलयप्प स्वामी उभय देवेरियों श्री भूदेवि सहित कल्याणादि उत्सव में भाग लेने के लिए महाराज-

वैभव से रंगमण्डप में पधारते हैं। वहाँ श्री स्वामी के कल्याणादि उत्सव मनाए जायेंगे।

सर्वदर्शन

शुक्रवाराभिषेक के अनन्तर नानालंकारों से शोभित स्वामी के सान्निध्य में भक्तों का सर्वदर्शन प्रारम्भ होगा।

शुद्धि

श्रीस्वामी की सायंकालीन आराधना का समय आसन्न होते ही सर्वदर्शन को बंद करके आलय की शुद्धि की जायेगी।

तदनन्तर प्रति-नित्य की भाँति सायंकालीन आराधना और एकान्त-सेवा क्रमशः होते हैं। इसके उपरान्त मंदिर के कवाट बंद किये जाते हैं। शुक्रवार का कार्यक्रम यही है।

दैनिक कार्यक्रमों की संग्रह-सूची

१. श्री स्वामी के आलय के कवाट तिरुमल गिरि पर प्रति-नित्य बीस (२०) घंटों तक खोले रहते हैं।

२. विशेष पर्व-दिनों में दो घंटे अधिक भी खोले रहते हैं।

३. श्री स्वामीजी की आराधना प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल – त्रिकालों में वैखानस आगम शास्त्र के अनुसार होगी।

४. रात के समय पूजा के अनन्तर कवाट बंद करने के बाद ब्रह्मादि देवतागण द्वारा श्री स्वमी की आराधना करने के लिए उपयुक्त तीर्थ आदि का प्रबंध किया जाता है।

५. प्रातः विश्वरूप दर्शन में ब्रह्म-पूजा प्राप्त श्री स्वामी का तीर्थ विश्वरूप-सेवा परायण भक्तों में वितरण होगा।

६. प्रति-नित्य आराधनाओं के पूरे होने के बाद ही सर्वदर्शन प्रारम्भ होगा।

७. किसी किसी दिन सर्वदर्शन में सहस्रों से अधिक भक्त श्री स्वामी के दर्शन करेंगे।

८. कभी-कभी श्री स्वामी के भक्त-जन एक दिन में लाखों रूपये से अधिक धनराशि की भेंट चढ़ाते हैं।

९. किसी दिन ऐसा संदर्भ भी देखा जाता है कि एक ही भक्त पचास लाखों की धनराशि की भी भेंट चढ़ायेगा।

१०. भारतीय ही नहीं, वर्न विदेशी भक्त भी श्रीस्वामी को सहस्रों भेंट भेजा करते हैं।

११. आस्तिक भक्त-जन द्वारा अपनी प्रार्थना के सफल होते ही श्री बालाजी को भेंटें चढ़ायी जाती है।

वेंकटाद्रि समं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेंकटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति ।।

सत्यं सत्यं पुनःसत्यं भुज मुद्धृत्यचोच्यते।

इति परमार्थः।

श्री वेंकटेश्वर प्रथम-भाग समाप्त।

द्वितीय-भाग

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी के उत्सव

१. संवत्सरादि आस्थानोत्सव

श्री वेंकटाद्रि पर चेतन-जीवों को कृतार्थ करने के लिए प्रत्यक्ष दैव श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी का आस्थान-महोत्सव चान्द्रमानानुसार उगादि के दिन मनाया जाता है।

श्री स्वामी की प्रातःकालीन आराधना के अनन्तर उत्सव-मूर्ति श्री मलयप्प स्वामी श्री-भूदेवियों सहित स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में जो आस्थान मण्डप है, उसमें सर्वभूपाल-वाहन पर आरूढ़ हो पधारेंगे। श्री सेनाधिपति भी दक्षिणाभिमुखी हो उस मण्डप की वेदी पर पधारेंगे। श्री स्वामी को और देवेरियों को रत्नमय आभरण विशेष कौशेय दुकूल सुगन्धित और मनोहर पुष्पों सहित समर्पण करेंगे। श्री स्वामीजी के सान्निध्य में माध्याह्निकाराधना के उपरान्त नित्य-प्रसाद, विशिष्ट-प्रसाद, आस्थान-प्रसाद तैयार करके इन पण्यारों (भोग) के पात्रों को परिचारक अपने सिरों पर उठा रखते हैं। श्री जिय्यंगार-बृन्द आचार्य-पुरुष आलय का अधिकारी-गण श्वेत-छत्र, मंगल-वाद्य आदि राजोचित वैभव के साथ आलय की परिक्रमा करके श्री स्वामी और श्री मलयप्प स्वामी के सान्निध्य उन्हें रखेंगे। सबको निवेदन समर्पित करते हैं।

तदुपरान्त श्रीस्वामी तथा उत्सव-मूर्ति श्री मलयप्प दोनों के लिए रेशमी वस्त्रों को बृहत रजत-पात्र में रखते हैं। इस पात्र को जिय्यंगार अपने सिर पर धरता है। श्वेत-छत्र-मंगल वाद्यों सहित आलय की परिक्रमा करके श्रीस्वामी के सान्निध्य गर्भालय में समर्पित करते हैं। इन नूतन-वस्त्रों को श्रीस्वामी को पहनवाते हैं। श्री स्वामी की आरति होगी। गोष्ठि में तीर्थ का वितरण करेंगे।

शेष दो वस्त्रों को रजत-पात्र में रखे, श्री जिय्यर अपने सिर पर धरता है। श्री मलयप्प को उन्हें समर्पित करते हैं। एक वस्त्र श्री सेनाधिपति को समर्पित करते हैं। अनन्तर अर्चक का सम्मान करेंगे। श्री स्वामी का अक्षतारोपण कार्य चलेगा। तत्क्षण सिद्धान्ति (पुरोहित) नूतन-पंचांग का श्रवण करता है। इस पुरोहित का भी सम्मान होगा। श्री स्वामी का कोलुवु, मात्रा-दान (मात्रा-दान में ताम्बूल, दक्षिणा, फल और तण्डुल होंगे) का कार्य चलेगा। श्री स्वामी की आरति के अनन्तर अधिकारी-गण तथा जिय्यंगार का स्थान-सम्मान होगा। प्रसादों एवं पण्यारों का गोष्ठि में वितरण किया जायेगा।

२. नित्योत्सव

शेष-पर्वत (तिरुमल) पर अर्चावतार में स्थित आदि देव जगत्प्रभु श्री वेंकटेश्वर स्वामी के नित्योत्सव चान्द्र-संवत्सर के प्रारम्भ से चालीस दिन मनाए जाते हैं। प्रति-दिन सायंकाल उत्सव मूर्ति, श्रीमलयप्प स्वर्ण-रथ पर आसीन होते हैं। रत्नाभरणों, रेशमी वस्त्रों तथा पुष्पमालाओं से स्वामी का अलंकार होगा। तदुपरान्त समस्त परिवार और मंगल-वाद्यों से तिरु-वीथियों का उत्सव वेदपारायण के साथ होगा। उत्सव से सीधे श्री भाष्यकारों की सन्निधि के मुखमण्डप में पधारेंगे। यहाँ श्री स्वामी की आराधना नैवेद्य-समर्पण के बाद, आरति दी जाती है। श्री स्वामी के कण्ठ की पुष्प-माला लेकर भाष्यकार को उसे समर्पित करेंगे। शेष आरति और उपचार होंगे। प्रसाद का वितरण अर्चकों और भाष्यकारों में होगा। स्थान-पुरस्कार के रूप में गोष्ठि को भी प्रसाद दिया जायेगा। इस कार्यक्रम के अनन्तर श्रीस्वामी आलय में पधारेंगे। (इस नित्योत्सव में द्वितीय दिन से समाप्ति तक श्री स्वामीजी मात्र तिरु-वीथियों का उत्सव मनाने पधारेंगे।)

३. नित्य-आस्थानोत्सव (कोलुवु)

आश्रित-कल्पतरु सप्ताचल पर विराजमान अर्चावतारी श्री स्वामी की आराधना के रूप में आस्थानोत्सव मनाया जाता है, जिसे प्रांतीय-भाषा में 'कोलुवु' कहते हैं। प्रतिदिन उषःकाल के पूर्व सुप्रभात के अनन्तर

विश्वरूप-दर्शन प्रारम्भ होगा। इस दर्शन में रात के समय श्रीस्वामी की ब्रह्मादि देवताओं से पूजा की जाती है। अतः उनके तीर्थ-स्वीकार के बाद शेष-तीर्थ को विश्वरूप दर्शनाकांक्षी भक्तों को देते हैं। बाद में शुद्धि के उपरान्त आराधना के रूप में तोमाल-सेवा प्रारम्भ होगी। दिव्य प्रबंध का पारायण होता है। आराधक विविध पुष्प-मालाओं को श्रीनिवास स्वामी को समर्पित करते हैं। स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में जो आस्थान-मण्डप है, उसमें सजाये गए सिंहासन पर, स्वामी स्वर्ण-छत्रों चामरों आदि वैभवों सहित पधारकर आसीन होते हैं। वहाँ आराधना के बाद अर्चकों को मात्रा-दान दिया जाता है। आराधक श्रीस्वामी के पादाब्जों पर मन्त्र-पुष्प समर्पित करते हैं। मिराशीदारों से दिव्य-प्रबंध, चतुर्वेद, वेदाँग, इतिहास, पुराण, कर्मसूत्र, ब्रह्मसूत्र – इनका श्रवण किया जाता है। पंचांग के अनुसार उस दिन की तिथि, वासर, नक्षत्र, योग, करण आदि स्वामी को सुनाए जाते हैं। पूर्व-दिन जो आय प्राप्त हुई है, उसकी सिक्कों सहित गणना करके सुनाते हैं। इसके बाद स्वामी को तिलपिष्ट गुड से मिश्रित नैवेद्य दिया जायेगा। तदनन्तर आरति के बाद जिय्यंगार-बृन्द को, अधिकारियों को एवं गोष्ठि में प्रसाद का वितरण होगा। श्री स्वामी 'कोलुवु' से निवृत्त होकर राज-वैभव से सन्निधि में पधारेंगे।

४. कल्याणोत्सव

समस्त कल्याण-गुण संपन्न तथा कल्याण-गुण दाता श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का कल्याणोत्सव तिरुमल गिरि पर प्रति-नित्य मनाया जाता है। कल्याणोत्सव भक्त-जनों की प्रार्थना-रूप अर्जित-सेवा है।

कल्याणोत्सव के भक्त-परायण स्वामी के कल्याणोत्सव का निर्वाह करने के लिए अपने बन्धु-जन पुत्र-कलत्र सहित रंगमण्डप में श्रीस्वामी के आगमन की प्रतीक्षा करते बैठे रहते हैं। श्रीस्वामी प्रातःकालीन तथा माध्याह्निक आराधना स्वीकार करने के बाद उभय देवेरियों सहित स्वर्ण-वेदी पर विराजमान होते हैं। अपने परिवार सहित आनंद-निलय तथा विमान की परिक्रमा करते हुए मंगल-वादन के साथ रंगमण्डप में पधारते हैं। भक्तजन

निर्निमेष नेत्रों से स्वामी के दर्शन करते हैं। वाहन से उतरवाकर श्री मलयप्प स्वामी और देवेरियों को भिन्न-भिन्न स्वर्ण-वेदियों पर विराजमान करते हैं। तदुपरान्त आचार्य कल्याण संबंधी वैदिक-तन्त्र प्रारम्भ करने के बाद श्रीस्वामी तथा देवेरियों का गोत्र-प्रवरपूर्वक सुनाता है। मंगल-सूत्र-धारणादि कल्याण संबंधी कार्यक्रम चलता रहेगा। मंगलसूत्र धारण के अनन्तर श्री स्वामी तथा देवेरियों में पुष्पमालाओं का परस्पर विनिमय होगा। श्री-भूदेवियों श्री स्वामी के पार्श्व में अपने स्थानों पर आसीन होगी। अक्षतारोपण समारोह मनाया जाता है। श्री स्वामी और उभय देवेरियों को प्रसाद का निवेदन होगा। तदुपरान्त कल्याणोत्सव के गृहस्थ का वस्त्रादि से सम्मान होगा और प्रसाद दिया जायगा। गृहस्थ (कल्याणोत्सव कर्ता) अपनी धर्म-पत्नी सहित श्री स्वामी के दर्शन और सेवा से अपने को धन्य मानकर अपने स्वस्थान में चले जाते हैं।

५. सहस्रकलषाभिषेक-उत्सव

तिरुमल गिरि पर विराजमान आदिदेव श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का सहस्रकलषाभिशेक भक्त-जनों की प्रार्थना के अनुसार प्रति बुधवार मनाया जाता है। श्री स्वामी की आराधना के उपरान्त स्वर्ण-कवाट के पुरोभाग में प्रत्येक आराधना-मण्डप तैयार किया जाता है। इसमें प्रत्येक स्नान वेदियाँ रखी जाती हैं। उन पर श्री भोग श्रीनिवास, उभय देवेरियों सहित श्री मलयप्प स्वामी तथा सेनाधिपति पधारते हैं। अभिषेक-सेवाकांक्षी भक्त अपने पुत्र, मित्र, बन्धुओं सहित भागवत गोष्ठि में भाग लेते है। इस गोष्ठि में अधिकार-गण भी रहते हैं। आचार्य अभिषेक संबंधी वैदिक तन्त्र प्रारम्भ करता है। तीर्थों से भरपूर्ण सहस्र कलशों तथा नवकलशों का भी प्रोक्षण होता है। होम-कार्य के अनन्तर वेदाध्ययन के घोष से अभिषेक का प्रारम्भ होता है। अभिषेक की समाप्ति में नव-कलश-तीर्थ से सहस्रधाराभिषेक होता है। नेत्रपर्वदायी इस अभिषेक का दर्शन अवश्य करना चाहिए। श्री स्वामी का वस्त्रधारणालंकार, नैवेद्य-समर्पण तथा अक्षतारोपण से अभिषेकोत्सव संपूर्ण

होता है। इस अभिषेक के सेवाकांक्षी भक्तों को गर्भालय में स्वामी के दर्शन के अनन्तर उचित पुरस्कार दिए जायेंगे। वे अपने स्वस्थान में चले जायेंगे।

६. रोहिणी-नक्षत्र उत्सव

श्री शेषाद्रि पर विराजमान अखिल जगन्निर्माण चतुर श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में श्री रुक्मिणी सहित विराजमान श्रीकृष्ण का उत्सव प्रति रोहिणी-नक्षत्र में मनाया जाता है। रोहिणी नक्षत्र में श्रीस्वामी की प्रातः कालीन तथा माध्याह्निक आराधना के उपरन्त श्रीकृष्ण श्री रुक्मिणी देवी सहित रथ पर विराजमान होते हैं। इस समय विशेष कौशेय आदि वस्त्रों तथा रत्नाभरणों से घ्राण-तर्पण रूपी परिमल द्रव्य पूर्ण पुष्पमालाओं से श्रीकृष्ण और देवी रुक्मिणी दोनों जैसा अलंकार किया जाता है । कर्पूर आरति के उपरान्त चतुर्वीथियों का उत्सव परिवारों, मंगल-वाद्यकारों, श्वेत छत्रों, वेदों के पारायण, प्रबन्धवेत्ताओं के दिव्य प्रबन्धों के पारायण से, हाथी, अश्व आदि से प्रारम्भ होता है। यात्री भक्त भी इसमें भाग लेते हैं। चतुर्वीथियों का उत्सव समाप्त होते ही स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में आस्थान-मण्डप में विराजमान होते हैं। यहाँ श्रीकृष्ण तथा देवी रुक्मिणी की आराधना, प्रसाद-निवेदन, तदुपरान्त आरति होंगे। जिय्यंगार बृन्द को, अधिकारियों को आस्थान-पुरस्कार के रूप में चंदन, ताम्बूल आदि का वितरण होगा। तदुपरान्त देव और देवियाँ अपने स्थानों पर विराजमान होंगे।

७.आर्द्रा नक्षत्र उत्सव

अखिल भुवन नियन्ता, दयासागर पर्वत-राज श्रीवैकुण्ठाद्रि पर अर्चावतार में तिरुमल-गिरि के गर्भालय में स्थित श्री वेंकटेश्वर की सन्निधि में यतिराज श्री भाष्यकार के प्रति आर्द्रा-नक्षत्रदिनोत्सव मनाया जाता है। इस दिन श्रीस्वामी की माध्याह्निकाराधना पूरे होते ही श्री मलयप्प स्वामी रंग-मण्डप में पधारते हैं। वहाँ अर्जित सेवाओं की समाप्ति के उपरान्त श्री स्वामीजी आर्द्रा-नक्षत्रोत्सव के लिए रथ पर विराजमान हो महाद्वार के निकट पधारेंगे।

रथ में श्रीभाष्यकार विराजमान होकर श्री स्वामी के पुरोभाग में पधारेंगे। इस समय श्रीस्वामी को आरति दी जाती है। श्री भाष्यकार का सम्मान शेष आरती के साथ पुष्प-मालाएँ शठारि आदि से होता है। इसके उपरान्त श्रीस्वामी और उनके आमने-सामने श्री भाष्यकारों का उत्सव तिरुवीथियों में मनाया जायेगा। उत्सव में अश्वशाला के स्थान से दिव्य प्रबंध का पारायण चलेगा। इस उत्सव की समाप्ति में महाद्वार के पास श्रीस्वामी को आरति दी जायगी और गोष्ठि को शठारि से पूत करेंगे। श्री स्वामी विमान परिक्रमा के रूप में श्री भाष्यकार आलय मुख-मण्डप में पधारेंगे। श्री स्वामी को निवेदन समर्पण करके आरति दी जायेगी। शेष-आरती और शठारि से श्रीभाष्यकार का सम्मान होगा। श्री स्वामी स्वस्थान पधारेंगे।

८. पुनर्वसु नक्षत्र उत्सव

अखिल भूत संरक्षक वेंकटगिरि पर विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में श्रीसीता लक्ष्मण सहित श्री रामचन्द्रजी का प्रति पुनर्वसु नक्षत्र में उत्सव मनाया जाता है।

इस नक्षत्र के दिन श्रीस्वामी की प्रातः कालीन तथा माध्याह्निक आराधना के अनन्तर श्रीसीता राम और लक्ष्मण को स्वर्ण-रथ पर विराजमान करते हैं। उनका अलंकार रेशमी वस्त्रों से, अमूल्याभरणों से तथा पुष्प-मालाओं से मनोहर रीति से किया जाता है। अन्य रथ पर श्रीरामचन्द्रजी का भक्ताग्रेसर श्री आंजनेयस्वामी को विराजमान करके वस्त्राभरणों और पुष्प मालाओं से अलंकृत करते हैं। श्रीरामचन्द्रजी की आरति होगी। आनंदनिलय की परिक्रमा के बाद तिरुवीथियों के उत्सव में पधारेंगे। समस्त परिवार सहित, समस्त वाद्यों से, वेदपाठकों के साथ, दिव्य प्रबन्ध पाठकों के साथ, भक्त-जन और अधिकारीगण के साथ स्वामी मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र महा-परिक्रम का उत्सव समाप्त करके श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में पधारेंगे। वहाँ उनकी आराधना प्रसाद निवेदन तथा आरति होगी। श्री मारुति स्वामी

को शेष आरति पुष्प-माला समर्पित की जाती है। जिय्यंगार बृन्द को, सरकारी अधिकारियों को चंदन, ताम्बूल और प्रसाद का वितरण स्थान-पुरस्कार के रूप में दिए जायेंगे। उपरान्त श्री स्वामी सन्निधि में विराजमान होंगे।

९.श्रवण नक्षत्र उत्सव

समस्त चराचर का नियन्ता श्री शेष भूधर (तिरुमलगिरि) पर विराजमान जो श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी हैं, उनका अवतार नक्षत्र श्रवण होने के कारण प्रति श्रवण नक्षत्र में उनका उत्सव मनाया जाता है।

इस श्रवण-नक्षत्र के दिन सुबह तोमाल सेवा के उपरान्त श्री मलयप्प स्वामी तथा उभय देवेरियों का तिरुमंजन होता है।

माध्याह्निकाराधन के पूरा होते ही श्रीमलयप्प अपनी देवियों सहित भक्त-जनों की प्रार्थना की परिपूर्ति के लिए कल्याण-मण्डप (रंग मण्डप) में पधारते हैं। वहाँ का कार्य-पूरा होते ही अपने अवतार नक्षत्र का उत्सव मनाने के लिए उभय देवेरियों सहित स्वर्ण वेदी पर आरूढ़ होते हैं। उनका विशिष्ट रेश्मी वस्त्रों, रत्नाभरणों तथा पुष्पमालाओं से विशेष अलंकार होगा। कर्पूर आरति के उपरान्त अधिकारियों, जिय्यंगारों को शठारी होता है। समस्त परिवार सहित विमान की परिक्रमा के रूप में चतुर्वीथियों का उत्सव मनाने निकलते हैं। इस उत्सव के समय भक्त सर्व पाप संचय निर्वर्तक श्री स्वामी के दर्शन कर भगवल्लाभ पाते हैं। एक ओर वेदध्वनि, और एक ओर दिव्य प्रबंधारव और गोविन्द नाम संकीर्तनों से लौकिक विषय सेवी कर्णों की वासनाएँ दूर हो जाती हैं। देवेरियों सहित स्वामी के दर्शन से नेत्र-पर्व तथा इस समारोह से तरंगों (प्रतिध्वनित) के दिव्य-नाद से कर्ण-पेय भक्त एक साथ पाते हैं। यह प्रेक्षकों का महाभाग्य है, जो वाचामगोचर है। इस उत्सव के उपरान्त श्रीस्वामी को आरति दी जाती है। जिय्यंगार व अधिकारियों को आस्थान पुरस्कार और गोष्ठि में प्रसाद दिया जायेगा। श्री स्वामी सन्निधि में विराजमान होंगे।

१०. श्रीरामनवमी का आस्थानोत्सव

अपार कारुण्य वारधि के रूप में श्री शेषगिरि पर लोककल्याण के लिए अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के सन्निध्य में प्रति संवत्सर चैत्र-मास के शुद्ध नवमी के दिन श्री रामचन्द्रजी का आस्थान मनाया जाता है।

श्री महाविष्णु का अवतरण त्रेतायुग में अयोध्यापुर वासियों के पूर्वजन्म के सहस्रार्जित पुण्यफल के रूप में कौसल्या-दशरथ के तपःफल रूपा सुपुत्र श्रीरामचन्द्रजी का जन्म सूर्यवंश में चैत्रमास के शुद्ध नवमी शुभवासर में सूर्य, अंगारक, शनि, गुरु और शुक्र — पाँचों ग्रह उच्च-स्थिति में रहते समय पुनर्वसु नक्षत्रयुक्त कर्काटक लग्न में हुआ था। अतः इस दिन को पवित्र मानते हैं। इस दिन की शाम को श्रीरामचन्द्रजी हनुमद्वाहन पर विराजमान होंगे। समस्त परिवार तथा मंगलवादनों के साथ चतुर्वीथियों का उत्सव मनाया जायेगा। इस उत्सव से निवृत होकर सुवर्ण-द्वार के पुरोभाग में सर्वभूपाल-वाहन पर कल्याण-गुण श्रीरामचन्द्रजी श्रीसीता माता तथा भ्राता लक्ष्मण सहित आरूढ़ होकर आस्थान मण्डप में पधारेंगे। श्रीवीर हनुमानजी भी दक्षिणाभिमुखी हो आस्थान में एक वेदिका पर विराजमान होंगे। आस्थान मण्डप मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र के परिवार से आलय के अधिकारी-गण से, कैंकर्यवानों से तथा भक्त जनों से भरपूर रहता है। कल्याण-गुण शोभित श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन से प्रेक्षक ऐसी अनुभूति पाते हैं, कि मानों अयोध्या के श्रीराम के आस्थान में रहते हों। इस पुण्य स्मरण से वे पुलकित होते हैं। यहाँ श्रीस्वामी की आराधना होगी। प्रसाद का निवेदन तथा अक्षतारोपण होगा। तदनन्तर अयोध्यापुर सम्राट श्रीरामचन्द्रजी के पादाब्जों पर जो रामायण-पुण्य ग्रन्थ रखा गया था, उसे मिराशीदार पौराणिक होने से उन्हें देते हैं। वे उस ग्रन्थ से श्रीराम-जन्म काण्ड का मधुर कण्ठ से पठन करेंगे। उनका सम्मान किया जाता है। श्री स्वामी को आरति दी जाती है। प्रति उत्सव की भाँति श्री जिय्यंगार एवं आलय के अधिकारियों को स्थान-सम्मान होगा। गोष्ठि को चंदन, ताम्बूल,

शेष वाहन पर श्री वेंकटेश्वर स्वामी

सर्पराज नमस्तुभ्यं
आदिशेष नमोस्तुते ।
शय्यासनादि रूपैश्च
स्वामिनम् सेव्यसे भवान् ।।

प्रसाद दिये जायेंगे। आस्थान उत्सव की समाप्ति के अनन्तर श्रीरामचन्द्रजी श्रीसीता लक्ष्मण और वीर हनुमान के साथ श्रीस्वामी की सन्निधि में पधारेंगे।

११. श्रीरामतिलक आस्थानोत्सव

भक्तजन संरक्षणार्थ सप्ताचल पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के सान्निध्य प्रति वर्ष चैत्र-मास के शुद्ध-दशमी के शुभवार मर्यादा पुरुषोत्तम कल्यांण गुणाभिराम श्रीरामचन्द्रजी के तिलक महोत्सव के निमित्त आस्थान मनाया जाता है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी की प्रातःकालीन एवं माध्याह्निकाराधना के उपरान्त श्रीसीताजी सहित राम और लक्ष्मण को स्वर्ण वाहन में और श्री हनुमानजी को एक वाहन में आरूढ़ करायेंगे। उनका अलं करण विशेष कौशेयों तथा विशेष आभरणों से करेंगे। श्री हनुमानजी श्रीरामजी के अभिमुखी हो बैठेंगे। अनन्तर समस्त परिवार और मंगल वाद्यों से चतुर्वीथियों का उत्सव मनाया जायेगा। उत्सव के उपरान्त श्रीस्वामी स्वर्ण-कवाट के पुरोभाग के आस्थान-मण्डप में सर्वभूपाल-वाहन में आरूढ़ हो पधारेंगे। श्रीरामचन्द्रजी के वाम-पार्श्व में कपिराज सुग्रीव, युवराज अंगद और हनुमानजी दक्षिणाभिमुखी हो प्रत्येक वेदियों पर आसीन होंगे। आचार्यों, अर्चक बृन्द, परिचारकों, परिवारों तथा भक्त-जनों से परिवेष्टित आस्थान में स्वामियों की आराधना और प्रसाद समर्पण होगा। आस्थान की भरी सभा में त्रेतायुग में अयोध्या नगर में जैसे दुष्ट-शिक्षण और शिष्ट-रक्षणार्थ अवतरित श्रीरामचन्द्रजी के साथ उनका परिवार श्रीसीता माता, भ्राताएँ लक्ष्मण, भरत, शतृघ्न, जो छत्र-चामर आदि के कैंकर्यवान हैं, राक्षसवीर विभीषण, वानरवीर सुग्रीव, अंगद, हनुमान, जाम्बवन्त, ब्रह्मादि देवता, देवबृन्द, 'मुनि वसिष्ठ, वामदेव, वाल्मीकि, विश्वामित्र, मार्कण्डेय आदि महर्षि-गण, सहस्रों नागरिक और महाराजा आसीन होंगे। इन सबके समक्ष श्रीरामचन्द्रजी श्री सीतामाताजी सहित रत्नखचित सिंहासन पर आरूढ़ होंगे। इनवंश तिलक श्रीरामजी के

तिलक के मंगल-चिह्नों को पौराणिक तथा सम्राट श्रीरामजी के पादाब्जों पर रखे गए श्रीमद्रामायण को अर्चक पौराणिकों के हाथ में देता है। इस समय श्रीमद्रामायण से तिलक-महोत्सव-काण्ड का पठन होगा। स्वामियों को आरति देने के बाद वहाँ के जिय्यंगार, सरकारी अधिकारी और गोष्ठि का आस्थान सम्मान रूप चंदन, ताम्बूल और प्रसाद का वितरण होगा। तदनन्तर स्वामी अपने-अपने स्थान पर श्रीबालाजी की सन्निधि में विराजमान होंगे।

११. वसंतोत्सव

अखिल जगत के सृष्टि-स्थिति-लय कारक श्री वेंकटाद्रि पर अर्चा रूप में अवतरित श्रीस्वामी का वसंतोत्सव प्रतिवर्ष चैत्र-मास के शुद्ध त्रयोदशी, शुद्धचतुर्थि और पूर्णिमा के दिनों में मनाया जाता है। प्रथम दिन श्री स्वामी की प्रातःकालीन आराधना और माध्याह्निकाराधना के अनन्तर श्री भूदेवियों सहित श्री मलयप्प स्वामी स्वर्ण वाहन में तिरुवीथियों के उत्सव के अनन्तर आलय के पश्चिम भाग में स्थित वसन्त मण्डप में पधारेंगे। वहाँ श्री स्वामी की आराधना और अभिषेक का अलंकार किया जायगा। सायंकाल आस्थान मनाने के उपरान्त, उत्सव सहित श्री स्वामी के सान्निध्य में पधारेंगे।

द्वितीय दिन श्री मलयप्प स्वामी श्रीदेवी और भूदेवियों सहित आराधना के बाद सबेरे चाँदिनी वाहन पर आरूढ़ होंगे। रथोत्सव की समाप्ति के उपरान्त वसन्त-मण्डप में पधारेंगे। वहाँ स्वामी को आस्थान, अभिषेक और अलंकार होंगे। सायंकाल में आस्थान होगा। तदनन्तर तिरुवीथियों में उत्सव के अनन्तर श्री स्वामी की सन्निधि में पधारेंगे। तृतीय दिन आराधना के बाद श्री-भूदेवियों सहित श्री मलयप्प स्वामी एक पालकी में, सीता राम लक्ष्मण एक पालकी में, रुक्मिण समेत श्रीकृष्ण एक पालकी में, श्री हनुमानजी एक पालकी में, विराजमान हो, तिरुवीथियों में उत्सव के साथ वसंतोत्सव मण्डप में पधारेंगे। उनका अभिषेक तथा अलंकार किया जायगा। त्रेतायुग के मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र, द्वापर युगावतारी जगद्गुरु श्रीकृष्ण और कलियुग के प्रत्यक्ष अर्चावतारी श्री वेंकटेश स्वामी तीनों के एक साथ दर्शन आस्थान में भक्त-

जन करते हैं तथा इस अद्वितीय पवित्र दर्शन से अपना जन्म धन्य हुआ मानते हैं। इस दर्शन से प्राप्त भाग्य प्रमाणातीत है। इस प्रकार के अपूर्व दर्शन से वीक्षकों को अनुग्रह करके तीनों स्वामी अपने परिवारों और भक्तों से तिरुवीथियों का उत्सव पूरा करके, श्रीस्वामी के सान्निध्य में प्रवेश करते हैं। यह उत्सव वसंत ऋतु में मनाए जाने के कारण वसंतोत्सव कहलाता है। आगमों के अनुसार इस उत्सव के दर्शन से समस्त कामनाएँ सफल होती हैं।

१३. श्रीभाष्यकारजी का उत्सव

सर्व पुरुषार्थ प्रदान चतुर, वेद-पर्वत नाम से विख्यात तिरुमलगिरी पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में श्री भाष्यकार का उत्सव मनाया जाता है। श्री भाष्यकार का जन्म मेष मास में आरुद्रा नक्षत्र में हुआ था। अतः इस नक्षत्र के आने के पहले दस दिनों से यह उत्सव चलता है।

प्रथम दिन श्री स्वामी की प्रातःकालीन आराधना और निवेदन के बाद शात्तुमोरा होगा। अधिकारीगण, अर्चक-बृन्द, परिचारक समूह श्वेत छत्रादि वैभव से मंगल-वाद्यों के साथ श्री स्वामी के शठारि को विमान परिक्रमा कराके श्री भाष्यकारों के सान्निध्य में ले जायेंगे। वहाँ श्री भाष्यकारजी को एक पालकी में विराजमान करके तिरुवीथियों का उत्सव मनायेंगे। परिक्रमा करके महाद्वार पर आते ही 'इहलदोशपडि' का निवेदन करने के उपरान्त विमान परिक्रमा से उन्हें उनके स्थान पर विराजमान करायेंगे। इहल गोष्ठि का सम्मान होगा। श्री शठारि को श्रीस्वामी की सन्निधि में रख देते हैं। सायंकाल नित्योत्सव के लिए श्री मलयप्प स्वामी एक पालकी में, उनके अभिमुख में श्री भाष्यकारजी एक पालकी में महाद्वार के पास आते हैं। वहाँश्री मलयप्प स्वामी की आरति के उपरान्त श्री भाष्यकार की भी शेष आरति होगी। तिरुवीथियों के उत्सव के बाद श्री मलयप्प स्वामी श्री भाष्यकार के मुख-मण्डप में पधारेंगे। यहाँ श्री स्वामी की आराधना, निवेदन और आरति होने के बाद शेष-आरति शेष-पुष्पमालाओं और शठारी से भाष्यकार का सम्मान होगा। अंत में भाष्यकारों

के निवेदन के बाद प्रसाद का वितरण होगा। श्री स्वामी अपनी सन्निधि में विराजमान होंगे।

१४. चन्दन चूर्णोत्सव

आश्रितजन कल्पतरु आपद्बान्धव श्री वेंकट भूधर पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के नित्योत्सव के भाग में चन्दन चूर्ण का उत्सव मनाया जाता है।

श्री स्वामी प्रातःकालीन तथा माध्याह्निक आराधना के उपरान्त नित्योत्सव के लिए श्री मलयप्प स्वामी के अभिमुख एक पालकी में आते हैं। इन दोनों को चन्दन का चूर्ण अर्चक समर्पित करते हैं। वहाँ से श्रीस्वामी तिरुवीथियों के उत्सव में निकलते हैं। इस उत्सव के समय 'पारुपत्यदार' नामक एक कर्मचारी चंदन-चूर्ण को भक्तों में वितरण करता है। श्री मलयप्प स्वामी परिक्रमा करके श्री स्वामी की सन्निधि में आते हैं। तदनन्तर श्री भाष्यकार की सन्निधि में श्री मलयप्प स्वामी पधारते हैं। वहाँ आराधना, प्रसाद का समर्पण के अनन्तर आरति दी जायगी। गोष्ठि का स्थान-सम्मान होगा और उत्सव स्वामी श्री स्वामी की सन्निधि में जायेंगे।

१५. श्री नृसिंह जयन्ति

आर्तत्राणपरायण तिरुमलगिरि पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के सन्निधान में चान्द्रमान गणना के अनुसार वैशाख शुद्ध चतुर्दशी के शुभवासर के प्रदोष समय में श्री नृसिंह स्वामी का जयन्त्युत्सव मनाया जाता है।

इस दिन श्री स्वामी की सायंकालीन आराधना तथा तोमालार्चना तथा तोमाल-दोसा-पडि का भोग होने के उपरान्त अर्चक महाशय श्री स्वामी के शठारि को लेकर मंगल-वाद्य सहित विमान परिक्रमा करते श्री नृसिंह स्वामी की सन्निधि में जाते हैं। वहाँ श्री नृसिंह स्वामी का अभिषेक करते हैं और पुष्पहारादि से अलंकृत करते हैं। आराधना के बाद भोग के रूप में 'तलिय'

(गुड मिश्रित चावल की आटा), गुड का शरबत और भीगा हुआ मूंग-दाल समर्पण करते हैं।

तदनन्तर दिव्य प्रबन्ध-पारायण और शात्तुमोरा (मंगलाशासन) के बाद आरति दी जायगी। भोग-द्रव्यों का गोष्ठि में वितरण किया जायेगा। तदनन्तर अर्चक महाशय श्री स्वामी को बिठाकर मंगल वाद्यों सहित ध्वज-परिक्रमा करते हुए श्री बालाजी की सन्निधि में जाते हैं। तदनन्तर की कार्यवाही की जायेगी।

१६. आनिवर-आस्थान

अखिल ब्रह्माण्ड नायक, अपार करुणा-सागर श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चारूप में शेषाचल के तिरुमल पर आश्रित रक्षणार्थ पधारे हैं। उनका प्रति-वर्ष दक्षिणायन के प्रथम दिन आनिवर आस्थान के नाम से वैभवपूर्वक आस्थान लगेगा।

यह पर्व-दिन माना जाता है। श्री स्वामी की तोमाल सेवा और विश्वरूप दर्शन के अनन्तर उत्सव-मूर्ति श्री मलयप्प और उभय देवेरियों का एकान्त में अभिषेक (तिरुमंजन) होता है। इनके साथ सेनाधिपति श्री विष्वक्सेन का भी अभिषेक होता है। उपरान्त श्री स्वामी की अर्चना होते ही प्रथम-बृहत-घंटा बजाया जाता है जो स्वामी के भोग लगाने का सूचक है। इसी समय श्री भूदेवियों सहित श्री मलयप्प स्वामी स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग के आस्थान मण्डप में सिद्ध किए हुए सर्वभूपाल-बाहन पर आरूढ़ होते हैं। इस उत्सव में वज्र-कवच आदि अमूल्य आभरणों से अलंकार किया जाता है। सेनाधिपति आरूढ़ हो श्री स्वामी के पार्श्व से दक्षिणाभिमुखी हो पधारते हैं। उनका भी आभरणों से अलंकार किया जाता है। श्री स्वामी जी को नाना प्रकार की पुष्प-मालाओं से अलंकृत करते हैं। श्री स्वामी की सन्निधि में और आस्थान में भी द्वितीय अर्चना होती है। इसके उपरान्त पेश्कार, पारपत्यदार, अन्य अधिकारी-गण, सब जिय्यंगार-बृन्द, आचार्य-पुरुष, एकांगी, श्री

बालाजी के प्रसाद को श्वेत छत्र-चामरों से मंगल-वाद्यों वैभव से गमेकार (प्रसाद लेनेवाले) विमान परिक्रमा करते हुए श्री स्वामी की सन्निधि में आस्थान में रखते हैं। द्वितीय घंटारव के होते समय श्री बालाजी की एवं आस्थान में भी भोग लगाया जाता है।

तदुपरान्त श्री बालाजी के लिए छः नूतन वस्त्रों को चाँदी की थाली में रखे उसे जिय्यंगार अपने सिर पर धरता है। उन्हें लेकर मंगल वाद्य, श्वेत-छत्र आदि राज-वैभव से, अधिकारीगण सहित विमान-परिक्रमा से श्री स्वामी की सन्निधि में जायेंगे। इनमें से चार वस्त्रों को स्वामी को समर्पित करते हैं। श्री स्वामी की आरति होगी। नित्य की भाँति गोष्ठि का तीर्थ, चंदन, शठारि आदि से सम्मान होगा। जिय्यंगार शेष दो वस्त्रों को थाली में रखे अपने सिर पर धरकर आस्थान में विराजित श्री मलयप्पा स्वामी की सन्निधि में आयेंगे। एक वस्त्र श्री मलयप्प स्वामी को और दूसरा वस्त्र सेनाधिपति जी को समर्पित करेंगे। अर्चक सेनाधिपति को परिवट्टं से अलंकार करेंगे। श्री मलयप्प स्वामी का अक्षतारोपण करने के बाद सेनाधिपति का परिवट्टं और शठारि से सम्मान करेंगे। अर्चक की भी शठारी होगी। आस्थान आरति स्वामी को दी जायेगी। बडा जिय्यंगार स्वामी को परिपट्टं से अलंकृत करके स्वामी के पादाब्जों पर रखे गए स्वामी के मुहर स्वामी के अधीन करने की सूचना के रूप में स्वामी के हाथ में रखेंगे। देवस्थान-लच्छन नामक चाबियों का गुच्छ स्वामी के हाथ पर लटकाते हैं। चन्दन, ताम्बूल समर्पण करने के उपरान्त उस लच्छन-गुच्छ को भी श्री स्वामी के पादाब्जों पर रखते हैं। जिय्यंगार के हाथ में मोहर देकर उसका सम्मान करेंगे। तदुपरान्त एकांगी का देवस्थान की मंडली की ओर से देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी द्वारा भूरि सम्मान होगा। इस अधिकारी को मात्र श्री स्वामी के पादाब्जों पर रखा मोहर प्रदान किया जाता है। आस्थान में नजराना के रूप में समर्पित भेंटों की गणना एकांगी करता है। उन्हें वहाँ आसीन सरकारी अधिकारी को सौंप देते हैं, जो उनकी प्रत्येक गणना लिखित रूप में कर रखेंगे। तदनन्तर देवस्थान के न्यास- सदस्यों

कार्यनिर्वाहक अधिकारी, पेश्कार, पारुपत्यदार, मैसूर-राजा, ताल्लपाक के वंशजों, तरिगोन्ड वेंगमांबा के वंशजों की विशेष आरतियाँ दी जाती हैं। जिय्यंगार, न्यास के सदस्यों और कार्यनिर्वाहक अधिकारीजी का प्रत्येक सम्मान होगा। स्वामी को निवेदित प्रसाद का वितरण चंदन ताम्बूल सहित सब में किया जाता है। यात्री भक्तों को भी उस समय प्रसाद दिया जाता है। आस्थान-कार्यवाही से निवृत्त होकर श्रीभूदेवियों सहित श्री स्वामी और सेनाधिपति के साथ सन्निधि में पधारते हैं। यही अनिवर आस्थान-महोत्सव है। [पिछले कुछ वर्षों से देवस्थान द्वारा इस उत्सव के अवसर पर सायंकाल को श्रीदेवी और भूदेवी सहित श्री मलयप्प स्वामी की पुष्प पल्लकी में चारों माडा वीथियों में शोभा-यात्रा निकाली जा रही है।]

१७. श्री नारायणगिरि पर छत्र स्थापनोत्सव

विभूति द्वय नायक, कलियुग वैकुण्ठ नामक तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य पाद मुद्राएँ जिस शिला फलक पर मुद्रित हैं, वे नारायणगिरि पर स्थित हैं। अतः प्रतिवर्ष शयनैकादशी (आषाढ़ शुद्ध एकादशी) के पर्व दिन के पर-दिन शुद्ध द्वादशी में भी पाद पूजा छत्र स्थापन-उत्सव मनाया जाता है। श्रीस्वामी की प्रातःकालीन और माध्याह्निकाराधना के उपरान्त अर्चक महाशय, एकांगी, अधिकारी-गण, परिचारक, कैंकर्यवान् सब नारायणगिरि को जाने संसिद्ध होते हैं। दो भूचक्रछत्रों को यमुनत्तुरै (पुष्पसंग्रह स्थान) पुष्पसरों को और स्वर्ण-कूप से तीर्थ को लाते हैं। मंगलवाद्यों सहित महापरिक्रमा के रूप में निकलकर 'मेदरगोह' नामक स्थान पर वाद्यों को वहीं छोड देते हैं। नारायणगिरि पर सब जायेंगे। वहाँ के शिला-फलक पर श्रीबालाजी के जो पाद हैं, उनका स्वर्ण-कूप के तीर्थ से अभिषेक करेंगे। नारियल को फोडकर समर्पण करने के बाद आरति दी जायगी। नारियलों को स्थान-सम्मान के रूप में गोष्ठि में वितरण करेंगे। उपरान्त श्रीस्वामी के दिव्य पादों के समीप स्थित वृक्षों का भूचक्रछत्रों से आच्छादन

करेंगे। इस कार्य के पूरा होते ही कैंकर्यवान भक्तों सहित सब नारायणगिरि उतरकर बगला-बाग में आयेंगे। श्री स्वामी के प्रसाद का वितरण होने के अनन्तर वन-भोजन का कार्य भी चलेगा। तदनन्तर भगवन्नाम-संकीर्तन करते हुए महाद्वार तक आएँगे। सब अपनी नियमित सेवा में लग जायेंगे।

१८. पवित्रोत्सव

अखिल हेय प्रत्यनीक कल्याण-गुण संपन्न तिरुमल पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर का पवित्रोत्सव प्रति-वर्ष श्रावण-मास के शुद्ध-दशमी के शुभ-दिन पर अंकुरार्पण मनाया जायेगा। एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी के तीनों दिनों में पवित्रोत्सव होगा। आगम-शास्त्र के अनुसार रेश्मी को बीजों के आकार में बनाते हैं और उनसे बनाई गयी मालाओं का समर्पण श्रीस्वामी तथा परिवार देवताओं को पहनवाना चाहिए। शास्त्र इसका कारण भी स्पष्ट करता है। अर्चावतारी भगवान नित्य-पूजादि कार्य ब्रह्मादि देवता भी दोषरहित नहीं कर सकते हैं, तो अल्पज्ञ मानवों की बात क्या कहना। अतः वर्षभर के पूजनों में न्यूनातिरिक्त दोष होने की संभावना है। अज्ञानसंभूत उन दोषों का निवारण इस पवित्रोत्सव से होगा। अतः प्रतिवर्ष पवित्रोत्सव मनाना अवश्यम्भावी है। पुरुषार्थ कामी मानव को इस पवित्रोत्सव करने अथवा कराने से समस्त अभीष्टों की सिद्धि होगी।

१९. श्री वराह जयन्ति उत्सव

सर्व जगन्नियन्ताध्यक्ष पुण्य भूधर श्री वेंकटाद्रि पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में श्रवण-नक्षत्र के दिनों श्री स्वामी तथा वराहस्वामी की जयन्ति मनायी जाती है।

रात की सेवा के उपरान्त अर्चक महाशय, कैंकर्यवान, परिचारक सब श्री वराहस्वामी की सन्निधि में आते हैं। वहाँ स्वामी की आराधना तथा भोग लगाया जाता है। आरति देने के बाद प्रसाद का वितरण गोष्ठि में किया जाता है। तदुपरान्त कैंकर्यवान श्री बालाजी की सन्निधि में जाते हैं।

२०. गोकुलाष्टमी आस्थानोत्सव

परम पुरुषार्थ प्रदान, चतुर श्री वेंकट महीधर पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में श्रावण मास के बहुलाष्टमी के शुभवासर में जगद्गुरु गीताचार्य श्रीकृष्ण का आस्थान मनाते हैं।

सायंकाल को श्रीकृष्ण स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में सर्वभूपाल वाहन पर आरूढ़ होंगे। वहाँ श्रीकृष्ण का अमूल्य वस्त्रों, रत्नाभरणों तथा पुष्पमालाओं से मनोहर अलंकरण किया जाता है। श्रीकृष्ण की आराधना करके आस्थान भोग लगाया जाता है। जिय्यंगार का सम्मान होने के बाद प्रबंध, शात्तुमोरा (मंगलाशासन) होगा। श्रीकृष्ण का अक्षतारोपण होता है। श्रीकृष्ण के पादाब्जों पर आराधकों के द्वारा जो भागवत-ग्रन्थ रखा गया है, उसे पौराणिक को देते हैं। कृष्णावतारी की घटना का पठन भक्ति के पारवश्य में करते हैं, जिसे वहाँ उपस्थित भक्तजन तन्मय हो सुनते हैं। पौराणिकों का सम्मान होता है। स्वामी की आरति होती है। तदनन्तर जिय्यंगार बृन्द और सरकारी अधिकारियों का सम्मान होता है। प्रसाद और मधुर पकवान का गोष्ठि में वितरण किए जाते हैं। श्रीकृष्ण अपने स्थान में मंदिर के अंदर विराजमान होंगे।

२१. शिक्योत्सव (छींके का उत्सव)

अखिल भुवनैक स्वामी, वेंकट शैलाग्र पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में प्रतिवर्ष श्रावण मास के बहुलाष्टमी के शुभ-दिन शिक्योत्सव मनाया जाता है। गोकुलाष्टमी के दूसरे दिन यह उत्सव मनाया जाता है।

श्रीस्वामी की प्रातःकालीन एवं माध्याह्निकाराधना के उपरान्त एक पालकी में उत्सवमूर्ति श्री मलयप्प स्वामी, और एक पालकी में श्रीकृष्ण आरूढ़ हो विमान की परिक्रमा के रूप में निकलेंगे। ध्वजस्तंभ से यमुनत्तुरै में श्री मलयप्प स्वामी तथा पडिपोटु निकट के चतुस्तम्भ मण्डप में भगवान श्रीकृष्ण विराजमान होंगे। श्री मलयप्प स्वामी भी इस मण्डप में पधारेंगे।

दोनों स्वामियों को भोग के रूप में तरबूज फल निवेदिन करेंगे। आरति दी जायगी। एकांगी, यमुनत्तुरै के सेवक-भक्तों में और गोष्ठि में भी ये फल सम्मान रूप में वितरित किये जाते हैं। इस प्रकार का परंपरागत आचार श्री जिय्यंगार के सोलह मठों में एक ही प्रकार मनाया जाता है। वहाँ सब स्थानों पर भोग, आरति और फलों का वितरण होता है। चतुर्वीथियों में यत्र-तत्र जहाँ छींके बनाए जाते हैं, वहाँ भी छींके को फोडते भक्त-जन भी आनंद पाते हैं। यही शिक्योत्सव है।

२२. अनन्तपद्मनाभ चतुर्दशी उत्सव

भक्तजन कल्पमहीरुह प्रणतार्थि हरण अर्चावतार में वेदाद्रि पर विराजमान श्री वेंकटेश्वर के सन्निधान में प्रतिवर्ष भाद्रपद मास के शुद्ध चतुर्दशी दिन श्रीमान् चक्रत्ताल्वार का उत्सव मनाया जाता है।

श्री बालाजी की प्रातःकालीन आराधना के उपरान्त श्री चक्रत्ताल्वार पालकी में आरूढ़ हो, महा परिक्रमा करके तिरुवीथियों के उत्सव से श्रीवराहस्वामी के पुरोभागीय मण्डप में विराजमान होंगे। वहाँ उनका अभिषेक तथा स्वामि पुष्करिणी में स्नान किया जायेगा। तदनन्तर पुष्पादि से अलंकार करने के बाद भोग लगाया जाताहै। एकांगी का सम्मान करने के बाद, श्री आल्वार श्रीस्वामी की सन्निधि में पधारेंगे। वहाँ अनन्त पद्मनाभ व्रत संबंधी रेश्मी तोरण श्री स्वामी को समर्पित करते हैं। इन तोरणों का वहाँ के अर्चक, एकांगी और अधिकारी-गण सब धारण करते हैं। पद्मनाभ व्रत की विशेषता यही है।

२३. ब्रह्मोत्सव

श्री वेंकटाद्रि निलयः कमलाकामुकः पुमान्
अभंगुर विभूतिर्न स्तरंगयतु मंगलम् ।

अखिलाण्डकोटि ब्रह्माण्डनायक भक्तजन कामितार्थ प्रदाता श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चावतार में श्री शेष पर्वत पर विराजमान हैं। उनका

ब्रह्मोत्सव प्रतिवर्ष आश्वयुज मास के शुक्ल-पक्ष में प्रारम्भ होता है । यह उत्सव नौ दिनों का विशेष पर्व है। अंकुरार्पण के परदिन ध्वजारोहण होगा। अंकुरार्पण के दिन कीं सायं को सेनाधिपति विष्वक्सेन का चतुर्वीथियों का उत्सव मनाया जाता है। मृत्तिका संग्रहण भी होगा। मंदिर की यागशाला में अंकुरार्पण का कार्य चलेगा। प्रथम दिन की सायं को ध्वजारोहण मनाया जाता है। द्वितीय दिन की सुबह और रात के समय दो निर्णीत वाहनों में श्री स्वामी का उत्सव मनाया जाता है। इसी का नाम ब्रह्मोत्सव है। विशेषता यह है कि तीन सालों में एक बार चान्द्रमास की गणना के अनुसार अधिक-मास आता है। ऐसे संदर्भ में ब्रह्मोत्सव दो बार मनाया जाता है। प्रथम ब्रह्मोत्सव को साधारण रीति से मनाया जाता है। द्वितीय ब्रह्मोत्सव को रथ और ध्वजारोहण के बिना मनाया जाता है। दशहरे के उत्सवों में प्रतिदिन दोनों वक्त (दिन और रात) रंगमण्डप में स्थित बृहत शेषवाहन पर श्रीमलयप्प तथा उभय देवेरियों को उत्सव के अनन्तर वाहन पर विराजमान करके आस्थान चलाया जाता है।

भविष्योत्तर-पुराण में श्री श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव का कथन इस प्रकार है – प्रप्रथम ब्रह्मदेव ने उत्सव मनाने के लिए महर्षियों, महाराजाओं और भक्तों को आह्वान किया था। इस दिन से वेंकटाद्रि अतिथियों, भक्तों और चतुरंग-बलों से भरा रहता था। द्वितीय दिन को रत्नमय नरयान (मनुष्यों अथवा सेवकों से खींचे जानेवाला) पर श्री श्रीनिवासजी को विराजमान करके चैत्य-परिक्रमा के उपरान्त ध्वजारोहण कराया जाता था। ब्रह्मोत्सव में वाहनों का विवरण–

प्रथम दिन		- पल्लकी
	सुबह	- ध्वजारोहण
	रात में	- महा शेष वाहन
द्वितीय दिन	सुबह	- लघु शेष वाहन
	रात में	- हंस वाहन

तृतीय दिन	सुबह	- सिंह वाहन
	रात में	- मौक्ति-मण्डप का रथ (वाहन)
चतुर्थ दिन	सुबह	- कल्पवृक्ष वाहन
	रात में	- सर्वभूपाल वाहन
पंचम दिन -	सुबह	- पल्लकी (मोहिनी अवतार में अमृत वितरण)
	रात में	- गरुड वाहन
षष्ठम दिन	सुबह	- हनुमद्वाहन
	सायंकाल -	वसन्तोत्सव (देवेरियों सहित श्रीस्वामी वसंतोत्सव के अनुराग से रथरंगडोलोत्सव)
	रात में	- गजवाहन
सप्तम दिन	सुबह	- सूर्य-प्रभा वाहन
	सायंकाल -	मंगलगिरि वाहन (उद्यान विहारानुराग के लिए)
	रात में	- चन्द्रप्रभा वाहन
अष्टम दिन	सुबह	- रथ वाहन (मनोहर अलंकारों से युक्त)
	रात में	- अश्व वाहन
नवम दिन	आंदोलिका	- मंगलगिरि वाहन इस वाहन में श्री स्वामी अवभृथ स्नान के पहले हरिद्रा से अभिषिक्त होते हैं।
	रात में	- मंगलगिरि वाहन (ध्वज का अवरोहण)
परदिन(दसंवाँ दिन)		- पुष्पयाग महोत्सव

इस प्रकार ब्रह्मा ने श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के उत्सव को एकादश दिन मनाया था। इसी कारण ब्रह्मा के नाम पर इन उत्सवों को ब्रह्मोत्सव कहते हैं। इसका प्रमाण यही है कि इन उत्सवों में प्रतिदिन 'ब्रह्मरथ' नामक एक नानालंकारओं से अलंकृत रथ शोभा-यात्रा में सब से आगे निकलता है।

आगम शास्त्र – इस शास्त्र का कथन है कि नवम् संख्या ब्रह्म संख्या है। अतः नौ दिन मनाने से सर्वकामना-प्रद ब्रह्मोत्सव है।

सांप्रदायिकों के मत के अनुसार यह सर्वेश्वर का उत्सव है; अतः ब्रह्मोत्सव है। कुछ वर्षों से ब्रह्मोत्सव के परदिन पुष्प-याग महोत्सव नहीं मनाया जा रहा है। उसके लिए अलग से विशेष दिन निर्धारित किया गया है।

२४. डोलोत्सव (ऊँजल सेवा)

समस्त भुवनों के प्राणियों के संरक्षणार्थ तिरुमलगिरि पर विराजमान अर्चावतारी श्री वेंकटेश्वर स्वामी का डोलोत्सव प्रति-वर्ष कन्या मास में, नहीं तो आश्वयुज के नवरात्रों में मनाया जाता है। ब्रह्मोत्सव के समय रात में वाहनोत्सव के पहले यह उत्सव मनाया जाता है। आलय के पुरोभाग में प्राची-दिशा में डोला मण्डप है। उत्सव मलयप्प स्वामी (श्रीनिवास) उभय देवेरियों सहित रत्नाभरण कौशेयादि अलंकारों से तथा सुगन्धित पुष्प-मालाओं से सज्जित होकर डोलोविहार करते हैं। पूर्वी और दक्षिणी वीथियों में और सैकडों सोपानों पर बैठकर भक्त-जन लीला-रसास्वादनाकाँक्षी देवेरियों के उल्लास तथा भक्त-जनों को रंजित करने के लिए श्रीस्वामी मन्द्र-गति से झूले में झूलते हैं, तो भक्त-जन आनंदविभोर हो देखते हैं। शास्त्रों का कथन है कि इस डोलोत्सव-दर्शन से श्रद्धा भक्ति की पराकाष्ठ को भक्तजन प्राप्त करेंगे और उनकी अभीष्ट सिद्धि भी होगी।

२५. विजयदशमी पार्वेट उत्सव

अखिल भुवनों का सम्राट जो तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी हैं, उनका प्रतिवर्ष विजयादशमी के दिन यह 'पार्वेट' उत्सव मनाया जाता है।

श्री स्वामी की प्रातःकालीन और माध्याह्निक आराधना के उपरान्त पल्लकी पर श्री मलयप्प स्वामी आरूढ़ होंगे। उनका अमूल्य आभरणों, वस्त्रों

और पुष्पमालाओं से अलंकार किया जाता है। आरति दी जाने के बाद स्वामी ताल्लपाक-पार्वेट मंडप में पधारेंगे। श्री स्वामी की आराधना के उपरान्त भोग लगाया जायेगा। ताल्लपाक के वंशज भी इस संदर्भ में स्वामी को आरति देते हैं। इनका सम्मान किया जाता है। गोष्ठि का स्थान-सम्मान भी होगा। इससे पार्वेट का उत्सव समाप्त होगा। श्रीस्वामी महाद्वार के पास पधारेंगे। वहाँ श्री हथीरामजी के मठ की ओर से मठवासी स्वामी को विशेष आरति देते हैं। वहाँ से तिरुवीथियों के उत्सव में निकलते हैं। समस्त परिवार सहित उत्सव को पूरा करके महाद्वार पर पधारेंगे और श्री स्वामी की सन्निधि में अपने स्थान पर विराजमान होंगे।

२६. दीवाली का आस्थानोत्सव

चराचर जगत का नियन्ता भक्तजन आश्रितवत्सल श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चारूप में श्रीशेषशैल पर विराजमान हैं। दीवाली के दिन प्रति-वर्ष आश्वयुज बहुळ अमावास्या (कार्तिक मास का प्रारंभिक दिन) को विशेष आस्थान श्री स्वामी के समक्ष मनाया जाता है। श्री स्वामी की प्रातःकालीन आराधना के उपरान्त उभय देवेरियों सहित उत्सव मूर्ति श्री मलयप्पा स्वर्ण-द्वार के पुरोभागीय आस्थान-मण्डप में सर्वभूपाल वाहन में विराजमान होंगे। अमूल्य वस्त्राभरणों से तथा सुगन्धित पुष्प-मालाओं से उनका अलंकारण किया जाता है। उत्सव स्वामी की माध्याह्निक आराधना आस्थान में होगी। आस्थान के परिचारक प्रसाद को अपने सिरों पर धरते हैं। जिय्यंगार सरकारी अधिकारियों सहित श्वेत-छत्रों से मंगल वादनों से आनन्द-निलय विमान की परिक्रमा करके ध्वजस्तम्भ की भी परिक्रमा करने के बाद आस्थान में आते हैं। इस समय माध्याह्निक भोग लगायी जाती है। तदनन्तर आलय के अधिकारी श्री बालाजी को नूतन-वस्त्र समर्पण करते हैं। उन्हें जिय्यंगार अपने सिर पर धरकर श्वेत छत्र और मंगल-वादन सहित विमान की परिक्रमा और ध्वजस्तम्भ की भी परिक्रमा करते हुए श्रीस्वामी की सन्निधि में गर्भालय में जाते हैं। वहाँ श्री वेंकटेश्वर स्वामी को श्रद्धा-भक्ति से किरीट-वस्त्र,

कठारि-वस्त्र, उत्तरीय आदि तोमाल – इन चारों को दीक्षित के द्वारा समर्पण करते हैं। गोष्ठि में तीर्थ और चंदन का वितरण होगा। उन वस्त्रों में से दो वस्त्र चाँदी की थाली में रखे अपने सिर पर धरते हैं। श्री मलयप्प स्वामी की सन्निधि में आता है। वहाँ श्री मलयप्प को एक नूतन वस्त्र तथा सेनाधिपति (विष्वक्सेन) को एक वस्त्र दीक्षित द्वारा समर्पण किया जाता है। इसके उपरान्त श्री मलयप्प स्वामी का अक्षतारोपण होता है। श्री सेनाधिपति और अर्चकों का सम्मान होता है। आस्थान में मात्रा-दान के बाद आरति दी जाती है। तदनन्तर श्री जिय्यंगार सरकारी अधिकारी का सम्मान तथा गोष्ठी में प्रसाद का वितरण होता है। अब श्री स्वामी अपने स्थान पर विराजमान होते हैं।

२७. चक्रतीर्थ मुक्कोटि उत्सव

समस्त भुवनों का नियन्ता श्री वेंकटेश्वर जो शेषपर्वत पर अर्चावतार में विराजमान हैं, उनके सन्निधान में वृश्चिक मास में शुद्ध द्वादशी दिन मुक्कोटि उत्सव मनाया जाता है। यह उत्सव चक्रतीर्थ नामक तीर्थ स्थान पर मनाया जाता है, जो सन्निधान से कुछ दूरी पर स्थित है।

इस दिन श्री स्वामी की प्रातःकालीन एवं माध्याह्निकाराधना के बाद अर्चक, एकांगी, परिचारक, अधिकारी-गण, पाचक-बृन्द, भक्त-जन, यात्री सब मंगलवाद्यों सहित मंदिर से निकलकर महापरिक्रमा के रूप में चक्र-तीर्थ को जाते हैं। वहाँ विराजमान श्री चक्रत्तालवार, श्रीनृसिंहस्वामी और श्री हनुमान का अभिषेक पुष्पमालालंकार, आराधना के उपरान्त भोग लगायी जाती है। आरति देने के बाद गोष्ठि में प्रसाद का वितरण होगा। तदुपरान्त सब मंगल-वाद्यों सहित मंदिर वापस आते हैं।

इस चक्रतीर्थ के बारे में स्कन्द-पुराण का कथन इस प्रकार है – प्राचीन काल में श्रीवत्स गोत्रज, जितेन्द्रिय और करुणालु श्री पद्मनाभ महर्षि ने इस चक्रतीर्थ के तट पर द्वादश वर्षों तक तपस्या की थी। तपस्या इतनी तीव्र थी कि कुछ दिन अल्पाहार, कुछ दिन जलाहार तथा और कुछ दिन वायु-भक्षण

से भगवान की तपस्या की थी। इस तपस्या से संतुष्ट होकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने शंख चक्रादि दिव्याभरणों से महर्षि को दर्शन दिया और आशीर्वाद दिया कि इस कल्प के अंत तक इस चक्र-तीर्थ पर मेरी उपासना करते रहो। इस प्रकार का वर देकर स्वामी अन्तर्हित हो गए।

स्वामी की आज्ञा के अनुसार चक्रतीर्थ पर पद्मनाभ महर्षि तपस्या करता रहा। एक दिन एक राक्षस महर्षि का भक्षण करने सामने आया। भयकम्पित होकर महर्षि ने श्रीस्वामी से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की। तत्क्षण स्वामी ने अपने चक्रायुध को भेजा। चक्रायुध ने उस दुष्ट राक्षस के सिर को खण्डित कर दिया। महर्षि भी राक्षस के भय से मुक्त हो गया। तदुपरान्त महर्षि ने चक्रायुध की स्तुति की और प्रार्थना करते हुए कहा – 'हे चक्र राजन्! तुम भक्तों की रक्षा करने के लिए इस तीर्थ में प्रवेश करो'। चक्रायुध ने महर्षि की प्रार्थना के अनुसार किया। तभी से इस तीर्थ का नाम 'चक्रतीर्थ' हो गया है। इस तीर्थ में भूतादि से पीडित लोग स्नान करने से स्वस्थ हो जायेंगे।

२८. कैशिक द्वादशी आस्थानोत्सव

अखिल जगत का रक्षण-दक्ष श्री वेंकटेश्वर स्वामी वृषाद्रि पर अर्चावतार में चेतन-जीवियों के उद्धार करने के लिए अवतरित हुए हैं। उनके सन्निधान में प्रति-वर्ष कार्तिक-मास के शुद्ध द्वादशी दिन (क्षीराब्दि द्वादशी) को उत्सव मनाया जाता है।

श्री स्वामी के प्रातःकाल की आराधना के उपरान्त अपरावतारी श्री श्रीनिवास स्वामी उभय देवेरियों सहित स्वार्ण चौकोर पर आरूढ़ होंगे। अमूल्य आभरणों तथा पुष्प मालाओं से उनका अलंकरण किया जायगा। अरुणोदय में आनंदनिलय विमान की परिक्रमा के अनन्तर चतुर्वीथियों के उत्सव मनाने जाएंगे। समस्त परिवार सहित उत्सव पूरा करके सूर्योदय के पहले ही आस्थान मण्डप के निकट सर्वभूपाल वाहन में विराजमान होते हैं। श्री स्वामी की

हंस वाहन पर श्री वेंकटेश्वर स्वामी

श्रीहंसे सुखमासीनं
श्रियःपतिमजं विभुं ।
क्षीरवत्पुण्यमादृत्य
रक्षन्तं तं भजाम्यहं ।

आराधना के बाद भोग लगाया जायगा। इसके उपरान्त कैशिक द्वादशी आस्थान प्रारम्भ होगा। श्री स्वामी का अक्षतारोपण होगा। तदनन्तर श्री बालाजी के कमल-चरणों पर रखे गए 'कैशिक पुराण' ग्रन्थ कोटिकन्याकादान वंशज को परिवेष्ठन बाँधकर देंगे, वे उस पुराण का पठन करेंगे। पुराण श्रवण से भक्त-जन आनंदविभोर हो जायेंगे। पुराण पठन के पूरा होते ही पौराणिक का सम्मान किया जायगा। इसके उपरान्त पंचमुखों की भी 'कोलुवु' (उपासना) के बाद आरति दी जायगी। अस्थान सम्मान के रूप में श्री स्वामी का प्रसाद दिया जायगा तथा जिय्यंगार और सरकारी अधिकारियों का विशेष सम्मान भी होगा। इस कार्य के बाद श्री ताताचार्य का भी सम्मान स्वामी के समक्ष में किया जायगा। श्री ताताचार्य को अपने स्थान पर भेज देने के बाद श्री स्वामी भी सन्निधान में विराजमान होंगे।

२९. कार्तीक दीपोत्सव

आपद्बान्धव, अनाथरक्षक श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चावतार में आनंदाद्रि नामक तिरुमल गिरि पर विराजमान हैं। पुराणों में आनन्दाद्रि नाम से विख्यात इस तिरुमल गिरि पर अर्चावतारी भगवान श्री बालाजी के सन्निधान में मानुषानंद तथा दैवानंद भी प्राप्त होता है। प्रति वर्ष कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन श्री स्वामी की सन्निधि में दीपों का वैभवपूर्ण उत्सव मनाया जाता है।

इस पर्व दिन में श्री स्वामी की सायंकालीन आराधना में तोमाल अर्चना और नैवेद्य का समर्पण होगा। श्री भाष्यकार को भी भोग लगाया जायेगा। तदनन्तर दीपोत्सव प्रारम्भ होता है।

आलय के प्रथम-प्राकार की ईशान्य दिशा में स्थित 'परिमल अरा' (सुगन्ध द्रव्यों का कमरा) के पास अधिकारीगण, जिय्यंगार बृन्द, एकांगी, परिचारक सभी एकत्रित होंगे। वहाँ परिचारकों द्वारा दीपों का ज्वलन करने के लिए गणना के अनुसार तैयार रखे जाते हैं – घी से भिगोयी गयी बत्तियाँ

इस गणने से रखी जाती है। बत्तियाँ कपास की होती हैं। मिट्टी से बनायी गयी ३५ कुंडियाँ मिट्टी से बने ढक्कन जैसे गोल-पात्र, ३५ डेगिसा के आकार में मिट्टी से बने अरकं-चट्टियाँ ३० (तीस) – कुल १०० सौ दीप-पात्र तैयार रखे जाते हैं। श्री जिय्यर महाशय इन दीपों का ज्वलन करेंगे।

इन दीप पात्रों को जिय्यंगार बृन्द, पारुपत्यदार, अधिकारी गण और भक्त जन भी भक्ति और श्रद्धा से अपने हाथों में लेते हैं। सब मिलकर मंगल वाद्यों से, पंचमुख देवता मूर्तियों से श्वेत छत्रों तथा चाँदी के दण्डों से, चामरों से ध्वज परिक्रमा और विमान परिक्रमा करते हुए श्री बालाजी की सन्निधि में आयेंगे, जो प्रेक्षक अथवा भक्त आलय में दीपोत्सव नहीं देख सकते, वे आस्थान मण्डप के पार्श्वों में खडे आनंदोत्साह से दर्शन कर सकते हैं।

गर्भालय में अर्चक श्री स्वामी के सन्निधान में पुण्याहवाचन करेगा। दीप पात्रों को साफ करके पाँच दीप पात्रों को (मिट्टी के दीप पात्र) क्रमशः लेकर मन्त्रों तथा दिव्य पाशुरों का गान करते हुए आरति देंगे।

इन शत दीपों को निम्नलिखित स्थानों पर रखेंगे। दीप समूह को एक-एक स्थान पर एक दीप रखा जाता है, जो इस प्रकार है–

१.ब्रह्माण्डम् २. कुलशेखरपडि ३. श्रीरामजी का मेडै ४. स्वर्णद्वार ५. द्वारपालकों के पास ६. गरुडाल्वार ७. विमान गरुडाल्वार सन्निधि ८. श्रीवरदराज स्वामी सन्निधि ९. वकुल माताजी (जो पाकशाला में है) १०. कनक-कूप ११. कल्याण मण्डप १२. कोशगार कोठडी १३ परकाल कमरा १४. वाहन कक्ष १५.रिकार्ड कमरा १६. कैकाल कमरा १७. वगपडि १८. ताल्लपाक कमरा १९. तोट्टि तीर्थ २०. श्री सेनाधिपति २१. सभा प्रांगण २२. श्री भाष्यकारजी की सन्निधि २३. शयन तल्प (पलंग का कमरा) २४. चन्दन कमरा २५. श्री नृसिंह स्वामी सन्निधि २६. परिमल द्रव्यों का कक्ष २७. मध्य पडिकावलि २८. ध्वजस्तम्भ २९. बलिपीठ ३०. तिरुमलराय मण्डप ३१.रथ के चित्र रखने का कक्ष ३२. उग्राणं (पाकसामग्री कक्ष)

३३. पडिपोटु (पाकशाला) ३४. आटा रखने का कक्ष (पिष्ट कक्ष) ३५. फूलों का कूप ३६. यमुनोत्तर ३७. क्षेत्रपालक ३८. रंगनायक मण्डप ३९. महाद्वार ४०. वृद्ध स्वामीजी ४१. युवक स्वामीजी ४२. एकांगियों को ४३. अर्चक महाशयों को ४४. ब्रह्मतन्त्रकों को ४५. गमेकार को ४६. मार्ग में स्थित भाष्यकारों को ४७. गोगर्भ क्षेत्रपालक ४८. बेडि हनुमानजी ४९. पुष्करिणी तट हनुमानजी ५०.श्री वराहस्वामी ५१ भाष्यकारों को ५२. श्री स्वामी पुष्करिणि – इस प्रकार स्थानों के दीप – ५२ हैं। श्री स्वामी के विमान के निकट रखे गए मिट्टी कुण्डियों के पाँच दीपों को अर्चक, एकांगी और ग्वालवान ही विमान पर ले जा रखेंगे। तदनन्तर मंगल वाद्यों सहित सब परिवार अर्चक महाशय, एकांगी, देवालयाधिकारी विमान परिक्रमा करते हुए संपंगि प्राकार की परिक्रमा से श्री वराह स्वामी की सन्निधि में आयेंगे। वहाँ अर्चक महाशय, एकांगी और अधिकारी मंदिर के अंदर जाकर दो बडी मिट्टी कुंडियों के दीपों से स्वामी की आरति उतारकर उनके सन्निधान में वे दीप रखे जाते हैं। श्री स्वामी पुष्करिणि में अधोभाग पर चौडाई से बने मिट्टी के अरकंचट्टियों का दीप समर्पण करते हैं।

श्री जिय्यंगार दीप-ज्वलन करते हैं। तत्क्षण स्वर्ण-द्वार पर विमान परिक्रमा के दोनों पार्श्वों पर, ध्वज के दोनों पार्श्वों पर पडिकावलि (प्रधान सीढ़ियाँ) पर घी पूर्ण छे सौ दीपों को रखते हैं। इस प्रकार इस पर्व में सात सौ दीपों की आराधना की जाती है। इन दीपावलियों की संख्या का संकेतार्थ दार्शनिक महात्मा इस प्रकार विवरण करते हैं – श्री महाभारत (पंचम वेद) के मध्य भीष्म पर्व में अज्ञान से जीवों को निवृत्त करने के लिए गीताचार्य श्रीकृष्ण परमात्माने प्रबोधानुरक्त होकर (अर्जुन के मिष से) सात सौ गीता के श्लोकों में अपना परतत्त्व गंभीर रूप से अभिव्यक्त किया है। इस तत्त्व के सांकेतिक रूप में सात सौ दीप-ज्योतियों से श्री वेंकटेश्वर स्वामी मौन मुद्रानुरक्त हुए आत्मतत्त्व का बोध करते हैं। कार्तिक मास का अंधकार भी दूर होता है और कृष्णावतार का तत्त्व भी प्रकाशमान होता है।

इस प्रकार ज्वलित ज्योतियों को नियमित स्थानों पर रखने के बाद सब सुगन्ध-द्रव्यों के परिमल अरा (कमरा) में जाते हैं। वहाँ से तैल-पात्र को श्री जिय्यंगार लेकर विमान परिक्रमा से श्री स्वामी की सन्निधि में जायेंगे। वहाँ अर्चक इस तैल को स्वामी के पादाब्जों में समर्पित करते हैं। शेष तैल को लेकर मंगलवाद्यों के साथ श्री भाष्यकार महाशय को समर्पित करते हैं। पात्र में शेष तैल को गोष्ठि में सम्मान के रूप में दिया जाता है।

श्री स्वामी को जो अप्पंपडि (मधुर पकावन) समर्पित किया गया था, उसे श्री भाष्यकार को भी निवेदित करते हैं। तदनन्तर श्री भाष्यकार की सन्निधि से उस 'प्रसाद' को मंगल वाद्य सहित श्री जिय्यंगार के मठ में भिजवाया जाता है।

कार्तिक पर्व का वैभव इस प्रकार समाप्त होता है।

३०. दीपावली का दीपोत्सव

श्रियःपति श्रीनिवास अवाप्त समस्त कामनाओं का प्रदाता, वरहाद्रि नाम से विख्यात तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में विद्यमान हैं। प्रतिवर्ष स्वामी की सन्निधि में आश्वयुज के बहुल अमावाश्या के दिन दीपावली का दीपोत्सव मनाया जाता है।

श्री स्वामी की सायंकालीन आराधना के पूर्व इन स्थानों पर दीप ज्योतियाँ रखी जाती हैं – विमान परिक्रमा के दोनों पार्श्वों में, कल्याण मण्डप में, रंग मण्डप में, ध्वजस्तम्भ के दोनों पार्श्वों में, पडिकावलि के पार्श्व में, श्री वराह स्वामी की सन्निधि में अनेक तैल दीप रखे जाते हैं। दीपों की आराधना भी होती है। श्री वेंकटेश्वर तथा श्री वराह स्वामी की सन्निधि में दीपों की अनेक पंक्तियाँ ऐसा देदीप्य होती हैं कि मानों अमावास्या पूर्णिमा में परिवर्तित हो गयी हो। भक्तजनों तथा प्रेक्षकों को यह नेत्रानंद पर्व है।

दीप्तिमान श्री वराहस्वामी ऐसे विचारों से व्यस्त हुए दीखते हैं कि मेरे सान्निध्य में विराजमान श्री वेंकटेश्वर दीप समूहों से मुझे भी प्रकाशमान करते

हैं और अपने ब्रह्मोत्सव की समाप्ति में मेरे समक्ष अवभृथ करते हुए अपनी कृतज्ञता मेरे प्रति व्यक्त करते हैं। वराहस्वामी ऐसा दीखते हैं कि मानों श्रीनिवास के इस कृतज्ञता-ज्ञापन से आनंद हुए हों।

इसके उपरान्त श्री स्वामी की सन्निधि में सायंकालीन आराधना प्रारम्भ होगी। सर्व उपचारों से उस दिन का निवेदन समाप्त होगा।

३१. धनुर्मास का प्रारम्भोत्सव

समस्त लोकों का शरण्य, आश्रित भक्तों का कल्पतरु, शेष-पर्वत पर अर्चावतार में श्री वेंकटेश्वर विराजमान हैं। प्रति वर्ष धनुर्मास का प्रारम्भ उत्सव के समान मनाया जाता है।

उषःकाल पूर्व अर्चक महाशय, जिय्यंगार बृन्द, एकांगी, परिचारक, श्री वैष्णव स्वामी, भागवतोत्तम आदि सुप्रभात स्तोत्र पाठ करने के लिए विमान परिक्रमा करते हुए स्वर्ण-द्वार के पुरोभाग में पहुँचेंगे। अर्चक महाशय सुप्रभात-स्तोत्र गान करता रहता है; ग्वाल ताला खोलकर कवाट खोलता है। सब श्री स्वामी की सन्निधि में विद्यमान रहते हैं। श्री वैष्णव महाशय प्रतिदिन के सुप्रभात स्तोत्र के स्थान पर द्रविड-भाषा में 'तिरुप्पळ्ळि एलुच्चि (श्री तोण्डरडिप्पोडि आल्वार से रचित) तथा दिव्य प्रबन्ध पाशुरों का पठन करते हैं। उपरान्त श्री स्वामी की आराधना प्रारम्भ होती है। इस समय मिराशीदार श्री वेंकटेश्वर सहस्रनामों का पठन करता है और अर्चक बिल्व-दल का संसार सागर समुत्तरणैक सेतु रूपा श्रीस्वामी के पादाब्जों पर भक्ति समन्वित हो अर्पण करता है। भोग लगाते समय प्रति-नित्य के प्रसादों के स्थान पर धनुर्मास में प्रयुक्त विशेष प्रसादों का नैवेद्य रखा जाता है। इसके बाद शात्तुमोरा नामक जो मंगलाशासन होता है, वह बहुत प्रभावपूर्ण होता है। श्रीकृष्ण के प्रति गोपिकाओं ने जो धनुर्मास-व्रत किया था, उसी व्रत को कृष्ण-प्रिया भक्तिन श्री गोदादेवी ने भी किया था और उसमें भक्ति की तन्मयता के कारण हृदय के जो उद्गार फूट पड़े थे, उनको पाशुरों के रूप में कृष्ण भक्ति

में लीन हो गया था। अतः उस भक्तिन के ही प्रख्यात ग्रन्थ 'तिरुप्पावै' के तीस पाशुरों से प्रथम पाशुर का पठन करते मंगलाशासन को पूरा करेंगे। श्रीस्वामी को प्रसाद समर्पित किया जाता है। 'पोंगल' (चावल और मूंगदाल घी मिश्रित मधुरान्न) प्रसाद श्री भाष्यकारजी को समर्पित करने के बाद गोष्ठि में वितरण किया जाता है। एकान्त सेवा के समय गोदादेवी ने द्वापर अंत में भगवत्प्रेम की अतिशयता से भक्तों का उद्धार इस व्रत से करने का शपथ करके चरम संदेश दिया। ऐसी भक्तिन् आण्डल का प्रिय सखा श्रीकृष्ण का अभिषेक उष्णोदक से किया जाता है। स्वामी का अलंकार करके शयनासन में विराजमान करते हैं। धनुर्मास के तीस दिनों में इसी प्रकार की सेवा की जाती है। प्रतिदिन एक-एक पाशुरम् का पठन मंगलाशासन (शात्तुमोरा) करते हैं। श्रीकृष्णदेव का शयनासन प्रबंध इस मास की विशेषता है। सुप्रभात में श्री गोदादेवी से विरचित पाशुरों का पठन तथा श्री वेंकटेश्वर सहस्रनामार्चन में बिल्व-पत्र पूजा इस आलय में धनुर्मास की विशेष पूजा मानी जाती है। साथ-साथ भाष्यकारों की सन्निधि में भी अर्चना, शेष-भोग का समर्पण किया जाता है।

३२. अध्ययनोत्सव

प्रपन्न पारिजात कल्याण-गुण संपन्न श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चावतार वेदगिरि पर विद्यमान होकर आर्त-जन संरक्षण करते हैं। श्री स्वामी के सान्निध्य प्रति-वर्ष धनुर्मास में श्री वैकुण्ठ एकादशी पर्व के पूर्व दिनों तथा पर दिनों में दिव्य प्रबन्धाध्यनोत्सव मनाया जाता है।

यह अध्ययनोत्सव वैकुण्ठ-एकादशी के पहले ग्यारह दिनों से प्रारम्भ होता है। प्रारम्भिक दिन श्री स्वामी की सायंकालानाराधना में 'दोसपडि' (चावल की आटा से बना पतली रोटी) का भोग लगाने के उपरान्त श्री मलयप्प स्वामी उभय देवेरियों सहित मंदिर के दक्षिणी-भाग के कल्याणमण्डप में पधारते हैं। वहाँ सिंहासन पूर्वी-मुखी होता है, जिसका अलंकार करते हैं।

श्री सेनाधिपति दक्षिणाभिमुखी हो पृष्ठभाग की वेदी पर विराजमान होते हैं। श्री बालाजी की सन्निधि में शात्तुमोरा होने के उपरान्त श्री भाष्यकार आलय से श्वेत छत्र, चामर आदि से कल्याणमण्डप में दूसरा सिंहासन अलंकृत करते हैं। श्रीस्वामी के समस्त-परिवार स्वर्ण-द्वार पर ताला लगाकर तालों के गुच्छ को श्रीसेनापतिजी के सुपुर्द करते हैं। सबको निवेदन (प्रसाद) समर्पण करते हैं। श्री सेनाधिपति और भाष्यकार भी तिरुपरिपट्टं (पवित्र वस्त्र) से सम्मान करते हैं। तदुपरान्त दिव्य प्रबंधाध्ययन प्रारम्भ होता है। समप्ति में श्री मलयप्प स्वामी को आरति दी जाती है और श्री सेनाधिपति को पुष्पमालांकृत करते हैं। श्री भाष्यकार का भी पुष्पमालादि से सम्मान होता है। उपरान्त श्री जिय्यंगार-बृन्द का, अधिकारियों का सम्मान होने के बाद गोष्ठि में चंदन ताम्बूल दिये जाते हैं। श्री मलयप्प श्री भूदेवी और सेनाधिपती कल्याण-मण्डप में ही विराजमान होते हैं। भाष्यकारजी आलय में श्वेत-छत्रादि से सम्मानित होते हुए आलय में जाते हैं। इस कार्य के अनन्तर स्वर्ण-द्वार खुल जाता है तथा प्रति-रात्रि के उपचारों से उस दिन का अध्ययन समाप्त होता है। इसी क्रम से दस दिनों तक दिव्य प्रबन्धाध्यन के अनन्तर ग्यारहवाँ पगल्पत्तु और लघु शात्तुमोर होगा। इस प्रकार तेईस हजारों पाशुरों का दिव्य प्रबंध से पठन किया जाता है। दस दिनों के बाद वैकुण्ठ एकादशी के दिन दिव्य प्रबंधाध्ययन रापत्तु प्रारम्भ होगा। वेदपारायण का भी प्रारम्भ होता है। दिव्य प्रबंधाध्ययन पाँच दिनों तक होता है। षष्टम दिन श्री स्वामी तथा उभय देवेरियों का प्रणय कलहोत्सव होता है। इसके अनन्तर चार दिनों तक प्रबंधाध्ययन होता है। इस प्रकार दस दिनों में सहस्र पाशुरों का संपूर्ण अध्ययन पूरा होता है। दसवें दिन शात्तुमोरा होता है।

३३. श्री वैकुण्ठ एकादशी उत्सव

समस्त चराचर जगन्नियन्ता श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चावतार में तिरूमल गिरि पर विराजमान हैं। धनुर्मास के शुद्ध एकादशी के दिन उनका जो उत्सव मनाया जाता है, उसे मुक्कोटि-एकादशी कहते हैं।

श्रीस्वामी की प्रातःकालीनाराधना के उपरान्त कल्याणमण्डप में श्री मलयप्प स्वामी वज्रकवचादि अमूल्याभरणों से अलंकृत होकर स्वर्ण-पालकी में उत्तराभिमुखि हो प्रवेश करते हैं। इसी समय मुक्कोटि एकादशी का विशेष आस्थान होता है। श्री स्वामी की आराधना और तलिय-निवेदन (चावल की आटा और गुड मिश्रित भक्ष्य) के बाद गोष्ठि का सम्मान होता है। श्री स्वामी अपने समस्त परिवार तथा मंगल वाद्यों सहित तिरुवीथियों के उत्सव में निकलते हैं। इस उत्सव के बाद कल्याण-मण्डप में पधारते हैं। इस दिन अरुणोदय में ही वैकुण्ठ के द्वार खोले जाते हैं। (वैकुण्ठ के द्वार आलय के बृहद् घंटाओं को पारकर बाहर आने से दक्षिणी-ओर के कोने में देखे जाते हैं।)

३४. श्री स्वामि पुष्करिणी तीर्थ मुक्कोटि एकादशी (स्वामि-पुष्करिणी में तीन करोड तीर्थों का संगम)

अपार करुणान्तरंग सकल कामना-प्रदाता श्री वेंकटेश्वर अर्चावतार में श्री शेषाद्रि पर विराजमान हैं। श्री स्वामी मंदिर के ईशान्य-भाग में तीर्थराज श्री स्वामि पुष्करिणी विद्यमान है। प्रतिवर्ष धनुर्मास के शुक्ल-पक्ष द्वादशी के दिन अरुणोदय के समय भुवन-त्रय में प्रसिद्ध पुण्य-तीर्थ, जो तीन करोड और पचास लाख हैं, वे सब इस पुष्करिणी में आ मिलते हैं। उन तीर्थों में जो लोग अपने पाप-विमोचन के लिए स्नान करते हैं, उन पापों का प्रक्षालन करने के लिए सब के सब तीर्थ इस तीर्थ-राज स्वामी पुष्करिणी में संगम होने आते हैं। अतः इस दिन अरुणोदय के शुभ-समय में इस पुष्करिणी में स्नान करके जो पुण्यात्मा दान, जप, होम आदि धर्माचरण करते हैं, उसे मेरुश्रृंगाग्र में, कैलास में, मंदिर-पर्वत पर, पाताल के द्वीपों में स्नान, षोडश-महादान करने से प्राप्त फल इस पुष्करिणी-स्नान से प्राप्त होता है। समस्त तीर्थों का स्वामी होने से इसे स्वामि पुष्करिणी कहते हैं। इसमें स्नान करके आश्रित वात्सल्य जलधि श्री वेंकटेश्वर का दर्शन, तीर्थ और प्रसाद जो पाता है, उस

पुण्यवान को समस्त अभीष्टों की सिद्धि के साथ चरम पुरुषार्थ की भी सिद्धि होती है। इस प्रकार वामन-पुराण स्पष्ट करता है।

३५. पार्वेट उत्सव (स्वामि के शिकार खेलने का उत्सव)

जगन्नियमन लीला-रसिक तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में श्री वेंकटेश्वर विराजमान हैं। प्रतिवर्ष मकर संक्रमण के पर-दिन 'पार्वेट-उत्सव' मानाया जाता है। (पार्वेट का अर्थ शिकार खेलना है) श्रीस्वामी की प्रातःकालीन तथा माध्याह्निकाराधना के अनन्तर श्री मलयप्प स्वामी रजत की पालकी में विराजमान होते हैं। दूसरी पालकी में श्रीकृष्ण (उत्सव मूर्ति) भी विराजमान होते हैं। परिक्रमा किए बिना पार्वेट-मण्डप में पधारते हैं। इस मण्डप में पुण्याह करने के बाद मण्डप के मंच पर पधारेंगे। श्री स्वामी की आराधना के उपरान्त दोनों को आरति दी जाती है। ताल्लपाक वंशजों का, हथीरामजी मठ के महानुभावों का सम्मान होता है और गोष्ठि का स्थान सम्मान होता है। इसके उपरान्त श्री मलयप्प और श्रीकृष्ण दोनों मण्डप से प्रांगण में पधारते हैं। श्रीकृष्ण को पालकी में उस पवित्र-स्थान पर ले जाते हैं, जहाँ प्रप्रथम-ग्वाल ने पूजा की थी। वहाँ श्रीकृष्ण को क्षीर और नवनीत से भोग लगाते हैं। आरति होने के बाद श्री मलयप्प स्वामी को भी ग्वाल भक्ति से जो क्षीर और नवनीत नैवेद्य के लिए देता है, उन्हें समर्पित करते हैं। यहां आरति दी जाने के बाद उस ग्वाल का सम्मान किया जाता है। तदनन्तर श्री मलयप्प (पालकी-वाहक) कुछ दूर दौडते हैं। श्री स्वामी की ओर से अर्चक महाशय बाण छोडते हैं। इस प्रकार तीन बार किया जाता है। तदनन्तर स्वामी महाद्वार के पास आते हैं। वहाँ हथीरामजी के मठवालों को रजत-दण्ड देकर स्वामी तिरु वीथियों के उत्सव में पधारते हैं। इतने में श्रीकृष्ण सन्निधि (आलय) में पधारते हैं। श्री मलयप्प स्वामी उत्सव पूरा करके महाद्वार पर पधारते हैं। हथीरामजी-मठवालों से उस दण्ड को लेकर आलय के अंदर पधारते हैं। शिकारी उत्सव यही है।

३६. श्री रामकृष्ण तीर्थ मुक्कोटि (मुक्कोटि = तीन करोडों देवताओं का तीर्थ)

अपार करुणासागर जगत्प्रभु श्री वेंकटेश्वर अर्चा रूप में श्री वेंकट भूधर पर विराजमान हैं। श्री स्वामी के दिव्य-मंदिर से छे मील की दूरी पर एक तीर्थ है, जिसका नाम श्री रामकृष्ण-तीर्थ। इस तीर्थ में प्रति-वर्ष मकर-मास में पुष्यमी-नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के शुभदिन मुक्कोटि उत्सव मनाया जाता है। प्रातःकालीन तथा माध्याह्निकाराधना के उपरान्त अर्चक महाशय, पाचक, एकांगी, परिचारक, अधिकारी-गण, यात्रिक सब मंगलवाद्यों सहित इस तीर्थ पर जाते हैं। वहाँ प्रतिमा-रूप में श्रीकृष्ण विराजमान हैं। श्रीकृष्ण का अभिषेक, पुष्पालंकार, आराधना के उपरान्त भोग लगाते हैं। आरति के बाद गोष्ठि में चंदन और ताम्बूल का वितरण होता है। तदुपरान्त सब वाद्य सहित श्री स्वामी के मंदिर में आते हैं। इस तीर्थ की प्रशंसा स्कन्द-पुराण में इस प्रकार है –

प्राचीन काल में वेंकटाद्रि पर रामकृष्ण नामक एक महर्षि तप करता था। एक बार उसने अपने स्नान के लिए एक तीर्थ को बनाया (वेंकटाद्रि पर प्रवाहित धाराओं से तीर्थ बनाया जा सकता है)। इस तीर्थ के तट पर कई वर्षों तक तप करने से उसके शरीर पर वल्मीक बढ़ गए। महर्षि को शरीर का ध्यान ही नहीं था। यह देखकर देवेन्द्र ने मेघों को भेजकर सात दिन तक कुम्भ-वृष्टि करायी। वल्मीक पर वज्र भी गिरने लगे, अपितु महर्षि हिले न डुले। इस तीव्र तपस्या से संतुष्ट होकर श्री श्रीनिवास ने गरडारूढ़ होकर महिर्ष के सामने शंख चक्र गदाधारी के रूप में दर्शन दिए। स्वामी महर्षि से बोले – 'हे तपोधन, रामकृष्ण! मेरे आविर्भाव का दिन मकर मास में पुष्यमी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा है। इस पर्व दिन में जो इस तीर्थ में स्नान करेंगे, वे सर्व पापों से विमुक्त होकर समस्त अभीष्टों को प्राप्त करेंगे। यह तीर्थ तुम्हारे नाम से विख्यात होगा।' –ऐसा वर प्रदान करके श्री स्वामी अन्तर्धान हो गए। श्री स्वामी के वचन के अनुसार जोभी इस पर्व दिन में इस तीर्थ में स्नान करेंगे और

स्वामी के दर्शन करेंगे, वे पाप मुक्त हो जायेंगे। इस तीर्थ में तीनों करोड देवता भी स्नान करने के कारण मुक्कोटि रामकृष्ण तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हो गया है।

३७. प्रणय कलहोत्सव

आश्रित परायण श्री वेंकटेश्वर स्वामी की माध्याह्निकाराधना के अनन्तर श्री मलयप्प स्वामी पालकी में पधारते हैं। समस्त परिवार के साथ महापरिक्रमा करके एकांगी-मठ के पुरोभाग में पधारते हैं। तदनन्तर उभय देवेरियाँ दूसरी पालकी में अपरिक्रमा के रूप में श्री स्वामी के पुरोभाग में पधारती हैं। जिय्यंगार और पौराणिकों को तिरु-परिवट्टं (पवित्र-वस्त्र) का धारण कराते हैं। पौराणिक पुराण का पठन करता है। जिय्यंगार उभय देवेरियों के समीप से तीन गोले पुष्प गुच्छों को श्री स्वामी के ऊर्ध्वभाग से पृष्ठ भाग में जा गिरने के लिए फेंक देता है। तीन बार ऐसा किया जाता है। स्वामी पालकी से ही कुछ दूर पीछे जाते हैं अथवा दौडते हैं। इस कार्य के उपरान्त श्रीस्वामी की पालकी यथा स्थान पर आयेगी। पुराण-पठन तथा संगति भी होंगे। उभय देवेरियों की पालकी श्री स्वामी की परिक्रमा करते हुए स्वामी के पास में आयेंगी। श्री स्वामी और देवेरियाँ परस्पर पुष्पमालाएँ बदलते हैं। तदनन्तर एकाँगी तथा पौराणिक सम्मानित किए जाते हैं। श्रीस्वामी सहित उभय देवेरियाँ कल्याणमण्डप में पधारेंगी।

३८. रथ सप्तमी उत्सव

आश्रित-जनों की मनोकामना-प्रदाता श्री वेंकटेश्वर श्री वेंकटाद्रि पर अर्चा रूप में विराजित हैं। प्रतिवर्ष माघ मास के शुद्ध सप्तमी दिन रथ-सप्तमी उत्सव मनाया जाता है।

अरुणोदय के पहले ही प्रातःकालीन आराधना पूरी होती है। श्री मलयप्प स्वामी आलय से वाहन मण्डप में पधारते हैं। वहां वज्र-कवच आदि सर्वालंकारों से अलंकृत होकर सूर्य-प्रभा वाहन पर आरूढ़ होते हैं। तिरुवीथियों का उत्सव प्रारम्भ होता है। इस दिन स्वामी इधर आलय के

वायव्य भाग में पधारते हैं, तो उधर प्राची दिशा में 'भीषोदेति सूर्यः' – ऐसा जो वेदशासन है, उस प्रकार सहस्र किरणों का सूर्य उदय होता है; वह अपने सहस्र करों को श्री बालाजी के वज्रकवचालंकृत पादाब्जों पर अर्पण करता है। इस वैभव के दर्शन के लिए सहस्रों भक्तजन, अधिकारीगण सब निर्निमेष नेत्रों से अरुणोदय की प्रतीक्षा में रहते हैं। सूरज के किरणों से स्पर्शित श्री स्वामी के पादाब्जों के दर्शन से अमित आनंद पाते हैं। उत्सव में सब स्वामी का अनुगमन करते हैं। श्री स्वामी वाहन से मण्डप में पधारते हैं। यहाँ इस वाहन को छोडकर अपने प्रिय शेषवाहन पर आरूढ़ हो परिवार सहित तिरुवीथियों के उत्सव में जाते हैं। पुनः उत्सवानन्तर वाहन मण्डप में पधारते हैं। यहाँ शेषवाहन छोडकर वेदमय गरुड वाहन पर आसीन होते हैं। पुनः तिरुवीथियों के उत्सव के बाद वाहन मण्डप में पधारते हैं। यहाँ त्रेतायुग के श्री रामावतार में अपने प्रियतम भक्त श्री हनुमद्वाहन पर अधिष्ठित होते हैं। तीसरी बार तिरुवीथियों के उत्सव में सकल परिवार सहित निकलते हैं। चतुर्वीथियों के उत्सव के पूरा होते ही मध्याह्न हो जाता है। अतः श्री स्वामी आलय में प्रवेश करते हैं।

इस समय (मद्याह्न) श्री चक्रत्ताल्वार समस्त परिवार सहित चतुर्वीथियों के उत्सव के लिए प्रथम श्री वराहस्वामी मंदिर के पुरोभागीय मण्डप में पधारते हैं। वहाँ उनका पंचामृत से अभिषेक किया जाता है। तदनन्तर श्री स्वामि पुष्करिणी में 'अवभृथ स्नान' कराते हैं। यह चक्र-स्नान भक्तों के तारण के लिए किया जाता है। इसी समय चक्र-स्नान की प्रतीक्षा करनेवाले भक्त समूह भी पुष्करिणी में अवगाहन स्नान करके धन्यवाद देते हैं। इस समय का दृश्य पुष्करिणी में भक्तों के आनंद से चक्षु-साफल्यदायक होता है। तदनन्तर श्री चक्रत्ताल्वार उचित रूप से अलंकृत होकर आलय में प्रवेश करते हैं। श्री स्वामी की माध्याह्निकाराधना होती है। आश्रित कल्पतरु श्री स्वामी रत्नाभरणों से अलंकृत हो वाहन मण्डप में पधारते हैं। वहाँ कल्पवृक्ष वाहन पर आसीन होते हैं और पुनः माध्याह्निक तिरुवीथियों का उत्सव प्रारम्भ

होता है। समस्त परिजनों सहित स्वामी उत्सव के उपरान्त वाहन मण्डप में पधारते हैं। वहाँ कल्पवृक्ष वाहन को छोडकर सर्वभूपाल वाहन पर उत्सव में निकलते हैं। इस वाहन पर उत्सव की पूर्ति होते ही वाहन-मण्डप में पधारते हैं। उनका अलंकार मौक्तिक रत्न कवच से होता है। इस बार श्री स्वामी चन्द्रप्रभा वाहन पर अधिष्ठित होकर समस्त वैभवों के साथ पुनः चतुर्वीथिों में शोभा-यात्रा के लिए निकलते हैं। रथ सप्तमी दिन सात वाहनों पर अविश्रान्त होकर आसीन होते हैं। इसे सप्त वाहनोत्सव कहते हैं। इस वाहनोत्सव के उपरान्त स्वामी अपने भक्तजनों की मनोकामनाएँ पूरा करके वाहन मण्डप से आलय में पधारते हैं। श्री स्वामी की सायंकाल की आराधना की जाती है। वेणु-गान से एकान्तोत्सव मनाया जाता है। श्री स्वामी के अनेक वाहनारूढ़ दर्शनों को दर्शनार्थी भक्त-जनों का परंपरागत प्राप्त पुण्य ही समझना चाहिए।

३९. कुमारधारा तीर्थ मुक्कोटि उत्सव

अपार करुणासागर सकलगुणाभिराम श्री वेंकटेश्वर तिरुमल गिरि पर अर्चावतार में विराजमान हैं। इस दिव्य भूधर पर जो जो महान तीर्थ हैं, उनमें कुमारधारा तीर्थ भी एक है। यह तीर्थ मंदिर से आठ मील की दूरी पर स्थित है। प्रतिवर्ष कुम्भ मास में मखा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन इस तीर्थ में 'मुक्कोटि उत्सव' मनाया जाता है।

श्री स्वामी की प्रातःकालीन और माध्याह्निकाराधना के अनन्तर अर्चक महाशय तथा भक्तजन, कैंकर्यवान सब इस तीर्थ को जाते हैं। वहाँ तीर्थस्नान से पवित्र होकर श्री स्वामी के दर्शन करते हैं। इस तरह उनकी मनोकामना सिद्ध होती है। इस तीर्थ की महत्ता मार्कण्डेय पुराण में इस प्रकार कही गयी है–

प्राचीन काल में एक ब्राह्मण दुर्भर दारिद्र्य से पीडित था। वह अपने परिवार का पालन-पोषण नहीं कर सकता था। वह श्री वेंकटाचल के शिखर से गिरकर आत्म-त्याग करने आया था। वह ज्योंही शिखर पर पहुँचा, त्योंही इस प्रकार चिल्लाने लगा– 'हे देवताओं! पतिष्ये पतिष्ये'। तत्क्षण श्री

वेंकटेश्वर स्वामी एक राजकुमार के वेष में वहाँ प्रत्यक्ष हुए । उस ब्राह्मण से कहा कि हे विप्र! ऐसा साहस नहीं करना है। भृगु-पतन बुद्धिमान का कार्य नहीं है। इन बातों को सुनकर ब्राह्मण राजकुमार के निकट गया। राजकुमार उस ब्राह्मण का हाथ पकडकर पापनाशनम् तीर्थ की उत्तरी-दिशा में स्थित इस तीर्थ पर पहुँचा । राजकुमार ने कहा – 'हे विप्र! तुमअपनी दीन दशा का अन्त करने के लिए इस तीर्थ में स्नान करो। विप्र स्नान करने गया; स्वामी अन्तर्हित हो गए। आकाशवाणी ने विप्र से कहा– 'हे विप्र! वह राजकुमार स्वयं श्री वेंकटेश्वर स्वामी हैं। तुम अपने प्रांत में जाओ; स्वामी ने तुम्हें कुमारत्व और ऐश्वर्य दिए हैं। तुम अपने परिवार के साथ धर्माचरण करते हुए अन्त में निरतिशय सुख पाओगे। इधर विप्र का तीर्थ में स्नान करते ही शरीर कुमार जैसे यौवन संपन्न हो गया। स्नान मात्र से कुमारत्व प्राप्त होने के कारण इस तीर्थ का नाम कुमारधारा तीर्थ हो गया है। अतः जो भी इस कुमारधारा तीर्थ में स्नान करेगा, वह लौकिक व अलौकिक दोनों का सुख पा सकता है। इस तीर्थ में स्नान करने के बाद श्री स्वामी का दर्शन करना तथा तीर्थ-प्रसाद स्वीकारना चाहिए।

४०. क्षेत्रपालक पूजा का उत्सव

आर्तत्राण परायण आपद्बान्धव श्री वेंकटेश्वर ज्ञानाद्रि नाम से प्रख्यात तिरुमलगिरि पर विराजमान हैं। प्रतिवर्ष महाशिवरात्रि के दिन क्षेत्रपालक रुद्र महादेव का पूजोत्सव मनाया जाता है।

माघमास के बहुळ चतुर्दशी को महाशिवरात्रि का पर्व-दिन है। इस दिन सायंकाल गोगर्भ के तट पर प्रभूत शिला-रूप में स्थित रुद्र का महाभिषेक एकादश-रुद्र पठन से अभिषेक किया जाता है। वहां के तीर्थवासी देवस्थान में आएंगे। वे देवस्थान के अधिकारी-गण और परिचारकों को अपने साथ गोगर्भ-तीर्थ पर ले जायेंगे। रुद्र-देव का रजत-ऊर्ध्वपुण्ड्र, रजत नेत्रों से अलंकार करेंगे। आरति देने के बाद भोग लगाएँगे। भोग (नैवेद्य) में निवेदित पानी में भिगोया हुआ मूंग-दाल (वडपप्पु), फल, नारिकेल, मन्त्राक्षत,

चंदन और ताम्बूल अर्चकों, एकांगियों और भक्तों में वितरण किया जाता है। इस कार्य के उपरान्त अधिकारी-गण, अर्चक और परिवार मंगलवाद्यों सहित महाद्वार पर आयेंगे।

सांप्रदायिक-वेत्ताओं का मत है कि क्षेत्र-पालक रुद्र श्री स्वामी के समीप बहुत समय तक क्षेत्र का संरक्षक रहा। अनन्तर गोगर्भ तीर्थ के तट पर शिला-रूप में विराजमान था।

४१. प्लवोत्सव

आश्रितों के लिए शेषाचल पर श्री वेंकटेश्वर अर्चावतार में विराजमान हैं। श्री स्वामि पुष्करिणी में प्रति-वर्ष फाल्गुन मास के शुद्ध-एकादशी से शुद्ध पूर्णिमा तक पाँच दिन श्रीस्वामी का प्लवोत्सव मनाया जाता है। प्रथम-दिन त्रेतायुग में धर्म रक्षणार्थ अवतरित मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी श्री सीता लक्ष्मण सहित रत्नाभरणादि से अलंकृत होते हैं। स्वर्ण पालकी में सायं को तिरुवीथियों के उत्सव में निकलते हैं। उत्सव के बाद श्री स्वामि पुष्करिणी में प्लव पर विराजमान होते हैं। इस समय पुष्करिणी की शोभा बिजली के रंग-बिरंगे दीपों से अत्यन्त मनोहर होती है। मंगल-वाद्यों और वेद-घोष से प्रतिध्वनित इस पवित्र समय में प्लव की, जो बिजली के दीपों से अलंकृत किया होता है, परिक्रमा पुष्करिणी में मन्द-गति मे होती है, जो देखने लायक है। तीन बार परिक्रमा करने के बाद आरति दी जाती है और श्रीरामचन्द्र आलय में विराजमान होते हैं।

द्वितीय दिन चेतन-जीवों का उद्धार करने अवतरित गीताचार्य श्रीकृष्ण श्री रुक्मिणी सहित प्लवोत्सव का आनंद भक्तों को देते हैं। इस दिन सायंकाल अलंकारों सहित श्रीकृष्ण और श्री रुक्मिणी देवी स्वर्ण-पालकी में आरूढ होकर तिरु-वीथियों के उत्सव में जाते हैं। उत्सव के उपरान्त सुसज्जित प्लव में सुंदर वेदी पर आसीन होते हैं। वेदपारायण और मंगल वादन होते समय प्लव की परिक्रमा पुष्करिणी में तीन पर्याय होती है। तदुपरान्त आरति दी

जाती है। श्रीरामचन्द्रजी सीता माईसहित आलय में अपने स्थान में विराजमान होते हैं।

कलियुग का प्रत्यक्षदेव कामितार्थ प्रदाता श्री वेंकटेश्वर स्वामी तृतीय दिन सायंकाल श्री भूदेवियों सहित चतुर्वीथियों के उत्सव के उपरान्त अलंकृत प्लव की वेदी पर विराजमान होते हैं। इस दिन भी प्लव की परिक्रमा पुष्करिणी में तीन बार होती है। यह सुंदर दृश्य नेत्रानंददायक होता है। आरति के बाद श्रीस्वामी सन्निधि में जाते हैं। चौथा दिन श्री मलयप्प स्वामी भी उभय देवेरियों सहित तिरुवीथियों के उत्सव के अनन्तर सुसज्जित प्लव की वेदी पर विराजमान होते हैं। पुष्करिणी में विहार तीन बार करने के बाद, वेदपारायण समाप्त करके मंगलशासन करते हैं। आरति दी जाती है। तदनन्तर स्वामी आलय में जाते हैं।

पंचम दिन भी इसी प्रकार श्री मलयप्प स्वामी देवेरियों सहित तिरुवीथियों के उत्सव के उपरान्त अलंकृत प्लव की वेदी पर विराजमान होते हैं। इस अंतिम दिन पाँच परिक्रमाओं से प्लवोत्सव समाप्त होता है। श्री स्वामि पुष्करिणी वेद-पारायण तथा मंगल-वाद्यों के घोष से प्रतिध्वनित होता है। इस समय यात्री और भक्त-जन प्लवोत्सव देखने के लिए बहुत पहले से सीढ़ियों और अन्य स्थानों पर आसीन होते हैं। वे अपने परिवारों सहित इस प्लवोत्सव का दर्शन करते हैं। उनके हृदय आनंद और उल्लास से भर जाते हैं। श्री स्वामी को आरति देने के बाद स्वर्ण-द्वार पर पधारते हैं। आस्थान चलता है। तदनन्तर श्री स्वामी आलय में पधारते हैं।

४२. तुम्बुरु तीर्थ मुक्कोटि

अशेष चिदचिद्वस्तु शेषिभूत श्रीवेंकटेश्वर वेद-पर्वत पर अर्चावतार में विराजमान हैं। दिव्य मंदिर से एकादश मील की दूरी पर तुम्बुरु तीर्थ है। प्रतिवर्ष मीन मास के शुक्ल-पक्ष में उत्तरा-नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन अपराह्ण में उत्सव मनाया जाता है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी का चक्रस्नान

प्रतिभटश्रेणिभीषण वरगुणस्तोमभूषण
जनिभयस्थानतारण जगदवस्थानकारण ।
निखिलदुष्कर्मकर्शन निगमसद्धर्मदर्शन
जय जय श्री सुदर्शन जय जय श्री सुदर्शन ।।

इस दिन श्री स्वामी की प्रातःकालीन तथा माध्याह्निकाराधना के उपरान्त अर्चक-महाशय कैंकर्यवान भक्त-जन यात्री लोग सब भगवन्नाम का ध्यान करते हुए इस तीर्थ के तट पर पहुँचते हैं। वहाँ अपराह्न में स्नान करके श्रीस्वामी के दर्शन, तीर्थ और प्रसाद स्वीकार करते हैं। इस तीर्थ में सुस्नात हो श्रीनिवास के दर्शन आदि पाने से निरतिशय ऐश्वर्य पाएंगे। इस तुम्बुरु तीर्थ की महत्ता के बारे में स्कन्द पुराण का कथन इस प्रकार है –

एक बार नारद महर्षि के पास पवित्र गंगानदि आदि त्रिकोटि नदियाँ अपना परिताप इस प्रकार व्यक्त करती हैं कि पाप किए हुए मानव हम में स्नान करके अपने पाप हमारे अंदर छोड जाते हैं। इस पाप-जाल से मुक्त होने का मार्ग उन्होंने पूछा। ब्रह्मा के मानस पुत्र एवं त्रिकालज्ञ नारद महर्षि ने नदियों से कहा – 'हे तीर्थ राज, वेंकटाद्रि पर ब्रह्म-हत्या आदि महापापों का शमन कर सकनेवाली श्री स्वामि पुष्करिणी में जाइए। वहाँ सुस्नात होकर माघ-मास के उत्तरा-नक्षत्र युक्त मध्याह्नकाल में पावन तुम्बुरु-तीर्थ में अन्तर्वाहिनी के रूप में रहिए। इस दिन तीन करोड पचास लाख तीर्थ-राजों का संक्रमण इस तीर्थ में होते हैं। साधारण मानव भी कोटि-तीर्थों में स्नान करने का फल पा सकता है। तुम्बुरु नामक गन्धर्व ने इस तीर्थ में मध्याह्न के समय स्नान करके विष्णुलोक को प्राप्त किया। अतः इस तीर्थ का नाम तुम्बुरु तीर्थ है।

४३. दर्पण-भवन में डोलोत्सव

श्री वेंकटेश्वर परम योगी और अपरिच्छेद्य स्वरूप स्वभावी होने पर भी अपने आश्रितों की कामनाओं की पूर्ति करने के लिए करुणासागर अर्चावतार में तिरुमलगिरि पर विराजमान हैं। प्रति-दिन सायंकाल दर्पण-भवन (आइने-महल) में अर्जित सेवा के रूप में डोलोत्सव मनाया जाता है।

माध्याह्निकाराधना के उपरान्त श्री मलयप्प स्वामी उभय देवेरियों सहित रंग मण्डप में पधारते हैं। वहाँ अर्जित-सेवा के रूप में कल्याणोत्सव और वाहनोत्सव समाप्त होते हैं।

स्वर्ण-पालकी में डोला-विहार करने के लिए देवेरियों सहित मंगल वाद्यों, छत्र चामरादि राज-वैभव के साथ दर्पण-भवन में पधारते हैं। इस समय बिजली के सहस्र दीप कांतियों की प्रतिछाया से युक्त शिलामय त्रिवेदियों से देदीप्यमान होता है। दर्पण संकलित चतुस्तम्भ डोला-मण्डप में सुसज्जित स्वर्ण-झूले पर श्री स्वामी देवेरियों सहित आसीन होते हैं। जो भक्त अर्जित-सेवा के रूप में इस डोलोत्सव में भाग लेते हैं, उन्हें उनके द्वारा अर्चक स्वामी डोला झुलवाता है। भक्त के नाम पर दत्त कराते हैं।

लीला-रसिक श्री स्वामी तथा प्रेमानुरक्त देवेरियों को विहारोचित उपचार किए जाते हैं। मधुर पक्वान्नों का निवेदन करते हैं। अन्त में सुगन्धित ताम्बूल समर्पण करते हैं।

वेदनाद, सामगान तथा दिव्य प्रबन्धों का श्रवणातिथ्य स्वामी को देते हैं। इस पवित्र नाद-ध्वनि के साथ डोलाविहार किया जाता है।

इस समय इस भवन के चतुर्दिशाओं के मध्य चतुस्तम्भों तथा भवन-भर बिजली के जो दीप हैं, वे चारों ओर के दर्पणों में प्रतिबिम्बित होते हैं। मनोहर रेश्मी वस्त्रों, विचित्र रत्नाभरणों, सुंदर पुष्पमालाओं से अलंकृत स्वामी और देवेरियों के झूलने का दृश्य वर्णनातीत है।

भक्त-जन जो दर्पण-भवन में उपस्थित होते हैं, वे श्रीदेवी और भूदेवी और स्वामी के सहस्र प्रतिबिम्बों के दर्शन करते हुए अपने स्वात्म के प्रतिबिम्बों को एक साथ देखते-देखते विभ्रान्त हो जाते हैं। भक्तजनों के मानसों पर स्वामी का कटाक्ष-वीक्षण होता है। इस उत्सव के सेवा-परायण भी अपना जन्म सार्थक मानते हैं।

इस विचित्र वैभव के बारे में ऐतिहासिकों का कथन इस प्रकार है—'श्रीमन्नारायण त्रेतायुग में श्रीरामचन्द्रजी के अवतार में सीता सहित विवाह के समय रत्नभवन अथवा दर्पण-भवन में इस प्रकार के दिव्याद्भुत प्रतिबिम्ब

स्वरूपों के दर्शन महर्षियों से किए गए थे। ऐसा विचित्र और मनोहर दर्शन वर्तमान में श्री वेंकटेश्वर स्वामी दर्पण-भवन के डोलोत्सव समय बिम्ब-प्रतिबिम्ब रूप में देते हैं।

इस समय लक्ष्मी-विनोद भी होता है। दिव्य प्रबन्ध-गान तथा चतुर्वेद-पठन से श्री स्वामी का डोलोत्सव समाप्त होता है।

अर्चक-महाशय श्री स्वामी एवं देवेरियों का श्रमापनोदन उपचार करते हैं। ताम्बूल समर्पण के बाद आरति दी जाती है। इस उत्सव-कर्ता गृहस्थ का सम्मान शठारि, चंदन, ताम्बूल, प्रसाद तथा वस्त्रों से किया जाता है।

श्री मलयप्प स्वामी दर्पण-भवन के डोलोत्सव कर्ता गृहस्थ से इस प्रकार कहता है–

अयि वत्स-सुरूपां प्रतिमां विष्णोः प्रसन्न वदनेक्षणाम्।
कृत्वाऽऽत्मनः प्रीतिकरीं सुवर्णरजतादिभिः ॥

ता मर्चयेत् तां प्रणमेत् तां जपेत् तां विचिन्तयेत्।
विशत्यपास्त दोषस्तु ता मेव ब्रह्मरूपिणीम् ॥

भावार्थ

जो मानव प्रसन्नमुखी प्रसन्न-दृष्टि युक्त सुवर्ण अथवा रजत मूर्ति विष्णु-रूप, नरसिंह-रूप, राम-रूप, कृष्ण-रूप, श्री वेंकटेश रूप – इनमें अभीप्सित रूप बनवाकर उसकी पूजा, उपासना, जप और ध्यान करेगा, वह समस्त दोषों से निवृत्त होकर परब्रह्म विष्णु का सायुज्य प्राप्त करेगा। इस शास्त्र वचन के अनुसार तुम हम दम्पति की शरण प्राप्त करने के लिए स्वर्ण-प्रतिमा बनवाने का श्रम न उठाओ। उस मूर्ति-रूप में हम ही तुम्हारे गृह में आते हैं। तुम हमारी उपासना श्रद्धा से करो और भक्ति से शरण में आने से तुम्हारे योग-क्षेम का भार हम वहन करेंगे। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधना के रूप में बुद्धियोग प्रदान करेंगे' – इस भावना से स्वर्ण-मूर्ति को संसार-सागर संतरण

भीरु अपने आश्रय में शरणागत भक्त की अंजलि में दान देते हैं। यह उस गृहस्थ के जन्म-साफल्य का उत्सव है।

इस पुण्य-कार्य के अनन्तर भक्तों में चंदन, ताम्बूल और प्रसाद का वितरण होता है। श्री स्वामी भी देवेरियों सहित स्वर्ण-पालकी पर आसीन होकर वेद-नाद मंगल वाद्य और समस्त राज-वैभव के साथ (श्री स्वामी) श्री वेंकटेश्वर की सन्निधि में पधारते हैं।

आर्ता विषण्णा शिथिलाश्च
भीताः घोरेषु च व्याधिषु वर्तमानाः।
संप्रार्थ्य शेषाचलमौळिरत्नं
निरस्तदुःखा स्सुखिनो भवन्ति ॥

द्वितीय-भाग समाप्त

तृतीय-भाग

तिरुमल में पुण्य तीर्थ

मायावी परमानंदं,त्यक्त्वा वैकुण्ठ मुत्तमम्।
स्वामि पुष्करिणी तीरे, रमया सह मोदते ॥

अखिल ब्रह्माण्डकोटि नायक, समस्त चराचर का सृजनहार श्रीमन्नारायण, कर्मयोग से भी विमुख मानव की, प्रार्थना मात्र से उन्हें पुरुषार्थ प्रदान करने तिरुमल-गिरि पर अर्चावतार में विराजमान हैं। पिछले अध्याय में इस विषय को पुनः पुनः स्पष्ट किया गया है।

श्री वैकुण्ठ में जिस शेष को अपना शयन बनाया था, उसी शेष के शेषत्व का पालन करने के लिए शेष-पर्वत को अपना व्यक्त-स्थान-पीठ बनाकर अर्चा-रूप में विद्यमान हैं। सांप्रादायिक वेद-वेत्ता भी इस विषय से आनंद पाते हैं कि श्री वेंकटेश स्वामी इस शास्त्र-वचन 'मूर्तिपूजा पीठाराधन-पूर्वक' का पालन करते हैं।

सर्वेश्वर के 'पीठम्' के रूप में शोभित यह शेष-पर्वत की लम्बाई दो सौ चालीस मील और चौडाई चौबीस मीलों की है। पुराणों में इस पर्वत की माप ऐसी है। ऊँचाई तीन हजार फुट की है। इस शेष-पर्वत का मुख-भाग वेंकटाद्रि के नाम से, मध्य-भाग नृसिंहाद्रि के नाम से तथा पृच्छ-भाग श्रीशैल के नाम से पुराणों में व्यवहृत हैं। इस पर्वत पर अनेक पुण्य तीर्थों के होने से 'तीर्थाद्रि' नाम से भी जाना जाता है।

'पुण्यतीर्थ' शब्द की परिभाषा

पुण्य-तीर्थ – पुण्य और तीर्थ दो शब्दों से बना है। 'पुणति करोति' = शुभ देनेवाला; इसमें 'पुणति' व्युत्पत्ति शब्द से 'पुण्य' शब्द निष्पन्न हुआ है।

'तरन्त्यनेन' व्युत्पत्ति से 'तीर्थ' शब्द निष्पन्न हुआ है। शब्द-कोशों में ऋषि जुष्ट जल =तीर्थ है, जो इस शब्द का समानवाची माना गया है। यथा - जुषा=प्रीति सेवनयोः – ऐसा धातु पाठ है। इसका अर्थ है – उस जल को जिसमें महर्षियों का स्नानादि कृत्य होते हैं, जो उनसे सेवित है, वह जल 'तीर्थ' शब्द के योग्य है। यथा – 'रामकृष्ण-तीर्थ= रामकृष्ण महर्षि से अपनी तपस्यादि के उपयोगार्थ का जल।

काय रसायन तीर्थ = शरीर को शुद्ध करके दृढ़ता प्रदान करनेवाला यह तीर्थ महर्षियों एवं योगाभ्यासियों का प्रेम-पात्र हो गया है। इन उदाहरणों से यह अर्थ स्पष्ट होता है कि महर्षियों के सेवन और प्रेम से जो जल शुभदायिनी होता है, उसे 'तीर्थ' का नाम सार्थक होगा।

ऐसे पुण्य-तीर्थ इस शेषाद्रि पर ब्रह्म-पुराण और स्कन्द-पुराण के अनुसार छियासठ करोड संख्या में हैं। उनमें प्रधान तीर्थों का ज्ञान पाना समीचीन है। प्रधान पुण्य-तीर्थ चार प्रकार के माने गए हैं। १. धर्म भावनोद्दीपक, २. ज्ञान प्रदाता ३. भक्ति-वैराग्य प्रदाता ४. मुक्ति प्रदाता।

१. धर्म-भावना प्रदायक

जिस तीर्थ के तट पर निवास, स्नान-पान करने से साधारण मानव भी कर्मयोग द्वारा धर्मासक्त होता है उस तीर्थ को धर्म भावना प्रदाता माना जाता है। ऐसे तीर्थ १००८ इस पर्वत पर स्थित हैं।

२. ज्ञान-प्रदाता पुण्य-तीर्थ

जिस तीर्थ के सेवन से मानव ज्ञान-संपन्न होता है, उन्हें ज्ञान-प्रदायक मानते हैं। ऐसे तीर्थ इस तिरुमलगिरि पर एक सौ आठ हैं, जो इस प्रकार हैं – १. मनुतीर्थ २.इन्द्रतीर्थ ३. वसुतीर्थ ४. एकादश रुद्रतीर्थ ५. आदित्य तीर्थ –१२ (बारह) हैं; २७. प्रजापति तीर्थ ९ हैं; ३६. अश्विनी तीर्थ; ३७. शुक्रतीर्थ; ३८. वरुण तीर्थ ३९. जाह्नवी तीर्थ ४०. कापेय तीर्थ ४१. काण्व तीर्थ

४२. आग्नेय तीर्थ ४३. नारद तीर्थ ४४. सोम तीर्थ ४५. भार्गव तीर्थ ४६. धर्म तीर्थ ४७. यज्ञ तीर्थ ४८. पशु तीर्थ ४९. गणेश तीर्थ ५०. भौमाश्व तीर्थ ५१. पारिभद्रतीर्थ ५२.जगज्जाड्यहर तीर्थ ५३. विश्वकल्लोल तीर्थ ५४. यमतीर्थ ५५. बार्हस्पत्यतीर्थ ५५.कामहर्षतीर्थ ५७.अजामोद तीर्थ ५८.जनेश्वर तीर्थ ५९. इष्टसिद्धि तीर्थ ६०. कर्मसिद्धि तीर्थ ६१. वट तीर्थ ६२.औदुम्बर तीर्थ ६३.कार्तिकेय तीर्थ ६४.कुब्ज तीर्थ ६५. प्राचेतस तीर्थ – १० (दस) हैं; ७५. गरुड तीर्थ ७६.शेषतीर्थ ७७. वासुकी तीर्थ ७८. विष्णुवर्धन तीर्थ ७९.कर्मकाण्ड तीर्थ ८०.पुण्यवृद्धि तीर्थ ८१. ऋणविमोचन तीर्थ ८२. पार्जन्य तीर्थ ८३. मेघतीथ ८४. सांकर्षण तीर्थ ८५. वासुदेव तीर्थ ८६. नारायण तीर्थ ८७. देव तीर्थ ८८. यक्ष तीर्थ ८९. काल तीर्थ ९०. गोमुख तीर्थ ९१. प्राद्युम्न तीर्थ ९२. अनिरुद्ध तीर्थ ९३. पितृ तीर्थ ९४. आर्षेय तीर्थ ९५. वैश्वदेव तीर्थ ९६. स्वधा तीर्थ ९७. स्वाहा तीर्थ ९८. अस्थि तीर्थ ९९. आंजनेय तीर्थ १००. शुद्धोदक तीर्थ १०१. अष्टभैरव तीर्थ आठ हैं; इनके साथ तीर्थों की संख्या एक सौ आठ हैं।

३. भक्ति वैराग्य प्रदाता तीर्थ

उक्त कथित तीर्थों की अपेक्षा भक्ति प्रदाता तीर्थों की संख्या ६८ हैं। इन तीर्थों का जो सेवन करता है, उसमें भक्ति पैदा होती है; क्रमशः वैराग्य के बल से ज्ञान संपन्न होकर परम-पद प्राप्त करता है। इन तीर्थों के नाम इस प्रकार हैं –

६८ संख्यक तीर्थ – १.चक्र तीथ २. वज्रतीर्थ ३.विष्वक्सेन तीर्थ ४. पंचायुध तीर्थ ५. हलायुध तीर्थ ६. नारसिंह तीथ ७. काश्यप तीर्थ ८. मान्मथ तीथ ९. ब्रह्मतीर्थ १०. अग्नितीर्थ ११ गौतम तीर्थ १२. दैव तीर्थ १३. देवल तीर्थ १४ विश्वामित्र तीर्थ १५. भार्गव तीर्थ १६. अष्टावक्र तीर्थ १७.दुरारोहण तीर्थ १८ भैरव तीर्थ १९. मेह तीर्थ (उदर रोग नाशक तीर्थ)

२०. पाण्डव तीर्थ २१. वायुतीर्थ २२. अस्थितीर्थ (पुनर्जीवन साधन) २३. मार्कण्डेय तीर्थ २४. जाबालि तीर्थ २५. वालखिल्य तीर्थ २६. ज्वरहर तीर्थ २७.विषहर तीर्थ (तक्षक विष निवारक जल) २८. लक्ष्मी तीर्थ २९. ऋषि तीर्थ ३०. शतानन्द तीर्थ ३१. सुतीष्ण तीर्थ ३२. वैखाण्डक तीर्थ ३३. बिल्व तीर्थ ३४. विष्णु तीर्थ ३५. शर्व तीर्थ ३६. शारव तीर्थ ३७. ब्रह्म तीर्थ ३८. इन्द्र तीर्थ ३९. भारद्वाज तीर्थ ४०. आकाशगंगा तीर्थ ४१. प्राचेतन तीर्थ ४२. पापविनाशन तीर्थ ४३. सारस्वत तीर्थ ४४. कुमारधारा तीर्थ ४५. गजतीर्थ ४६. ऋष्यश्रुंग तीथ ४७. तुम्बुरु तीर्थ ४८. दशवतार तीर्थ, जो दस हैं; ५८. हलायुध तीर्थ ५९. सप्तर्षि तीर्थ, सात हैं; ६६.गजकोण तीर्थ ६७. विष्वक्सेन तीर्थ ६८. युद्ध सरस्तीर्थ – कुल ६८ हैं।

४. मुक्ति-प्रदाता पुण्य तीर्थ

उल्लिखित ६८ तीर्थों से भी श्रेष्ठ तीर्थ सात हैं। इन तीर्थों के सेवन से पाप-हरण होगा तथा मुक्ति भी शीघ्र प्राप्त होती हैं। अतः परमोत्तम तीर्थ माने जाते हैं।

सर्वतीर्थों में प्रधान सप्त तीर्थ – १. श्री स्वामि पुष्करिणी तीर्थ २. कुमारधारा तीर्थ ३. तुम्बुरु तीर्थ ४. रामकृष्ण तीर्थ ५. आकाशगंगा तीर्थ ६. पापविनाशन तीर्थ ७. गोगर्भ तीर्थ (पाण्डव तीर्थ)।

पुराणों का मतभेद और समन्वय – पर्व विवरण

ब्रह्मपुराण के अनुसार ये सप्त तीर्थ मुक्तिदायक माने जाते हैं । स्कन्द पुराणीय मत में (१७वाँ अध्याय) ये छे तीर्थ मुक्तिप्रद माने जाते हैं। वराहपुराण के अनुसार (द्वितीय भाग) रामकृष्ण तीर्थ के स्थान पर देवतीर्थ सप्त तीर्थों में रखा गया है। इन पुराणों के मत-भेद से रामकृष्ण तीर्थ अथवा देव-तीर्थ – इन दोनों में किसे छोड देना है। इन पाठान्तरों के अनुसार चक्र तीर्थ सप्त तीर्थों में एक माना जाता है। अतः इनका समन्वय इस प्रकार किया जा सकता है कि जो भक्त सातों तीर्थों का स्नान करने का निश्चय करता है, उसे यह सुविधा भी

दी जाती है कि इन तीनों में किसी एक को अथवा तीनों स्थानों में तीर्थ स्नान करना पर्याप्त है। इन सप्त तीर्थों में भी जब चाहे, तब स्नान करने के स्थान पर, उस तीर्थ में करोडों तीर्थों के संगम के समय नहाने से अत्यन्त लाभदायक होगा। इन विशेष-पर्वों में ये तीर्थ शक्तिमान होते हैं। अतः इन सातों तीर्थों के संगम समय के पर्वदिनों का विवरण जान लेना आवश्यक है। सातों तीर्थ-पर्वों के शुभदिन –

१. **श्रीस्वामि पुष्करिणी तीर्थ** – धनुर्मास में शुद्ध-द्वादशी दिन अरुणोदय के छे घटिकाओं का काल पर्व-दिन माना जाता है।

२. **कुमारधारा तीर्थ** – कुम्भ मास के मखा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा का दिन पर्व दिन है।

३. **तुम्बुरु तीर्थ** – मीन मास में उत्तर फल्गुनी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा पर्व दिन है।

४. **रामकृष्ण तीर्थ** – मकर साम में पुष्यमी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा का दिन ।

५. **आकाशगंगा तीर्थ** – मेष मास में चित्रा नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा दिन।

६. **पापविनाशन तीर्थ** – आश्वयुज मास के शुक्ल पक्ष में उत्तराषाढ़ा नक्षत्र युक्त सप्तमी आदित्य वार अथवा उत्तराभाद्र नक्षत्र युक्त द्वादशी का दिन पर्व दिन है।

७. **गोगर्भ तीर्थ (पाण्डव तीर्थ)** – वृषभ मास के शुद्ध द्वादशी इतवार अथवा बहुल द्वादशी मंगलवार पर्व दिन है। इन दोनों दिनों में संगम काल उदय से १२ घटिकाओं का समय पर्व दिन हैं।

पुराणों के कथनानुसार इन सप्त तीर्थों में इन पर्व-दिनों में नहाने के बाद स्वामी दर्शन, तीर्थ प्रसाद पाना तीर्थ-फल का एक भाग है, तो उसी दिन अपनी शक्ति के अनुसार अन्नदान, गोदान, सालग्राम-दान, स्वर्ण दान –

इनमें कोई भी दान करना तीर्थफल का दूसरा भाग है। स्नान, दर्शन, दान आदि से राजसूय आदि यज्ञ करने का फल पायेंगे। पुराणों की मान्यता यही है।

तीर्थ पर्व का उत्सव

इन सप्त तीर्थों में भी चार तीर्थों का उत्सव विशेष रूप से श्री स्वामी से संबंधित माने जाते हैं, जो इस प्रकार हैं – १. श्री स्वामि पुष्करिणी मुक्कोटि २. कुमारधारा मुक्कोटि ३. तुम्बुरु तीर्थ मुक्कोटि ४. रामकृष्ण तीर्थ मुक्कोटि।

मुक्कोटि का अर्थ तीन करोड है; इन पर्व दिनों में तीन करोड से अधिक तीर्थ इन तीर्थों में संगम करती हैं। ऐसे 'मुक्कोटि' के दिनों में श्रीस्वामी की आराधना के उपरान्त अर्चक-महाशय, एकांगी, अधिकारी-गण, पाचक, परिचारक और भक्त, मंगल-वादों के साथ तीर्थ को जाते हैं। कभी सिद्ध किए गए प्रसाद को, कभी प्रसाद पकाने के द्रव्यों को लेकर जाते हैं। तीर्थ में सुस्नात होकर, वहाँ की शिलामूर्ति का अभिषेक और आराधना करते हैं।

नहाने के बाद वहाँ की मूर्ति को वस्त्र पहनवाते हैं, पुण्ड्रधारण भी करते हैं। आरति के बाद वहाँ एकत्रित यात्रियों और भक्त जनों में प्रसाद वितरण करते हैं। भक्त भी सुस्नात होकर प्रसाद पाने से संतुष्ट होते हैं। वे भी मंदिर में आकर स्वामी के दर्शन, तीर्थ और प्रसाद पाते हैं। इस पर्व दिन का उत्सव विशेष फलदायक माना जाता है। इन सप्त तीर्थों में प्रमुख रूप से चार तीर्थ श्री स्वामी से निकट संबंध हैं, जो हैं – १. श्रीस्वामि पुष्करिणी २. कुमारधारा तीर्थ ३. तुम्बुरु तीर्थ और ४. रामकृष्ण तीर्थ।

उत्प्रेक्षण

ये चारों तीर्थ स्वामी के मंदिर के कुछ ही दूरी पर स्थित होने से यात्री-भक्त स्वामी-दर्शन, तीर्थ प्रसादों के साथ इन तीर्थों में जाते हैं। यह आचार के रूप में बन गया है। इस दृष्टि से इन तीर्थों में प्रतिदिन पर्व मनाया ही जाता है।

१. श्रीस्वामि पुष्करिणी तीर्थ

इन तीर्थों की प्रशस्ति का प्रमाण पुराणों से प्राप्त होता है। समस्त तीर्थों की शक्ति एवं वैभव महापुरुषों के अनुभवों से पुराणबद्ध हैं। शेषभूधर शिखर पर आनन्द निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी जो विराजमान हैं, उस दिव्य आलय के ईशान्य भाग में स्थित मुक्तिप्रदायिनी तीर्थ श्रीस्वामि-पुष्करिणी नाम से विख्यात है। तीनों लोकों के तीर्थों का स्वामी होने से इसे 'स्वामि-पुष्करिणी' नाम उचित है। गीताचार्य श्रीकृष्ण ने गीता में 'मासानां मार्गशीर्षोऽस्मि' कहकरयह सिद्ध किया है कि द्वादश मासों में यह मार्गशीर्ष मेरा ही रूप है। ऐसे पवित्र मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्ष के द्वादशी-दिन अरुणोदय इस तीर्थ का पर्व दिन है। इस तीर्थ राज में इस पर्व-दिन में स्नान करके स्वामी दर्शन, तीर्थ और प्रसाद पानेवालों की सर्व कामनाएँ पूरी होती है। इस तीर्थ की महत्ता वामन पुराण में ऐसा स्पष्ट किया गया है –

वामनपुराण

प्राचीन काल में मार्कण्डेय महर्षि ने ब्रह्मा के बारे में अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिए तीव्र तपस्या की। इसके नियमबद्ध घोर तपस्या से संतुष्ट होकर ब्रह्मा महर्षि के सामने साक्षात्करित होकर बोला – 'हे मुनिवर्य! तुम कौन-सा वर चाहते हो?' चतुरानन की प्रेमपूर्वक बातें सुनकर महर्षि ने पूछा कि समस्त तीर्थों में स्नान और प्रयाण करने की शक्ति दो।' चतुरानन ने कहा कि मुक्कोटि से अधिक जो तीर्थ हैं, उन सबों में नहाना शत वर्षों तक भी पूरा नहीं हो सकता। मेरे और रुद्रों से भी ऐसा तीर्थ-स्नान असाध्य कार्य है। परंतु तुम्हें एक उपाय बता दूँगा।

यहाँ से दक्षिणी दिशा में देवताओं से पूजित वेंकटाद्रि नामक एक पर्वत है। उस पर्वत शिखर पर श्रीस्वामि-पुष्करिणी नामक एक तीर्थ राज है। प्रति वर्ष मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष के द्वादशी के दिन अरुणोदय के समय त्रिलोक विश्रुत सर्वतीर्थ भी मानवों से संक्रमित पापों के निवारण करने के

लिए इस तीर्थराज में आती हैं। पापों का प्रक्षालन करने सब तीर्थ इसमें आ मिलते हैं। अतः सर्वतीर्थ संगम के समय तुम भी इस पुष्करिणी में स्नान करने से सर्व-तीर्थयात्रा का फल पा सकते हो। ऐसा कहकर चतुरानन अदृश्य हो गया। महर्षि ने ब्रह्मा के कहे अनुसार इस तीर्थ में स्नान करके सकल तीर्थों के स्नान का फल पाया था।

वामन-पुराण में और एक घटना भी प्रस्तावित है।

स्वामि-पुष्करिणी के पर्वदिन पर जो सुस्नात होकर पितृ-श्राद्ध कर्म करेगा, उसके पितृदेवता हरिमंदिर जाकर सुखी होंगे।

प्राचीन-काल में शंखु नामक एक क्षत्रिय था। श्री स्वामि पुष्करिणी में स्नान करने मात्र से उसका खोया हुआ राज्य उसका हस्तगत हो गया। एक बार नारायण नामक एक ब्राह्मणोत्तम ने इस तीर्थराज में स्नान करके श्री स्वामी के दर्शन और प्रसाद से परमपद को प्राप्त किया था। उसे भगवत्साक्षात्कार भी स्नान का फल माना जाता है।

दशरथ पुत्र श्रीरामचन्द्र इस पुष्करिणी में सुस्नात होने के कारण अपनी अपहरित स्त्री को पुनः प्राप्त कर सका था। लंका पर विजय भी पा सका था। अतः श्रीस्वामी के निकट तीर्थ सकल कामितार्थ प्रदायक ही हैं और कामधेनु सदृश समस्त मानवों को ज्ञान-विज्ञान से प्रकाशित कर सकते है।

इस तीर्थ-राज की महिमा का वर्णन भविष्योत्तर पुराण, स्कन्दपुराण, ब्रह्मपुराण, वराहपुराण और पद्म पुराण में इस प्रकार मिलता है–

भविष्योत्तर पुराण स्वामि पुष्करिणी स्नानं, वेंकटेश्वर दर्शनम्।
महाप्रसाद स्वीकारः त्रयं त्रैलोक्य दुर्लभम्॥

तात्पर्य

तीन लोकों में भी श्रीस्वामि पुष्करिणी स्नान, श्री स्वाभा दर्शन और प्रसाद लाभ दुर्लभ है। इस त्रय को मानव अपने पूर्व जन्म से सुकृत मात्र से

प्राप्त होता है। मानवों में भी कुछ लोग दूर प्रांत से अथवा निकटवर्ती प्रांत से भी नहीं आ सकते हैं। विदेशियों के लिए भी यह दुर्लभ है। विशेष की बात यह है कि कोई-कोई पर्वत पर आते तो हैं, दुर्भाग्य से न स्नान कर सकते, न दर्शन और प्रसाद भी पाए बिना लौट जाते हैं। कोई व्यवधान इसका कारण बताते हैं। ऐसे पुण्यवांछित लोग समझते हैं कि हम पुनः आयेंगे और उस समय ये सब प्राप्त करेंगे।

स्कन्द-पुराण

प्राचीन काल में चन्द्रवंशज नन्दराज ने अपने पुत्र धर्मगुप्त को राज्य का भार सुपुर्द करके वानप्रस्थाश्रम का जीवन रेवा नदी के किनारे आत्मावलोकन से बिताया था। उसका पुत्र धर्मगुप्त मतिभ्रमण से शापग्रस्त हुआ था। इस विषय को जानकर राजा अपने पुत्र के पास गया। उसे देखकर दुःखी हुआ। शाप दोष के निवारण के लिए अपने पुत्र को जैमिनी महर्षि के पास बुला ले गया। महर्षि के आश्रम पहुँचकर राजा महर्षि के पादों पर सिर झुकाकर अपने पुत्र का वृत्तान्त सुनाया और प्रार्थना की कि अपने पुत्र को शाप से प्राप्त दोष का निवारण कीजिए।

महर्षि दयालु होकर ध्यान-मग्न हुआ। तदुपरान्त महर्षि बोले – 'हे राजा! यहाँ से कतिपय दूरी पर श्री वेंकट भूधर शिखर पर श्री स्वामि पुष्करिणी तीर्थराज है। इस तीर्थ का तट सदा पुण्यवानों से भरा होता है। तुम अपने पुत्र को उस तीर्थ में स्नान कराओ। इससे वह स्वस्थ चित्त हो जायेगा।' राजा ने वैसा ही किया। स्नान के बाद धर्मगुप्त स्वस्थ हो गया। तदुपरान्त राज्य का पालन करने लगा।

इस प्रकार इस पुष्करिणी में स्नान करें, तो भूतावेश, अपस्मार आदि रोगों से भी स्वस्थ हो जायेंगे। मानव, जो अट्ठाईस प्रकार के पापों से पीडित होता है, इस पुष्करिणी के स्नान मात्र से उन दोषों से निवृत्त हो जायेगा। इतना ही नहीं, अश्वमेधफल, तुलापुरुष दानफल, गोसहस्रदान फल, ब्रह्मज्ञान,

यश और लक्ष्मी कटाक्ष भी इस दिव्य पुष्करिणी के स्नान से प्राप्त होते हैं। क्रमशः चतुर्विध पुरुषार्थों को भी पा सकता है।

स्कन्द पुराण और एक उदाहरण भी उद्धृत करता है

द्वापरयुगान्त में राजा अभिमन्यु का पुत्र राजा परीक्षित महर्षि के शाप के कारण तक्षक से बचने के लिए गंगा जल मध्य एकस्तम्भ मण्डप बनवाकर उसमें रहने लगा था। महर्षि का शाप था कि 'सातवें दिन तक्षक के काटने से मर जाओगे'। काश्यप नामक एक ब्राह्मण महासर्प दंष्ट्र को भी दूर करने की मन्त्र शक्ति से संपन्न था। वह कुरुवंश राजा की विपत्ती जानकर उसे बचाने के लिए जा रहा था। रास्ते में तक्षक उससे मिला, तो सारा समाचार ब्राह्मण ने कहा। ब्राह्मण राजा का विष दूर करने से बहुत धन पाने की आशा करता था। तक्षक ने अपनी शक्ति दिखाने के लिए एक वृक्ष और उस पर चढ़े हुए मनुष्य को भी अपनी विषज्वाला से भस्म कर दिया। मांत्रिक ने अपनी मंत्र-शक्ति से उस वृक्ष और मानव दोनों को जीवित किया। तक्षक भी ढ़ंग रह गया और बोले—'हे विप्र! एक महर्षि के दिए हुए शाप का शमन करना न्यायसंगत नहीं होगा। अतः उस राजा को जीवित करने से तुमको जितना धन मिलेगा, उससे दुगुना धन मैं दूँगा, मेरे साथ आओ।' तक्षक से अमूल्य रत्न दिए गए, जिनसे धनलुब्ध वह ब्राह्मण अपना घर चला गया।

तक्षक ने किसी रूप में जाकर राजा के शाप को सफल किया। राजा की मृत्यु से सब शोक में रहे। काश्यप को धनलुब्ध समझकर और वह राजा को नहीं बचा सकने के कारण उससे आसपास के लोग कोई भी न बातें करते थे; उसके साथ रहना छोड दिए। इससे वह खिन्न होकर अपने गुरु शाकल्य के पास गया और सारा वृत्तान्त बोला। ब्राह्मण ने शाकल्य से इस महापाप से निवृत्त करने की प्रार्थना की।

त्रिकालज्ञ शाकल्य महर्षि ने कहा—'हे काश्यप! तुम राजा को जीवित करने की शक्ति रखते हुए भी धन लोभ से धर्मच्युत हो गए हो। इस महापाप

से निवृत्त होने के लिए श्री वेंकटाद्रि पर जो श्रीस्वामि पुष्करिणी तीर्थ है, उसमें सुस्नात होकर स्वामी के दर्शन करो। इसकी अपेक्षा और कोई मार्ग ही नहीं है।' – काश्यप ने गुरु की आज्ञा का पालन किया। महर्षियों में शिरोमणि व्यास भगवान का कथन है कि किसी भी जलाशय में स्नान करते समय 'स्वीमि तीर्थं स्वामि तीर्थं स्वामि तीर्थं' ऐसा स्मरण करते हुए स्नान करने से तीर्थराज में स्नान करने का फल भी मिलेगा और ऐसा पुण्यतीर्थ स्नान सकल मनोरथों की पूर्ति करता है; ब्रह्मपद प्राप्ति भी होगी। ऐसी महत्ता है, इस पुष्करिणी तीर्थराज की।

ब्रह्म पुराण

प्राचीन काल में सरस्वती देवी गंगादि सर्वतीर्थों से अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने की कामना से ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में सरस्वती नदी नाम से प्रवाहित होने लगी। कारणवश वह शापग्रस्त हो गयी और सब नदियों से अधिक गौरव नहीं पा सकी। सर्वतीर्थोत्कृष्ट होने की तीव्र इच्छा उसके मन में पैदा हुई। परमेश्वर के बारे में तप करने लगी। उसके तप से संतुष्ट होकर भगवान ने दर्शन दिए, तो सरस्वती ने कहा – 'हे भगवन्! मैं सर्वतीर्थोत्कृष्ट होने की कामना से सरस्वती के नाम से बहने पर भी पुलस्त्य ब्रह्म के शाप के कारण सर्व तीर्थ गौरव नहीं पा सकी। सर्वतीर्थ गौरव पाने का वर दीजिए।' भगवान वात्सल्य से बोले – 'हे सरस्वती! उस पुलस्त्य ब्रह्म का शाप गंगानदी के गौरव को घटा सकता है, पर पुष्करिणी नदी के गौरव का भंग नहीं कर सकेगा। अतः तुम अत्यन्त पवित्र उस वेंकटाद्रि शिखर पर पुष्करिणी के रूप में वास करो। मैं तुम्हारे दक्षिण भाग पर रहूँगा। भुवन-त्रय के सब तीर्थ जो तीन करोड पचास लाख हैं, वर्ष-भर पापियों के संसर्ग से प्राप्त पापों से निवृत्त होने का मार्ग मुझसे पूछेंगे। मैं उनसे कहूँगा कि धनुर्मास के शुक्ल पक्ष में द्वादशी के दिन अरुणोदय के समय तुम्हारा संगम करने से पापों से निवृत्त होंगे। इस प्रकार सब नदियाँ तुम्हारे अभिषेक करेंगी। तुम्हारी कामना पूरी होगी।' अतः त्रैलोक के समस्त-तीर्थ इस पर्व-दिन स्वामि पुष्करिणी में संगम होकर पाप

निवृत्ति करके जाते हैं। महर्षि व्यास कहते हैं कि तीर्थराज-गौरव प्राप्त इस पुष्करिणी के तट पर श्रीनिवास भगवान लक्ष्मी सहित वैकुण्ठ छोडकर अपने भक्तों को तीर्थ प्रसाद अनुग्रह करके माया विमोचन करने वहाँ विराजमान हैं। अतः वेदव्यास महर्षि का कथन सत्य है कि यह पर्वत कलियुग वैकुण्ठ है तथा श्री स्वामि पुष्करिणी श्री भूदेवी से पालित भगवत् क्रीडास्थली है।

ब्रह्मपुराण के अनुसार इस पुष्करिणी में जो श्री स्वामी के सान्निध्य से पुनीत हो गया है, महान शक्तिवान नव तीर्थ हैं, जो इस प्रकार हैं –

१. पुष्करिणी के आंतरिक पूर्व-भाग में आयुप्रद **मार्कण्डेय तीर्थ** है।

२. आंतरिक आग्नेय में पाप विमोचक **आग्नेय तीर्थ** है।

३. दक्षिणी भाग में नरक से उद्धार करनेवाला **याम्य तीर्थ** है।

४. नैऋती भाग में ऋण-विमोचक **वशिष्ठ तीर्थ** है।

५. पश्चिम तथा वायव्य भागों में कैवल्यदायक **वारुणवायु तीर्थ** हैं।

६ व ७. उत्तर भाग में धन संपत्ति प्रदाता **धनद तीर्थ** है। दो तीर्थ हैं।

८. ईशान्य भाग में भक्ति मुक्ति प्रदायक **गालव तीर्थ** है।

९. पुष्करिणी के मध्यभाग में **सरस्वती तीर्थ** है, जिसका ऐतिह्य पिछले अध्याय में है।

इस प्रकार नव तीर्थों से शोभित इस पुष्करिणी का सेवन सर्वपुरुषार्थ साधक रूपा है।

वराह पुराण

प्राचीन काल में सांकाश्य देश में चन्द्र-वंशज राजा शंखण अपने पितु-पितामहों से प्राप्त राज्य का पालन करता था। एक बार सामन्त राजाओं ने राज्य पर आक्रमण करके उसे अपने अधीन में ले लिया। राज्य-भ्रष्ट राजा शंखण अपमान से दुःखी होकर अपनी पत्नी और मंत्रियों के साथ तीर्थयात्रा

श्री स्वामि पुष्करिणी, तिरुमल

मायावी परमानन्दं
त्यक्त्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।
स्वामिपुष्करिणी तीरे
रमया सह मोदते ।।

करते हुए 'रामसेतु' गए। वहाँ से लौटते समय मार्ग में सुवर्णमुखरि नदी स्नान और पद्मसरोवर (तिरुचानूर) में अनुष्ठान पूरा करके वहाँ कुछ दिन रहने लगा। एक दिन राजा अपने राज्य-भ्रंश के बारे में चिंतित होकर भगवान से प्रार्थना करके सो गया। उस समय आकाशवाणी सुनकर वह जाग उठा –'हे राजन्! चिंता मत करो। यहाँ से एक क्रोश की दूरी पर वेंकटाद्रि है, जहाँ निर्हेतुक दयामय कमलापति विराजमान हैं। वहाँ उस दैव के प्रेमास्पद एक पुष्करिणी है। तुम वहाँ जाओ; उस पुण्य-तीर्थ में सुस्नात होकर स्वामी के दर्शन करते वहीं कुछ दिन रहो। तुम्हारी कामना पूरी होगी। सबेरे राजा ने उस तीर्थ पर जाकर कुटी बनायी और देवदर्शन करते छे मास तक रहा।

एक दिन सरोवर के मध्य भाग में श्रियःपति ने श्रीदेवी और भूदेवी सहित विमानारूढ़ होकर राजा को दर्शन दिया और कहा– 'हे राजन्! तुम दुःखी न होओ। तुम अपने राज्य को पाओगे। इस स्वामी-पुष्करिणी में स्नान करने से स्वामित्व को प्राप्त करोगे'। ऐसा कहकर अदृश्य हो गए।

शंखण आनंद से अपने राज्य को लौट जाने लगा। मार्ग मध्य में सामंतराजाओं ने परस्पर कलह करने से राजा को देखकर कहा –'हे राजा! अपने राज्य का आप ही पालन कीजिए'। शंखण को ले जाकर राजतिलक मनाया। अतः इस पुष्करिणी को स्वामित्व प्रदान करने की शक्ति होने के कारण 'स्वामि पुष्करिणी' यह नाम उसके लिए सार्थक है।

वराहपुराण भी महर्षि व्यास के स्वर में स्वर मिलाकर कहता है कि श्री भूदेवी दोनों देवेरियों से पालित यह पुष्करिणी अखिल भुवनैक सम्राट श्री श्रीनिवासजी की क्रीडास्थली है।

१. पद्मपुराण - सनन्दन योगी का मन्तव्य

'यह स्वामितीर्थ विष्णु पादोद्भव है; ब्रह्म करस्पर्श से पवित्र हुआ है; पवित्रीकरण समर्थ जल से यह तीर्थ परिपूर्ण है।'

२. सनक-योगी का मन्तव्य

'परात्पर श्रीनिवास के प्रेमनिवास का तटवर्ती होने से यह तीर्थ धन्य है। इस स्वामि-पुष्करिणी का सेवन ही आत्मसत्ता निदान है।'

३. श्री शौनक महर्षि का मन्तव्य

कीर्तन, स्नान तथा पान-सेवन से यह पुष्करिणी आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक रूप तापत्रय निवारिणी है।'

४. श्री शुकमहर्षि का मन्तव्य

यह पुष्करिणी सुरों, नरों तथा तिर्यग्जन्तुओं के लिए भी आत्म-शोधिनी है।'

इस प्रकार आत्मवेत्ताओं के अनुभवों से तथा महर्षियों और योगियों से इस पुष्करिणी की प्रशंसा नाना प्रकार से हुई है। ऐसे महात्माओं की संख्या पचास (५०) है। वे इस प्रकार हैं –

श्री स्वामी पुष्करिणी तीर्थराज की प्रशंसा जिन पचास महर्षियों से हुई है, उनके शुभ नाम –

१.अत्रि महर्षि २.व्यास ३.वसिष्ठ ४.पराशर ५. गौतम ६.भरद्वाज ७.मनु ८.यम ९.याज्ञवल्क्य १०.हारीत ११.अंगीरस १२.उशना १३.संवर्त १४.आपस्तंब १५.मरीचि १६.मृकण्डु १७.पुलस्त्य १८.कात्यायन १९.बृहस्पति २०.भृगु २१.वाल्मीकि २२.शंख २३.लिखित २४.शातातप २५.बोधायन २६.मार्कण्डेय २७.माण्डव्य २८.शाण्डिल्य २९.काश्यप ३०.कण्व ३१.अगस्त्य ३२.दुर्वास ३३. विश्वामित्र ३४.शक्ति ३५.शुक ३६.शौनक ३७. नारद ३८.क्रतु ३९.सत्याषाढ़ ४०.कुण्डिना ४१.हरित ४२.जैमिनि ४३.जाबालि ४४.पितामह ४५.सनक ४६.सनन्दन ४७.सनत्कुमार ४८.वामदेव ४९.सनातन और ५०.देवदर्शन।

इस प्रकार अनेक महात्माओं, पुराणों तथा नानाप्रकारों से स्तुत्य सर्वतीर्थों में राजतिलक प्राप्त यह पुष्करिणी अपने तट पर विश्व प्रभु श्री वेंकटेश्वर के आश्रय से उपनिषदों से प्रतिपादित ऐरम्मदीय सरोवर सदृश अद्वितीय महिमा से प्रकाशमान है।

२. कुमारधारा तीर्थ

श्री तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के सान्निध्य की वायव्य दिशा में मंदिर से पांच मील की दूरी पर यह पुण्यतीर्थ स्थित है। मुक्तिप्रद सप्ततीर्थों में यह एक है। इस तीर्थ का पर्व-समय माघ मास के मखा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन का दुपहर है। इस कुमाधारा पुण्यतीर्थ की महानता पुराणों द्वारा स्पष्ट विदित होती है।

वराह पुराण का कथन

इस तीर्थ में पर्वकाल के समय जो स्नान करते हैं, वो परात्पर के परमपद का श्रम प्राप्त श्रम करते हैं, जो आमुष्मिक फल है। इस पुण्य तीर्थ में ऐसी महान शक्ति है, जो वृद्ध को कुमार के सुरूप में बदल देती है। यह ऐहिक-फल है।

प्राचीन काल में वृद्ध ब्राह्मण मार्गभ्रंश से चिंतित होकर अपने पुत्र को इस प्रकार पुकारने लगा – 'हे कुमार, हे कुमार' कुमार का नाम कौण्डिन्य था। निर्हेतुक दयासागर श्री वेंकटेश्वर ने युवक के रूप में वहां प्रत्यक्ष होकर पूछा कि 'हे ब्राह्मण! तुम कौन हो?' उसने समाधान दिया कि मैं जो शतवृद्ध हूँ, अपने आश्रम तक नहीं जा सकता हूँ। परमेश्वर ने मुझे क्यों इस लोक में अभी जीवित रखा है – यही मेरी चिंता है। युवक के रूप में जो परमेश्वर था, उसने पूछा – 'हे दादा! तुम जीना चाहते हो या नहीं ?' वृद्ध ने जवाब दिया कि मुझे तो जीने की इच्छा नहीं है। परंतु आज तक मैंने पितृ-ऋण और ऋषि-ऋण न चुकाया। इस कारण जीना चाहता हूँ।' इन बातों को सुनकर भगवान ने उस वृद्ध का हाथ पकडकर अपने साथ चलने को कहा। भगवान उस वृद्ध का उसके आश्रम पर ले जाने के लिए चलता था । ब्राह्मण भी स्वामी का हाथ

पकडकर चल रहा था। मार्ग में एक प्रवाह को देखकर भगवान ने कहा कि तुम उस तीर्थ-प्रवाह में स्नान करो; तदुपरान्त आश्रम में जायेंगे।

ब्राह्मण के उसमें स्नान करते ही षोडश वर्षीय (सोलह साल) का युवक हो गया। उस युवक ब्राह्मण के सामने विश्वरूपा भगवान के रूप में दर्शन दिए। देवताएँ भी प्रत्यक्ष हुए। पुष्प-वृष्टि हुई। देवदुन्दुभियाँ बजने लगीं। देवताओं ने भगवान की स्तुति की, तो ब्राह्मण ने भी भगवान की स्तुति की। भगवान ने ब्राह्मण को उसके कर्मानुष्ठान के लिए पर्याप्त धन दिया। उसे कृतार्थ होने का आशीर्वाद देकर भगवान अदृश्य हो गए।

इस घटना को देखकर देवताओं ने कहा कि वृद्ध भी इस तीर्थ स्नान से कुमार हो जाता है। अतः यह कुमारधारा के नाम से विख्यात होगा। इतना ही नहीं, वरन् भविष्य में जो वृद्धावस्था का मानव इस तीर्थ में तीन मास तक स्नान करेगा, वह वज्रकायी तथा मनोहर रूपवान भी होगा। पापों की निवृत्ति होकर परमपद को प्राप्त करेंगे। ऐसा कहकर वे अपने स्वस्थान चले गए। यह ऐहिक और आमुष्मिक फल-प्रदाता तीर्थ माना गया है।

मार्कण्डेय पुराण

प्राचीन काल में देव-सेनापति कुमारस्वामी ने देवता की रक्षा के लिए तारकासुर का वध किया था। ब्रह्म-हत्या-दोष से निवारण करने की प्रार्थना महेश्वर से की थी। शंकर ने अपने पुत्र से कहा – 'मैं रहस्य की बात कहता हूँ। तुम्हारे हृदय में नारायण का नामस्मरण सदा गुप्त रहें। लक्ष्मीपति का निवास-स्थान वेंकटाद्रि पर जाकर श्री श्रीनिवास के दर्शन करो और कुमारधारा-तीर्थ में जाओ। वहाँ प्रणवपूर्वक श्रीवेंकटेश्वर का नाम-जप करते निवास करो।'

देवसेनापति अपने पिता के कहे अनुसार वेंकटाद्रि पर जाकर पहले चक्र-तीर्थ में स्नान करने के बाद स्वामि पुष्करिणी के पास गया। वह पर्वतारोहण करने ही लगा कि ब्रह्महत्या वेंकटाद्रि से एक क्रोस दूर पर ही उसे छोडकर रह गयी।

कुमारस्वामी-पुष्करिणी में स्नान करने के बाद श्रीस्वामी की परिक्रमा और दर्शन करके पापनाश गया। वहाँ भी स्नान करके कुमारधारा तीर्थ पर गया। वहाँ स्नान करते और उपवास से स्वामी के नाम मन्त्र का जप करता था। तपस्या भी करने लगा।

माघ पूर्णिमा के बुधवार दिन मख नक्षत्र युक्त मद्याह्न समय श्री स्वामी ने शंख-चक्र गदाधरी, कटिहस्त सहित जगन्मोहन रूप में उसके सामने साक्षात्कार दिया। इस शुभ समय पर ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवगण भी आया। सब के साथ कुमारस्वामी ने भी भक्ति से श्रीस्वामि की स्तुति की। भगवान ने संतुष्ट होकर कहा – 'हे महादेव कुमार! तुम मेरा नाम-जप करते सुखी रहो। यह तीर्थ तुम्हारे नाम पर 'कुमारधारिका' नाम से विख्यात होगा। इस माघ पूर्णिमा के दिन स्वामि पुष्करिणी से अधिक शक्ति इस तीर्थ में रहेगी। इस दिन इसमें स्नान करने से ब्रह्म हत्यादि का दोष निवारण होगा। गो, भू, सुवर्ण आदि का दान अनंत फलदायक होते हैं।' सब ने भगवान के इन वचनों को सुना। ऐसा कहकर भगवान अदृश्य हो गये।

३. तुम्बुरु पुण्य-तीर्थ

श्री वेंकटाद्रि पर विराजमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर से लगभग सात मील की दूरी पर महान पवित्र तुम्बुरु तीर्थ है। मुक्तिप्रद सप्त तीर्थों में यह भी एक है। फाल्गुन-मास के उत्तर-फाल्गुनी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा दिन का मध्याह्नकाल इस तीर्थ का पर्वकाल है। इस पर्वकाल में इसमें स्नान करने से सर्वदोषों व पापों की निवृत्ति होगी और समस्त कामनाएँ पूरी होंगी। तुम्बुरु तीर्थों की महानता पुराणों में नाना प्रकार से वर्णित है।

ब्रह्मोत्तर खण्ड

प्राचीन काल में एक बार वीणा-वादन-प्रवीण नारद और तुम्बुरु दोनों आकाश-मार्ग में जा रहे थे। तुम्बुरु के विचित्र वीणा को देखकर नारद ने पूछा कि हे मित्र! तुम्हें यह वीणा कैसे मिली है ? तुम्बुरु ने कहा कि एक राजा की

सभा में राजा की स्तुति करते वीणवादन से संतुष्ट राजा ने पुरस्कार के रूप में यह वीणा दी थी। नारद क्रोधित होकर बोला –श्री महाविष्णु को छोडकर एक नर की जो स्तुति तुमने की है, तुम सत्पुरुष नहीं हो। तुम्हें दुर्जन सांगत्य का दोष लगा है, अतः तुम बिना वाक्, बिना सिर के ही भूपतन हो जाओ' इस शाप से वह अपने भाग्यवश भूमि पर सीधे अपने हरिकीर्तनादि फल से घोण-तीर्थ के मध्यभाग में जा गिर पडा। तुम्बुरु के भूपतन होते ही समझ सका कि वह वेंकटाद्रि पर्वत है। वह उस तीर्थ में धो नहाकर तट पर 'वेंकटेशो मां रक्षतु' इस मन्त्र का जप करने लगा। एक साल बीत गया।

फागुन-मास की पूर्णिमा के दिन दयामय प्रभु श्री वेंकटेश ने लक्ष्मी सहित अनंत गरुड तथा विष्वक्सेन आदि के साथ घोणतीर्थ पधारकर तुम्बुरु को दर्शन दिया। ब्रह्मादि देवता भी आकर उसमें स्नान कर चुके। उस समय तुम्बुरु ने भगवान से प्रार्थना की कि यह तीर्थ मेरे नाम पर प्रसिद्ध होने का वर दीजिए। प्रभु ने ऐसा ही वर दिया। अतः इस तीर्थ का नाम तुम्बुरु तीर्थ है। तुम्बुरु ने उस तीर्थ में जो स्नान किया और भगवान का अनुग्रह जो पाया, उनके कारण नारद पुनः तुम्बुरु से मित्रता करने लगा।

इस तीर्थ की महिमा ऐसी है कि जिस पाप का कोई प्रायश्चित नहीं है, ऐसे पापों का निवारण भी इस तीर्थस्नान से होता है। इसका एक उज्वल उदाहरण इस प्रकार दिया जाता है–

सर्वाबद्ध नामक एक ब्राह्मण दुराचारी और नास्तिक होकर दक्षिणा पाने की दुराशा से यज्ञ-वाटिकाओं में जाता फिरता था। यज्ञ के निर्वाहक ब्राह्मण यह कहकर उसे निकाल देते थे 'वसिष्टवत्तिष्ठसि सभासु'। वह दुःखी होकर वसिष्ठ ही अपना शरणदायक समझकर उस मुनि से भक्ति करने लगा। महर्षि वशिष्ठ उसकी दीनता जानकर, उस पर दया करने लगा।

वसिष्ठ राजपुरोहित था। इस कारण उसे जो जो पाप संक्रमित हुए हैं, उनके बारे में तथा अपने आश्रितों के पापों की भी निवृत्ति करने के लिए ब्रह्मलोक

गया। भरी सभा में ब्रह्मा विराजमान था। महर्षि ने ब्रह्मा को नमस्कार करके विनती की – 'हे लोक पितामह! राजपुरोहित होने के कारण मुझे जो जो पाप संक्रमित हुए हैं, उनकी निवृत्ति का मार्ग बताइए'।

ब्रह्मा ने कहा कि पापों की निवृत्ति प्रायश्चित से ही होती है। वसिष्ठ ने पुनः प्रार्थना की कि 'हम दोनों के पाप प्रायः प्रायश्चित से दूर होनेवाले नहीं है। इसलिए मैं आपकी शरण में आया हूँ। उचित सुझाव देकर हमारी रक्षा कीजिए।'

ब्रह्मा कुछ देर सोच-विचार कर बोले– 'वेंकटाद्रि के मध्य भाग में घोण-तीर्थ है। मीन मास की पूर्णिमा के दिन उसमें स्नान करने से महापाप भी नाश हो जाते हैं।'

तदुपरान्त महर्षि वसिष्ठ भूलोक आया। सार्वाबद्ध को अपने साथ लेकर घोण-तीर्थ में पर्व-दिन पर स्नान करके दुर्दम पापों का प्रक्षालन कर सके। महर्षि ने प्रभु श्रीवेंकटेश्वर की स्तुति की, तो जगत्पति जगन्मोहन रूप से प्रत्यक्ष हुए; उन दोनों की आश्रित भक्ति से संतुष्ट होकर सार्वाबद्ध को सर्वशक्ति समन्वित किया। इस प्रकार तीर्थ की पवित्रता और शक्तिमत्ता को भगवान ने सिद्ध किया। सर्वविद्ध पर अनुग्रह करने के बाद अन्तर्धान हो गए।

स्कन्द पुराण

प्राचीन काल में तुम्बुरु नामक एक गन्धर्व ने अपनी पतिव्रता पत्नी को उपदेश किया कि इस माघत्रय में मेरे साथ स्नान करके विष्णु की उपासना करो। परंतु वह गन्धर्वकान्ता शीतलता की भीति से पति के उपदेश को नहीं मान सकी। तुम्बुरु यद्यपि शान्तचित्त होने पर भी पत्नी की अप्रिय बातों से खीझकर ऐसा शाप दिया –

पुत्रं च धर्मविमुखं, भार्यांचाऽप्रियवादिनीम
अब्रह्मण्यं च राजानां सद्यशशापेन दण्डयेत्॥

पति बोले 'शिक्षा स्मृति के अनुसार हे अप्रियवादिनी! तुम वेंकटाद्रि पर घोण-तीर्थ समीपस्थ अश्वत्थ-वृक्ष के खोखले में निर्जल प्रदेश में मण्डूक बनकर रहो।' उसकी पत्नी भयभीत होकर अपने पति के चरणों पर नतमस्तक होकर शाप-विमोचन की प्रार्थना करने लगी। गन्धर्व ने कहा – 'जब अगस्त्य महर्षि घोण-तीर्थ में स्नानकर उस वृक्ष की छाया में बैठे घोण-तीर्थ की महत्ता के बारे में अपने शिष्यों को उपदेश करेगा, उस तीर्थ की महत्ता सुनने से तुम शाप से विमोचित हो, मेरे पास आ सकती हो'। इस प्रकार शाप - विमोचन का मार्ग बतलाया।

उसी क्षण वह गन्धर्वकान्ता वेंकटाद्रि पर मण्डूक रूप धारण करके धीरे-धीरे उस अश्वत्थ वृक्ष के तले में बसने लगी। कुछ समय अनन्तर अगस्त्य महर्षि ने वेंकटाद्रि पर श्रीस्वामी के दर्शन करके तुम्बुरु तीर्थ में नहाया। तदनन्तर वृक्ष (अश्वत्थ वृक्ष) की छाया में बैठे अपने शिष्यों से उस तीर्थ की महत्ता बताते थे।

इस माहात्म्य को सुनकर गन्धर्व वल्लभा ने शाप-विमुक्त होकर मण्डूक रूप त्यजकर नारी रूप धारण किया। उसने महर्षि को प्रणाम करके अपने शाप का कारण बताया। महर्षि कृपालु हो उसे पातिव्रत्य के धर्मों का उपदेश किया। वह भी धर्मपरायणा होकर अपने पति की सन्निधि को प्राप्त कर सकी।

पुराणों के अनुसार इस तुम्बुरु तीर्थ के दो नाम प्रसिद्ध हैं घोण-तीर्थ और तुम्बुरु तीर्थ।

४. आकाश-गंगा पुण्य तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अवतरण प्रदेश श्री वेंकटाद्रि पर स्वामी के आनंद-निलय से दो मील की दूरी पर आकाश-गंगा तीर्थ स्थित है। मुक्तिदायक सप्त तीर्थों में यह भी एक माना जाता है। इस तीर्थ का पर्व-दिन मेष-मास के चित्ता नक्षत्र युक्त पूर्णिमा का दिन है। इस तीर्थ जल का माधुर्य इतना श्रेष्ठ है कि देवताओं से पान किए जानेवाले अमृत के माधुर्य से भी

स्वादिष्ट है। इस तीर्थ-जल का उपयुक्त नाम 'अमृत' है, जो अपने नाम को सार्थक करके प्रवाहित होता है।

हिमालय से प्रवाहित गंगा तीन प्रवाहों में विभाजित हो गयी, जो स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोकों में बहती है और 'त्रिपथगा' नाम से (प्रसिद्ध) है। यह पुण्य तीर्थ आकाश मार्ग से प्रवाहित होने के कारण 'आकाश गंगा' नाम से कीर्तित है। शंकर के जटा-जूट से प्रवाहित गंगा की भाँति यह तीर्थ-राज श्रीनिवास के भक्तों के शिरों पर झरकर अभिषेक (भक्तों का) करता है और उन्हें पवित्रतम बनाता है।

मर्त्य-गंगा श्रीकाशी विश्वेश्वर की सन्निधि में प्रवाहित करती हुई श्रीविश्वेश्वर स्वामी के अभिषेक आदि कैंकर्यों के लिए उपयुक्त होती है।

यहाँ श्री वेंकटाद्रि पर आकाश गंगा का जल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का अभिषेक कैंकर्य आदि के लिए उपयोगित होता है।

इस पवित्र तीर्थ की महान् शक्ति की प्रशस्ति पुराणों में इस प्रकार वर्णित है–

भविष्योत्तर पुराण

प्राचीन काल में केसरि नामक महात्मा की पत्नी अंजनादेवी नामक वनितारत्न ने संतान के लिए मातंग महर्षि के आश्रम में जाकर उससे अपनी दुखडा सुनाई। महर्षि दया करके बोले – 'हे वनिता-रत्न! पंपा सरोवर की प्राची दिशा में पचास योजनाओं की दूरी पर नरसिंहाश्रम है। उसके दक्षिण में नारायण-गिरि पर श्रीस्वामि पुष्करिणि है, जिसके उत्तरी भाग में एक क्रोश दूर पर आकाश गंगा नामक महत्तर और शक्ति संपन्न तीर्थराज है। तुम वहाँ निवास करो; द्वादश वर्ष उस पुण्य तीर्थ का स्नान करके तपस्या करो। इससे तुम लोकोत्तर शक्तिशाली संतान को पाओगी।'

अजनादेवी महर्षि के कहे अनुसार नारायण-गिरि पर गयी; वहाँ की पुष्करिणी में नहाकर स्वामी के दर्शन किए। वहाँ से आकाशगंगा तीर्थ के

पास आहार वर्जित दीक्षा से तप करने लगी। एक वर्ष के बाद वायुदेव उसे प्रतिदिन एक फल देता था। एक दिन वीर्य से भरे फल को उसकी अंजलि में दिया। क्षुधार्थी तपस्विनी अंजना देवी ने उस फल को खा लिया।

तदनन्तर वह गर्भवती हुई और दसवें महीने में अपार शक्ति संपन्न लोकोत्तर वीर हनुमान को उसने जन्म दिया।

स्कान्द-पुराण

इस पुराण में आकाशगंगा नामक अध्याय में उपरोक्त वृत्तान्त को ही कुछ बदलकर कहा गया है।

प्राचीनकाल में गोदावरी नदी के तट पर पुण्यशाली और गुणसंपन्न एक द्विजोत्तम रहता था। उसने अपने पिता के प्रत्याब्दिक-दिन दैव-बल से वेदवेदांगपारत को अतिथि के रूप में नियुक्त किया और उसको आचार के अनुसार अपने पितृ-स्थान में निमंत्रित श्राद्ध-कर्म संपन्न किया।

कुछ समय के उपरान्त उस गृहस्थ के मुख विरूप होकर गार्दभ का रूप धारण करने लगा। वह खिन्न होकर सुवर्णमुखरी नदी तट पर निवसित अगस्त्य महर्षि के पास गया। उसके चरणों पर नतमस्तक हो प्रार्थना करने लगा कि किस कारण मेरे मुख में विकृत रूप आया और इस दोष का परिहार करके अपनी रक्षा करें।'

त्रिकालज्ञ महर्षि बोले–'हे पुण्य भागे, तुम अपने पिता के श्राद्ध-कर्म वन्ध्यापति (संतानहीन स्त्री का पति) जो वेदवेत्ता था, उसे अपने पितृ-स्थान पर निमंत्रण करने के दोष से यह विरूपता आई है।'

'अतः तुम वेंकटाद्रि पर जाकर पुष्करिणि में स्नान करके श्रीस्वामी के दर्शन करो। वहाँ से कतिपय दूरी पर स्थित आकाश-गंगा में विधि-विधान से स्नान करो। उस वियद्गंगा के स्नान-मात्र से तुम्हारे मुख का विरूप अदृश्य हो जायेगा।'

उसी क्षण वह पुण्यचरित वेंकटाद्रि पर गया। वहाँ की पुष्करिणि में स्नान करके स्वामी के दर्शन किए। वहाँ आकाशगंगा में स्नान करने मात्र से उसकी मुख-विरूपता दूर हो गयी। वह सुंदर मुखी हो गया। स्कन्द पुराण का श्लोक इस प्रकार है –

पुष्प मूल फलैरपि केवलैर्वर्तयेत् सदा।
काल पक्के स्स्वयं शीर्णे वैंखानसमतेस्थित: ॥

मनु और व्यास महर्षियों का कथन इस प्रकार है –

'वानप्रस्थ वही है, जो समय की अवधि से पके हुए फल, फूल अथवा कन्द-मूल खाकर वैखानस शास्त्र के अनुसार धर्मानुष्ठान करता हो। ऐसे वानप्रस्थाश्रम से रामानुज नामक एक विष्णु-भक्त आकाशगंगा के तट पर तीव्र तपस्या करता था। उससे संतुष्ट हो भगवान श्रीनिवास गरुड-वाहन पर आरूढ़ होकर विष्वक्सेनादि परिवारों से अपने वैभव सहित रामानुज के सामने प्रत्यक्ष हुए और स्वामी ने उससे कहा कि तुम जो वर चाहते हो, कहो।

रामानुज महर्षि बोले – 'हे वेंकटेश प्रभो! आपके दिव्य स्वरूप के मैंने दर्शन किए, जो ब्रह्म रुद्रादियों को भी अप्राप्य है और जो महान योगियों के लिए असंभव है। मेरा जन्म धन्य हो गया। इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ और कोई नहीं है। 'संसार सागर समुत्तरणैक सेतु रूपा' आपके दिव्य चरणारविन्दों में प्रगाढ़ भक्ति हो जाय – यही मेरी प्रार्थना है।'

श्री स्वामी ने 'तथास्तु' कहा और भी कहा – 'मेष मास में चित्ता नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन इस आकाश गंगा में जो स्नान करते हैं, वे विष्णु के परम पद को प्राप्त करते हैं, जहाँ से आवागमन नहीं होता।' ऐसा कहने के बाद श्री स्वामी अन्तर्हित हुए।

अत: कैमुतिक-न्याय के अनुसार जो इस तीर्थ में स्नान और तप करते हैं, उनके लिए मोक्षकरतलामलक है।

५. पापविनाश पुण्य तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर से ढ़ाई मील की दूरी पर परम पवित्र तीर्थराज है, जिसका अन्वर्थ नामधेय 'पापविनाशन' है। यह पुण्य तीर्थ अपने नाम की सार्थकता करते हुए अपार शक्तिशलिनी होकर प्रवाहित होती है। यह तीर्थ मोक्षदायक सप्त तीर्थों में एक है। इस तीर्थ का पर्वदिन आश्वयुज मास के शुक्ल पक्ष में उत्तराषाढ़ा नक्षत्र युक्त सप्तमी रविवार अथवा उत्तराभाद्रा नक्षत्र युक्त द्वादशी दिन माना गया है।

पापविनाशनम पुण्य तीर्थ का माहात्म्य पुराणों में अनेक रीतियों से वर्णित है।

स्कन्द पुराण

हिमगिरी के पार्श्व में पवित्र ब्रह्माश्रम है। एक दिन वहाँ दृढ़मति नामक शूद्र आया था। वहाँ के ऋषि-मुनियों की तीव्र तपस्या देखकर वह बहुत प्रसन्न-चित्त हो गया। स्वयं भी ऐसे यज्ञ और तप करने की इच्छा से वह कुलपति मुनि के पास गया और अपनी इच्छा प्रकट की। मुनि ने उससे कहा कि यह तुम्हारे योग्य कार्य नहीं है। अपितु दृढ़मति अपनी तीव्र इच्छा को दमन नहीं कर सका। स्वयं एक पर्णशाला बनाकर तप करने लगा।

एक दिन गर्ग वंशी सुमति नामक द्विज उस पर्णशाला में आया और दृढ़मति ने उसका बहुत आदर-सत्कार किया। सुमति भी उससे संतुष्ट हुआ और प्रतिदिन उसके पास जाकर दैदिक धर्मों का बोध करने लगा। इससे दृढ़मति कर्मनिष्ठावान् हो गया।

कालान्तर में द्विज मरकर कई नरक यातनाओं के झेलने के बाद पशु-पक्षी आदि निछले जन्मों के बाद ब्राह्मण-जन्म पा सका। इस जन्म में उपवीत होकर धर्माचरण करने लगा। परंतु एक दिन अरण्य में एक ब्रह्मराक्षस से पीडित होने लगा। कर्म-भ्रष्ठ पुत्र को देखकर उसका पिता चिंतित हुआ और उसे अगस्त्य महर्षि के पास ले गया। पिता महर्षि को प्रणाम किया और

अपने पुत्र के बारे में बताया। पिता ने ब्रह्मराक्षस से अपने पुत्र की रक्षा करने की प्रार्थना की। अगस्त्य महर्षि ने ध्यानमग्न हो सब विषय जान लिए और बोले– 'हे द्विजोत्तम! तुम्हारा पुत्र पिछले जन्म में ब्राह्मण होकर भी वेदविरुद्ध कर्म और अधर्माचरण करने के कारण नरक प्राप्त करके नीच जन्म भी पाए। पूर्वजन्मदोष से ब्रह्मराक्षस से पीडित हो रहा है। इस दोष का परिहार बताता हूँ। यहाँ श्री वेंकटाद्रि पर सर्वपापनिवारक पापविनाशक तीर्थ है। उस तीर्थ में तीन दिन नियम से स्नान करने से इस दोष से मुक्त हो जायेगा।'

पिता अपने पुत्र को लेकर श्री वेंकटाद्रि पर स्थित पापविनाशक तीर्थ पर गया। वहाँ तीन दिन स्नान करने के बाद ब्रह्मराक्षस दूर हो गया। पुत्र स्वस्थ हो गया और मरण तक सर्व संपदाओं से सुसंपन्न हो गया।

स्कन्द पुराण – दूसरा इतिवृत्त

प्राचीनकाल में भद्रमति नामक एक ब्राह्मण था, जो वेद-वेदांगों में पारंगत था और जिसके छे पत्नियाँ थीं, जिनके नाम क्रमशः कृपा, सिन्धु, यशोवती, कामिनी, मालिनी और शोभा थे। भद्रमति गृहस्थाश्रम में रहते दो पुत्रों के पिता हो गए। दरिद्रता के कारण उनका पोषण उसके लिए भार हो गया।

उसकी व्यथा देखकर कामिनी नामक पत्नी ने कहा – 'हे नाथ! मेरा पिता भी दरिद्रता से व्यग्र था। उस समय महर्षि नारद के उपदेश के अनुसार श्री वेंकटाद्रि पर जो पापविनाशक तीर्थ है, उसके तट पर भूमि का दान करके सकल ऐश्वर्य संपन्न हो गया और अंत में विष्णु पद प्राप्त किया। हम भी ऐसे भूदान से सुखी हो सकते हैं।' उसकी बातों से भद्रमति संतुष्ट हो गया। वह अपने कलत्रों सहित वेंकटाद्रि जाने को निकला। मार्ग मध्य में सुशालि नगर में ऐश्वर्यवान् सुघोष के आश्रय में गया। उसने सुघोष से कहा – 'हे द्विजोत्तम! मैं दारिद्र्य से पीडित हूँ। मुझे पाँच हाथ प्रमाण की भूमि दान में दीजिए।'

सुघोष ने भी प्रसन्न होकर हस्त प्रमाण की भूमि विष्णु स्वरूप भद्रमति को दान में दिया।

भद्रमति भी संतुष्ट होकर वेंकटाद्रि पर गया। वहाँ श्री वेंकटेश्वर के दर्शन के बाद पापाविनाशक तीर्थ में सुस्नात होकर वहाँ के विष्णु बुध्या नामक एक विष्णु-भक्त को पंचहस्त प्रमाण भूमि को दान में दिया। श्री महाविष्णु भगवान गरुडारूढ़ हो प्रत्यक्ष हुआ और वत्सलता से बोला – 'हे द्विजोत्तम! मैं तुम्हारे कार्य से संतुष्ट हूँ। तुम इस लोक में सर्व भोगों का अनुभव करके अंत में मोक्ष पाओगे।' ऐसा कहकर स्वामी अदृश्य हो गए।

६. पाण्डव पुण्य तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर से कतिपय दूरी पर (आधी मील) सप्त तीर्थों में एक माने जानेवाला मुक्ति प्रदायिनी पाण्डव तीर्थ है। इस तीर्थ का पर्वकाल वृषभ-मास के शुद्ध द्वादशी, भानुवार अथवा बहुल द्वादशी का मंगलवार होता है।

पुराणों में इस तीर्थ की प्रस्तावना है, जिसके अनुसार यह तीर्थ ऐहिक एवं आमुष्मिक फल प्रदान करने की शक्ति रखता है।

वराहपुराण

धर्म संरक्षण के लिए तथा साधु संरक्षणार्थ अवतरित श्रीकृष्ण के प्राण सम पाण्डव पुत्र भगवान श्रीकृष्ण से आदेश पाकर त्रिविध ताप (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) हरण के लिए पुण्यस्थली वेंकटाद्रि पर पहूँचे। वहाँ क्षेत्र-पालक से पालित रक्षित एक पुण्य तीर्थ-तट पर निवास करने लगे। तीर्थ-स्नान करके भगवान की उपासना करते हुए एक साल बीत गया।

एक रात के समय धर्मराज को स्वप्न में अन्तर्वाणी सुन पडी कि आप लोग इस तीर्थ का सेवन करते रहने से आपको पुण्य योग प्राप्त हुआ है तथा

आपके कल्मष भी दूर हो गए। शीघ्र ही युद्ध में विजयी होंगे और अपने खोए राज्य को प्राप्त करेंगे। इस घटना के उपरान्त श्रीकृष्ण का दौत्य और उनके सारथ्य से युद्ध में विजयी हुए तथा राज्य का प्राप्त किया। उनके रहने के कारण इस तीर्थ कानाम पाण्डव-तीर्थ है।

पद्मपुराण

पाण्डवों ने अरण्यवास और अज्ञातवास को पूरा करके छोटे राज्य से भी संतुष्ट होने के लिए दूतकार्य के लिए भगवान श्रीकृष्ण को भेजा था। भगवान के उपदेश का भी तिरस्कार करनेवाले अपने बन्धुजनों के साथ युद्ध में वजियी होकर राज्य को पाया। परंतु बन्धुजनों के वध से प्राप्त पाप का निवारण करने के लि दीन होकर वासुदेव की शरण में गए। भगवान कृष्ण की सलाह से पाण्डप पुत्र इस तीर्थ में स्नान करके पुनीत हो गए। तदनन्तर श्रीस्वामी के दर्शन और अर्चना करके अपने स्वस्थल चले गए। इस कारण से भी इस तीर्थ का नाम पाण्डव तीर्थ है। अतः यह तीर्थ ऐसा शक्तिमान है, जो सर्वपापों का निवारण करके सर्व फलप्रदाता है। श्रीस्वामी के आलय के समीप होने से भक्तजनों के लिए सुलभ साध्य एवं त्रिकालों में सेवन योग्य है।

यह स्पष्ट हो गया है कि स्कन्ध-पुराण के अनुसार भी ये छे तीर्थ मुक्तिप्रदाता माने गए हैं।

७. रामकृष्ण पुण्यतीर्थ

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि से छः मील की दूरी पर श्री वेंकटाचल पर परम पवित्र रामकृष्ण पुण्यतीर्थ है। इस तीर्थ का माहात्म्य अनेक पुराणों से विदित होता है।

स्कन्द पुराण

रामकृष्ण नामक महर्षि ने अपनी साधना के लिए एक तीर्थ बनाकर उसके तट पर रहने लगा। इस तीर्थ में स्नान आदि करते हुए तीव्र तपस्या करने लगा। महाविष्णु के बारे में तप करने से वे साक्षात्करित हुए। अतः यह

अपार शक्ति प्रदाता माना जाता है। जो मानव अज्ञान से अपने माता-पिता तथा आचार्यों के प्रति कृतघ्न होता है और उनका अपमान करता है, वह इस तीर्थ जल में स्नान करने से कृतघ्नता दोष का परिहार हो जाता है। अपने माता-पिता तथा आचार्यों के अनुग्रह के पात्र भी होंगे। अतः यह तीर्थ सर्व सुख प्रदाता माना गया है।

८. देव पुण्य-तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर के दिव्य मंदिर के वायव्य भाग में वेंकटाद्रि के गुंहा प्रदेश में परम पावन शुभंकर देवतीर्थ नामक पुण्यतीर्थ विराजमान है। इस तीर्थ का सेवन देवताओं से अधिक माने जाने के कारण और इस तीर्थ से देवताओं का प्रेम अधिक होने से, इसका नाम देव पुण्य-तीर्थ हुआ है।

स्कन्द और ब्रह्म पुराणों में इस तीर्थ को सप्त-तीर्थों में न माने जाने पर भी वराहपुराण में इसे मुक्ति प्रदाता तीर्थ माना गया। इस तीर्थ के पर्वदिन पुष्यमी नक्षत्रयुक्त गुरुवासर और व्यतीपातयोग में श्रवण-नक्षत्र युक्त सोमवार भी हैं।

वराहपुराण

इस पुराण में देव पुण्य-तीर्थ की महत्ता की प्रशंसा इस प्रकार है –

इस देव पुण्य-तीर्थ में पर्व-दिन में जो महापुरुष स्नान करते हैं, उनके अज्ञान कृत दोषों को नाश होता है तथा पुण्य की वृद्धि होती है। वे पुत्रपौत्रादि संपदाओं से वैभवपूर्ण जीवन बिताकर देहपतन के समय भगवान का चिंतन और मनन करते रहेंगे और देह को एक जीर्णवस्त्र की भाँति त्याग करेंगे; इस प्रकृति से मुक्त होकर देवयान-मार्ग से ब्रह्माण्ड-कटाह को पारकर विष्णु-लोक में नित्यानंद पायेंगे।

९. चक्र पुण्य-तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य मंदिर के (वेंकटाद्रि पर) दक्षिण भाग में यह पवित्र तीर्थ स्थित है। चक्रतीर्थ की महिमा स्कन्द पुराण में इस प्रकार है।
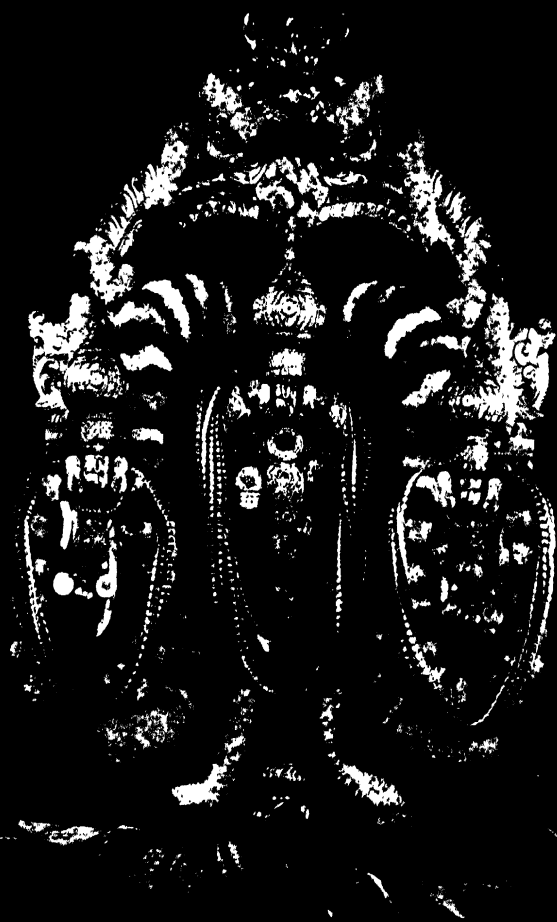
श्री वेंकटेश्वर स्वामी का पवित्रोत्सव

पूजने च द्विजश्रेष्ठ मंत्रतंत्र विपर्यये
द्रव्यलोपविघाते तु तस्यशान्त्यै द्विजोत्तम ।
वर्षे वर्षे तु कर्तव्यं प्रायश्चित्तं महाधिकं
पवित्रेत्वकृते वर्षे ह्यर्चनं निष्फलं भवेत् ।।

- कपिंजल - ३२-८, ९.

स्कन्द पुराण

एक समय की बात है। भगवान ने अपने भक्त की रक्षा एक राक्षस से करने के लिए अपने चक्रायु', से राक्षस-संहार किया था। इस घटना से भक्त ने इस तीर्थ पर भगवान की स्तुति की थी। लोकरक्षा के लिए श्री स्वामी के चक्रायुध का प्रयुक्त हुआ था। इस कारण इसका नाम चक्रतीर्थ पडा है।

इस तीर्थ के वास और स्नान से राक्षसों की हिंसा से भी मुक्त हो जायेंगे। पाप-हरम होगा। पुत्रपौत्रादि संपदा प्राप्त होगी। देहावसान में विष्णु-लोक की प्राप्ति होगी।

वराहपुराण तो इस तीर्थ को भी सप्ततीर्थों में एक मानता है और इसे प्रवर-तीर्थ कहता है। इस तीर्थ की महिमा इस ग्रन्थ के उत्सव-भाग में भी प्रस्तावित हुई है।

१०. सनकसनन्दन पुण्य-तीर्थ

(समस्त पापों में हलण-शील श्रीवेंकटाचल पर अनेकानेक करोडों पुण्य-तीर्थ हैं। उनमें प्रधान तीर्थों में मुक्ति-प्रदाताओं की प्रस्तावना ही की गई है। अन्य पुण्य तीर्थों की महिमा विदित करने के लिए उनमें से कुछ ही तीर्थों की प्रस्तावना स्थाली-पुलाक-न्याय से की गयी है।) श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अवतरित पुण्य प्रदेश श्री वेंकटाद्रि पर दिव्य मंदिर से साढ़े तीन मील की दूरी पर सनकसनंदन पुण्यतीर्थ है। इस तीर्थ से योगिवर्य सनकसनंदन आदि का संबंध होने के कारण इस तीर्थ को सनकसनंदन तीर्थ कहते हैं। यह तीर्थ पापविनाश के उत्तरी भाग में एक मील के दूर पर रहस्य रूप से योगियों एवं सद्बिगणों से सेवन किया जाता है। योग-निष्ठा के जो पुरुष हैं, वे इस तीर्थ से परिचित होते हैं; वहां जाकर अपनी योग साधना में रत रहते हैं। सामान्य मानवों को गोचर नहीं होता है। यह अज्ञात-तीर्थ माना जाता है। विज्ञों का कथन यही है।

वराहपुराण

इस पुराण में भी यही मन्तव्य व्यक्त हुआ है कि यह तीर्थ योगियों की साधना-स्थली है। जो योग-निष्ठा-गरिष्ठ है, वे मार्गशीर्ष मास के शुद्ध द्वादशी दिन अरुणोदय में श्री स्वामि पुष्करिणी में स्नान करके त्रयोदशी से श्रीवेंकटेश्वर का अष्टाक्षरी-मन्त्र जप दस सहस्र इस तीर्थ में करने से योग-साधना में सफलता प्राप्त करेंगे। जो इस प्रकार नियम और संयम से करते हैं, उन पर श्री वेंकटपति का अनुग्रह होगा तथा अचिर काल में ही योगारूढ़ हो सकते हैं। वे प्राणायाम से वायु को तथा प्रत्याहार से इन्द्रियों को अपने वश में करते हैं। अनवरत ध्यान-योग में रहकर भौतिक जगत से दूर रहते हैं। इस प्रकार प्रवाह-रूपा-ध्यान में मग्न रहकर परमपद समाधि को प्राप्त करते हैं।

ऐसे योगियों को 'संयम धनी' कहते हैं। पातंजल शास्त्र के अनुसार संयम में तीन अंग हैं, जो धारणा, ध्यान और समाधि हैं। संप्रदायवेत्ताओं का भी मन्तव्य यही है कि आधार-शक्ति, तीर्थ-शक्ति, मंत्र-शक्ति – त्रिशक्ति प्राप्त होने से भगवदनुग्रह प्राप्त करने में अवरोध नहीं है। अतः पूर्णयोग से (योगारूढ़) संयम धनी होने में कोई आक्षेप नहीं हो सकता।

११. कायरसायन पुण्य-तीर्थ

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि (मंदिर) से साढ़े तीन मीलों की दूरी पर स्थित सनकसनंदन तीर्थ के समीप यह पुण्य-तीर्थ स्थित है। यह कायरसायन पुण्य-तीर्थ प्रत्यक्ष फलप्रदाता है।

इस तीर्थ की शक्ति वर्णनातीत है। पाण्डु-वर्ण (पीले रंग) पत्रों को इस तीर्थ में रखते ही एक पल में श्यमा वर्ण हो जाते हैं। जो योगाभ्यासी साधक हैं, वे इस तीर्थ के सेवन से शीरीरिक और मानसिक दृढ़ता प्राप्त करके योग-सिद्धि पाने में सफल हो जाते हैं। इस तीर्थ स्नान से महात्माओं तथा पुण्य-पुरुषों के भी दर्शन होते हैं, जिससे ज्ञान वृद्धि होती है।

परंतु यह तीर्थ-राज इतने रहस्य स्थान में है कि पत्थरों से इसके मार्ग को योगियों ने बंदकर रखा है। अपितु नितांत श्रमसाध्य से इस तीर्थ पर जानेवाले साधक होता है। वह इस कायरसायन तीर्थ से संबंध रखकर शीरीरिक और मानसिक दृढता को प्राप्त करता है। शास्त्रों का मन्तव्य है कि साधना से तीर्थ सेवन करने पर भी श्रियःपति की अनुकम्पा अवश्य पाने का प्रयत्न भी करना चाहिए। यदि ऐसा मानसिक कैंकर्य नहीं करता है, तो स्वामी के प्रति द्रोह होता है, जिससे उसका अधःपतन होता है।

अतः मन, वाक् और कर्म त्रिकरणों से पूर्ण-शक्ति पाते हैं। अलावा इसके शरण्य मोक्षप्रदाता श्री बालाजी का सेवन प्रतिदिन करने से भवसागर को पार कर सकता है। भवतारण के लिए यह तीर्थ महान निधि है।

मानव मानसिक शक्ति से भगवान के ध्यान में स्वस्वरूप में लय हो जाता है।

वाचिक शक्ति की प्राप्ति से मन्त्र-जप-सिद्धि प्राप्त करता है। कायिक शक्ति से भगवान के कैंकर्य में निरवधिक भाग लेता है।

अतः इसमें लेश-मात्र संदेह भी नहीं है कि कायरसायन-तीर्थ साधकों के लिए महान निधि सदृश है।

१२. फल्गुनी पुण्य-तीर्थ

श्री बालाजी के आनंद-निलय की उत्तरी दिशा में श्री वेंकटाचल पर महान् शक्तिवान तीर्थ है, जिसका नाम फल्गुनी पुण्यतीर्थ है। इस तीर्थ की महिमा वराह पुराण में इस प३कार है –

वराहपुराण

इस तीर्थ में जो लोग उत्तरफल्गुनी नक्षत्र युक्त फाल्गुन मास की पूर्णिमा के दिन नियमानुसार स्नान करते हैं, उनके गृहों में लक्ष्मीदेवी संतुष्ट होकर सर्वकामना - प्रदाता के रूप में रहती है।

समस्त जगन्नियन्ता वैकुण्ठ त्यजकर श्री बालाजी के नाम से वेंकटाद्रि पर प्रेम से बसने लगा है। एक बार श्री स्वामी के अद्वितीय वैभव संपन्न उत्सवों को देखने के लिए ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि देवतागण, सनकसनंदन, वसिष्ठ आदि मुनि-गण वेंकटाचल पर आए थे। स्वामी की आज्ञा लेकर उत्सवों के बाद ब्रह्मा अपने हंसवाहन पर आरूढ़ हो सत्यलोक चले गए। देवेन्द्र भी विमान पर आरूढ़ हो अमरावती पहुँचा। लेकिन पार्वतीपति ईश्वर अपने प्रमथ-गणों से परिवृत्त वेंकटाचल की परिक्रमा करने लगा। इस समय ईश्वर वेंकटाद्रि की आग्नेय दिशा में शेषाचल के नीचे कपिल सरोवर को अपना वासयोग्य स्थल निश्चिय करके अपने रजताचल चले गए। सनकनसंदन आदि योगिवर भी पापविनाशन के अरण्यों से मुग्ध होकर वहीं बसने का निश्चय कर चुके। उस समय सप्त महर्षिगण फल्गुनी-तीर्थ के तट पर आश्रम बनाकर तप करते थे।

इसी तीर्थ पर अरुंधती देवी भी तप करने लगी थी। उस साध्वी की तपस्या से लक्ष्मीदेवी प्रसन्न होकर उसके सामने प्रत्यक्ष हुई और उसने यह वर भी दिया कि जो इस तीर्थ में उत्तर फल्गुनी नक्षत्र युक्त फाल्गुन मास की पूर्णिमा के दिन स्नान करते हैं, उनके गृह में कामनाप्रदाता के रूप में रहूँगी।

इसलिए महार्षियों ने श्री बालाजी के दर्शन करते हुए इस तीर्थ में स्नान करते रहने के लिए, वहाँ निवास करने का निश्चय कर लिया। इन कारणों से फल्गुनी पुण्य-तीर्थ अपार शक्ति समन्वित माना जाता है।

लक्ष्मीदेवी उत्तर फल्गुनी नक्षत्र में यहाँ प्रकट होने के कारण इसका नाम उत्तर फल्गुनी थवा फल्गुनी पुण्य-तीर्थ नाम से प्रसिद्ध है।

१३. जाबालि पुण्य-तीर्थ

श्री बालाजी के दिव्य मंदिर से एक मील की दूरी पर पश्चिमोत्तर में एक पवित्र पुण्य-तीर्थ है। इस तीर्थ के तट पर महर्षि जाबालि आश्रम बनाकर

कर्म-निष्ठा से रहने लगे। अतः उसीके नाम से यह जाबालि पुण्य-तीर्थ नाम से प्रसिद्ध हो गया।

इस तीर्थ में स्नान करने से लोग पाँच महा-पातकों से भी निवृत्त होंगे। (ब्रह्महत्या, सुरापान, स्वर्ण की चोरी, गुरुपत्नी के अंगसंग और पातार्को के संसर्ग – ये पाँच महापातक माने जाते हैं।) जब इतने बडे पाप ही दूर हो जाते हैं, तो छोटे-मोटे दोषों की बात कहना क्या। स्कन्द पुराणान्तर्गत इतिवृत्त इस प्रकार है –

स्कन्द पुराण

कावेरी नदी के तट पर एक ब्राह्मण रहता था। वह महापातकों को सहवास, सह-भोजन आदि करके दुराचारी हो गया था। उसका ब्राह्मणत्वं भ्रष्ट हो गया। वह भेताल से पीडित होकर सारे देश में विचार-शून्य होकर भटकने लगा था।

एक बार उसके भाग्य-वश भेताल से भयभीत होकर दौडते-दौडते जाबालि तीर्थ में गोता लगाने लगा। उस दुराचारी के पाप दूर हो गए। भेताल भी इसे छोडकर भाग गया। अब वह स्वस्थ हो गया।

जब उसे अपने स्वस्थान का होश आया, तब चकित हुआ कि मैं कावेरी तट-वासी जो हूँ, यहाँ कैसे पहुँचा? वहाँ एक आश्रम को देखकर वहाँ गया। आश्रम में महर्षि जाबालि को प्रणाम करके अपना दुखडा इस प्रकार सुनता है – 'हे महर्षि! मैं कावेरी नदी तट-वासी एक दुराचारी ब्राह्मण हूँ। मैं इधर क्यों आया और कारण बताकर मेरी रक्षा कीजिए।'

जाबालि बोले – 'हे दुराचारी! तुम दुष्टों के सहवास के पातक हो गए थे। भेताल ने तुम पर आवाहित होकर तुम्हें घुमक्कड बनाया था। दैव-संकल्प से इस तीर्थ पर आए; इसमें डुबुकी लीं। अतः इस तीर्थ में डुबकी लेने माञ्त्र से भेताल तुम्हें छोड गया। इसलिए अब तुम्हें अपने स्वस्थान की

स्मृति आयी है। वह भेताल भी पूर्व-जन्म में ब्राह्मण था। वह अपने पिता का श्राद्धकर्म न करने के कारण पितृदेवताओं से शापग्रस्त हो, भेताल का जन्म पाया था। इस तीर्थ की महिमा से वह भेताल से छुट गया और विष्णु पद को प्राप्त किया है। तुम भी स्नान मात्र से परिपूत हो गए हो और अंत में विष्णु पद को पाओगे। जिस पाप के लिए कोई प्रायश्चित ही नहीं है, ऐसे पाप भी इस तीर्थ स्नान से नाश हो जायेंगे।

अतः जाबालि-तीर्थ मानवों के सर्वपापों का नाश करके परिपूत करने की अमोघ शक्ति रखता है।

१४. वराह पुण्य-तीर्थ

श्री बालाजी के दिव्य मंदिर से सटकर जो पुष्करिणी है, उसके वायव्य भाग में उत्तमोत्तम वराह पुण्य-तीर्थ राज है।

इस तीर्थ के अवतरण के इतिवृत्त अनेक पुराणों में मिलता है।

ब्रह्मपुराण

प्राचीन काल में दैत्यों ने भूमि को चुराकर पाताल में रख लिया था। ब्रह्मदेव ने भूमि का उद्धार करने की प्रार्थना भगवान विष्णु से की थी। महाविष्णु वराह का अवतार धारण करके रसातल में पहुँचा। वहाँ महा बलाढ्य हिरण्याक्ष का संहार किया। भूमि को अपने दान्तों के अग्रभाग में रखकर स्वस्थान में रख लिया।

ब्रह्मा ने लोक-कल्याण के लिए उस वराह रूपी भगवद्रूप को वेंकटाचल पर श्री स्वामि पुष्करिणी के तट पर प्रतिष्ठित किया।

प्रतिष्ठा के समय स्वामि-पुष्करिणी के वायव्य भाग में जलाधिवास की व्यवस्था की गयी। प्रतिष्ठा के अनन्तर ब्रह्मा ने आह्वानित देवगण पितृ देवतों और महर्षियों के साथ उस तीर्थ में पुण्य स्नान किया। तदनन्तर ब्रह्मा ने सबके सामने कहा 'यह जलाधिवास वराहतीर्थ नाम से विख्यात होगा। जो श्री बालाजी दर्शनार्थ आते हैं, वे पहले वराहतीर्थ में स्नान करके दर्शन के

लिए जावें। प्रप्रथम वराह का ही पूजन होवें।' इस प्रकार की व्यवस्था करके ब्रह्मा ने श्री स्वामी की अनुमति और अनुग्रह भी प्राप्त किया।

उस समय से वराह-तीर्थ स्नान, वराह दर्शन और पूजा प्रप्रथम किए जाते हैं।

उसी समय से वराह-मंदिर के सामने का तीर्थ वराह-तीर्थ नाम से संपन्न हुआ है। श्री स्वामी का तीर्थ और वराहतीर्थ एकाकार रूप में होने पर भी अनुष्ठान आदि शुभ समयों में दोनों की विशेष स्तुति की जाती है। .

ऐसा भी कहते हैं कि पुष्करिणी का दक्षिणी भाग श्री बालाजी का तीर्थ तथा उत्तरी भाग वराह-तीर्थ हैं।

१५. कपिल पुण्यतीर्थ

श्री बालाजी का अत्यन्त प्रीयमान प्रदेश जो वेंकटाचल है, उसके आग्नेय भाग के नीचे कपिल पुण्यतीर्थ हैं।

कार्तिक पूर्णिमा के अपराह्न के समय त्रैलोक्य विश्रुत सब पुण्य तीर्थ इस कपिल तीर्थ में संगम होते हैं। अतः वह समय इस तीर्थ का पर्व समय माना जाता है।

इस तीर्थ के दर्शन-मात्र से मानवों के पापों का हरण होगा। ऐसी महान शक्ति इस तीर्थ में निहित है। पुराणों का विवरण –

वामन पुराण

प्राचीन काल में पाताल में यह शिव-लिंग महर्षि कपिल से पूजा जाता था। कामधेनु अपने क्षीर से लिंग का अभिषेक करता था। एक बार शिव-लिंग भूमि को छेदकर ऊपर आया था। कामधेनु कुपित हो गयी। वह अपने खुर को शिवलिंग के शीर्ष भाग पररखकर बोला – 'माहा वर्धस्व' – 'अब ऊपर न बढ़े' – खुरांकित शिवलिंग बढ़ना रुक गया। यहाँ का लिंग स्तूपाकार में न होकर शीर्ष भाग में थोडा चौडा है।

शिव-लिंग का मूल-भाग रजत-वर्ण में, मध्य भाग स्वर्ण वर्ण में तथा अग्रभाग अरुण-वर्ण में है, जो और कहीं न पाया जाता है। इस शिवलिंग की पूजा कृतयुग में महर्षि कपिल करता था; इस कारण कपिलेश्वर नाम से संपन्न हुआ है। त्रेतायुग में अग्निदेव से यह लिंग पूजा जाता था; द्वापर में आदि से अंत तक इस महालिंग की पूजा चक्रदेव करता था, कलियुग में कपिल महर्षि से यह पूजा जायेगा।

इस कपिल लिंग के अग्रभाग में जो सरोवर है, उसमें कपिल मुनि के पाताल से आने का बिल-मार्ग है, जो गुप्त है। यही बिल-मार्ग जलाधिवास से कपिल-तीर्थ नाम से प्रसिद्ध है।

इस कपिल पुण्य-तीर्थ के दर्शन से सर्वपाप-हरण होगा। पर्वकाल में इस तीर्थ में स्नान जो करते हैं, वे पापों से निवृत्त होकर ब्रह्मलोक में जाते हैं । इस तीर्थ में सुस्नात होकर जो इसके तट पर कन्यादान, गोदान, भूदान, अन्नदान, मन्त्रोपदेश स्वार्थरहित करेंगे, वे क्रमशः स्वर्ग, कैलास, वैकुण्ठ और ब्रह्मलोकों में जायेंगे।' वामन पुराण का कथन यही है।

१६. पद्मसरोवर पुण्य-तीर्थ

श्री तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी की पट्टमहिषी श्री पद्मावती देवी का दिव्य क्षेत्र शुकपुरम (तिरुशुकनूर=तिरुचानूर) में देवी के मंदिर के पश्चिमोत्तर भाग में विख्यात पद्मसरोवर नामक पुण्यतीर्थ है। यह तीर्थ सर्व संपदाओं, आयु तथा नित्यानन्द को प्रदान करनेवाला है।

इस सरोवर की महिमा तथा इतिवृत्त अनेक पुराणों में मिलता है।

वराह पुराण

प्राचीन काल में क्रोधासक्त-चित्त महर्षि दुर्वास के शाप से श्रीदेवी अप . पति श्रीनाथ के साथ स्वस्थल छोडकर पद्मों से शोभित इस सरोवर में आयी। वहाँ विराजित हो अनेक वर्षों तपस्या करती रही।

देवतागण ऐश्वर्य प्रदाता लक्ष्मी देवी तथा लक्ष्मीनाथ को न पाकर अपने अधिकारी पुरंदर के साथ समस्त लोकों में खोजते हुए इस दिव्य सरोवर तक आ पहुँचे। इस पद्म-सरोवर में स्वर्ण-पद्म पर अम्बुज को अपने हस्त में धारण किए विराजमान पद्मालय को देखकर देवताओं ने प्रणाम किया। आनन्द के अतिशय से उन्होंने देवी की चौबीस नामों से स्तुति की।

लक्ष्मीदेवी ने भी प्रसन्न होकर कहा – 'जो मेरे परम प्रिय इस सरोवर के तट पर विष्णु-वल्लभा मेरी स्तुति करते हैं और स्नान भी करते हैं, उन्हें सकल संपदों, दीर्घ आयु एवं नित्यानन्द प्राप्त होंगे।' ऐसा वर प्रदान कर लक्ष्मीदेवी अपने वल्लभ के साथ वेदमय गरुड पर आरूढ़ होकर श्रीवैकुण्ठ चली गयी।

पद्मपुराण

प्राचीन काल में एक बार लक्ष्मीनाथ प्रणय-कलह से वैकुण्ठ छोड़कर जो अपनी प्रिय सखी चली गयी थी, उसकी खोज करते हुए भूलोक आए। आकाशवाणी के आदेश से पद्मसरोवर का निर्माण करके उसके तट पर तप करने लगे।

महाविष्णु के तप करते द्वादश वर्ष बीत गए। कार्तिक मास के शुक्ल पंचमी शुक्रवार उत्तराषाढ़ा नक्षत्र युक्त शुभमहूर्त में इस पद्मसरोवर के मध्य भाग में बाल-भानु के सहस्र किरण सहस्र दीप्ति से दिव्य तेजोपुंज उत्पन्न हुआ।

इस तेजो-पुंज के मध्य स्वर्ण पद्मों से निर्मित रथ गोचर हुआ। उस रथ के मध्य में सहस्रदल से शोभित स्वर्णपद्म का विकसित रूप था। उस पद्म की कर्णिका के मध्यभाग में पद्मासन में पद्म-हस्त से पद्मनेत्री, पद्म-मुखी, पद्म-मालाधरी, पद्म-गंधिनी, पद्म-सुंदरी पद्मावती देवी का दिव्य आविर्भाव हुआ। देवतों के दुंदुभों से और तूर्य घोषों से सारी जगत प्रतिध्वनित हुई। ब्रह्मा, रुद्रादि देवगण पद्मावतारिणी देवी के संदेश की अभिलाषा से पद्मसरोवर पर पहुँचे। इन देवतों के देखते-देखते पद्मदेवी ने स्मित वदन से आनंद रसोन्मेष

से पद्मनाभ के कण्ठ में पद्मों की माला डाल दी। वह स्वयं स्वामी के वक्षःस्थल पर विराजमान हो गयी।

पद्मनाभ भी अपनी प्रिया पद्मादेवी के पद्मसरोवर को अनुग्रह करके देवी के साथ गरुड पर आरूढ़ होकर पन्नगराजगिरि में जाकर सुख से रहने लगे।

जो सरोवर लक्ष्मी और लक्ष्मीनाथ के प्रणव-कलह-निवृत्ति का स्थान है और जो सरोवर स्वयं लक्ष्मी देवी के आनंद रसानुभूति का तथा लक्ष्मीनाथ के अनुग्रह का पात्र बन गया है, उस सरोवर में स्नान-फल की प्रशंसा महर्षियों ने की है। अष्ट महर्षियों में से नारद, वसिष्ठ, मरीचि और अत्रि मुनियों ने सरोवर की स्तुति इस प्रकार की है – इस सरोवर में स्नान करने से जन्मार्जित पापों का नाश होगा और सकल ऐश्वर्यवान होंगे।

अंगीरस महर्षि का कथन है – 'इस सरोवर का स्नान फल इतना महत्त्वपूर्ण है कि राज्य-भ्रष्ट अपने राज्य को पुनः प्राप्त करेंगे। समस्त भोगों का अनुभव करेंगे।'

पुलस्त्य, क्रतु और पुलह महर्षियों का कथन इस प्रकार है –'इस सरोवर में स्नान करने से महापातकों का भी नाश होगा और उत्तरोत्तर उत्तम जन्म प्राप्त होगा।

अतः इस पद्म सरोवर में पद्मालया के प्रादुर्भाव का जो समय कार्तिक शुद्ध पंचमी दिन है, उस दिन देवीजी का ब्रह्मोत्सव समाप्त होगा और अवभृथोत्सव स्नान होगा। इसी पुण्य पर्व को व्यावहारिक भाषा में 'तिरुचानूर पंचमी तीर्थ' कहते हैं।

इस पवित्र दिन में पद्म सरोवर के जगन्माता पुरुषाकार संपन्ना श्रीपद्मामावती देवी के अनुग्रह प्राप्त करने के लिए हजारों भक्त स्नान करते हैं। भक्तों से भरपूर सरोवर की शोभा दर्शनीय है। श्रीलक्ष्मीनाथ की तपोशक्ति,

श्रीलक्ष्मी की अवतार शक्ति, श्री पद्मावती देवी के अवभृथस्नान शक्ति – इन त्रिविध शक्तियों से संपन्न इस पुण्यतीर्थ में जो भाग्यवान नहाते हैं, उनका भाग्य मन और वाक् से वर्णित न किया जा सकता।

निगमन (निष्कर्ष):

ब्रह्म पुराण का कथन है कि अखिल भुवनैक नियन्ता श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रीति-पात्र श्री वेंकटाद्रि पर श्रीवेंकटाद्रि प्रभु के आश्रय में परम पावन सर्वमंगलकर पुण्य तीर्थों की संख्या षट्षष्टि करोड हैं (छियासठ करोड)

> सर्वतीर्थजलं पुण्यं पावनं सर्वकारणम्।
> विष्णुपादोद्भवं शुद्धं सर्वमंगलदायकम्॥

इस पुराण में भी प्रधान तीर्थों का ही गुण-गान किया गया है। अन्य तीर्थों की प्रस्तावना नहीं है।

जिन तीर्थों का गुण-गान किया गया है, उनमें सप्तर्षि-तीर्थ, अष्ट भैरवतीर्थ, नव प्रजापति-तीर्थ, दशावतार तीर्थ, एकादश रुद्र-तीर्थ, द्वादशादित्य तीर्थ आदि। कुछ तीर्थ संख्यापूरक उपतीर्थ विविध शक्तियों से सुसंपन्न हैं। पंच-तीर्थ, नव-तीर्थ, सप्त-दश-तीर्थ आदि तीर्थ भी संख्यापूरक तीर्थों की भांति शक्तिवान हैं।

देवताओं से पूर्ण संबंध रखनेवाले प्रबल शक्तिवान तीर्थ भी हैं – जो ब्रह्मतीर्थ, विष्णु-तीर्थ, रुद्र-तीर्थ, नारसिंह तीर्थ, इन्द्र तीर्थ, अग्नितीर्थ, यम तीर्थ, वरण तीर्थ, वायु तीर्थ, कुबेर तीर्थ, कार्तिकेय तीर्थ, देवतीर्थ हैं।

महर्षियों के नामों पर भी प्रख्यात तीर्थ हैं – जो भृगु तीर्थ, काश्यप तीर्थ, भारद्वाज तीर्थ, कण्व तीर्थ, नारद तीर्थ, मार्कण्डेय तीर्थ, जाबालि तीर्थ, वालखिल्य तीर्थ, विश्वामित्र तीर्थ, गौतम तीर्थ, ऋष्यश्रृंग तीर्थ हैं।

प्रत्यक्ष फलप्रदाता और ओषधीकरणयुक्त तीर्थ भी लोगों के लिए उपयुक्त तीर्थ भी प्रसिद्ध हैं – जो इस प्रकार के नामों से प्रचलित हैं – ज्वरहर

तीर्थ, विषहर, तीर्थ, इष्टसिद्धितीर्थ, कर्म सिद्धितीर्थ, पुण्यवृद्धि तीर्थ, पापविनाशन तीर्थ, जराहर तीर्थ, ऋणविमोचन तीर्थ, पापविघ्न तीर्थ, रसायन तीर्थ, शुद्धोदक तीर्थ आदि हैं। ये तीर्थ अन्वर्थ नामधेय के अनुसार प्रत्यक्ष फलदाता है। अतः साधारण लोगों में भी ये प्रसिद्ध हो गए हैं।

वराहपुराण और ब्रह्मपुराण में कहा गया है कि श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य मंदिर के पूर्वीभाग में 'अस्थि सरोवर' नामक एक तीर्थ है, जो अपमृत्यु निवारण की महान् शक्ति रखता है।

द्वादश पुराणों में भी प्रधान तीर्थों का कथन तथा उनकी शक्ति और वैभव का गुण-गान समान पाया जाता है। यह कोई भ्रमपूर्ण कथन नहीं है। पूर्वजों ने जो फल-सिद्धि प्राप्त की थी, उन्हीं के अनुभवों के आधार पर लिखित सत्य है। इन तीर्थों की महनीयता यही है कि वे लोक-कल्याण के लिए अधिकाधिक उपयुक्त हैं।

जो भाग्यवान और पुण्यात्मा तीर्थ स्नान के प्रति श्रद्धा रखते हैं, जो महापुरुष योगारूढ़ के आकांक्षी हैं, जो वनसंचार के प्रिय हैं, जो पर्वतारोहण की शक्ति और इच्छा रखते हैं, वे गहन काननों में इन तीर्थों का पता लगा सकते हैं; वे ही तीर्थ स्नान की फलसिद्धि प्राप्त कर सकते हैं और अपने जन्म को कृतार्थ करते हैं।

श्रीवैकुण्ठ विरक्ताय स्वामिपुष्करिणी तटे
रमया रममाणाय वेकटेशाय मंगलम्॥

तृतीय भाग समाप्त

चतुर्थ-भाग

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मासोत्सव

अखिलाण्ड ब्रह्माण्डनायक श्री बालाजी श्री वेंकटाद्रि पर अर्चावतार में विराजमान हैं। तिरुमल तिरुपति देवस्थान के अधीक्षण (निर्वाह) में चैत्र मेष आदि मासों में जो उत्सव समय-समय पर मनाए जाते हैं, उनके विवरण दिए जाते हैं। ति.ति.दे. के पर्यवेक्षण में जो जो देवस्थान हैं, वे इस प्रकार हैं– १. श्री वेंकटेश्वर स्वामी का देवस्थान २. तिरुमल में श्री वराह स्वामी का देवस्थान ३. तिरुपति में श्री गोविंदराज स्वामी का देवस्थान ४. तिरुपति में श्री कोदंडरामस्वामी का देवस्थान ५. तिरुपति में श्री कपिलेश्वर स्वामी का देवस्थान ६. तिरुचानूर में श्री पद्मावती देवी का देवस्थान ७. नारायणवनम में श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी का देवस्थान ८. नागुलापुरम् में श्री वेदनारायणस्वामी का देवस्थान ९. श्रीनिवासमंगापुरम् में श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी का देवस्थान १०. हृषीकेश में श्री बालाजी का देवस्थान ११. हृषीकेश में श्री चन्द्रशेखर स्वामी का देवस्थान १२. कार्वेटिनगर श्री वेणुगोपाल स्वामी का देवस्थान १३. अप्पलायगुंटा में श्री प्रसन्न वेंकटेश्वर स्वामी का देवस्थान।

१. चैत्र मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार जो साठ साल हैं, उनमें प्रथम मास चैत्र मास है। चित्ता नक्षत्र युक्त पूर्णिमा का मास होने के कारण इसका नाम चैत्र-मास है।

२. चान्द्रसंवत्सरादि : श्री स्वामीजी का आस्थान

चैत्रमास का प्रथम दिन, जो प्रतिपदा को आता है, उस दिन की तिथि सूर्योदय की अरुणिमा से शोभित होती है। इस संवत्सरादि को चान्द्रवत्सरादि,

आन्ध्रवत्सरादि अथवा 'युगादि' भी कहते हैं। इस पवित्र दिन को श्री स्वामी का आस्थान लगता है। नीम-फूलों का भक्षण, नूतन वस्त्र-धारण तथा नूतन पंचाँग का श्रवण किये जाते हैं।

यदि चैत्रमास में अधिक मास आता है, तो संवत्सरादि के दिन साधारण रीति के अनुसार तैलाभ्यंगन, संकल्प और नूतन वर्ष का संकीर्तन भी होता है। शुद्ध-मास के प्रारम्भ में ध्वजारोहण, नीम फूलों को प्रसाद के रूप में खाना, नूतन-संवत्सर का पंचाँग श्रवण और नवरात्रारम्भ होते हैं।

३. श्रीमत्स्य जयन्ती

चैत्रमास के शुक्ल पक्षीय तृतीय तिथि की दुपहर को भगवान ने धर्म संरक्षण के लिए दशावतारों में प्रथम मत्स्यावतार को धारण किया था। इस दिन इस अवतार के उपासक मत्स्य रूप धारण किये हुए भगवान की अर्चना करते हैं। कुछ पंडितों का मन्तव्य है कि इस अवतार का धारण चैत्र-शुक्ल पंचमी को हुआ था।

४. श्रीराम नवमी - श्रीरामचन्द्रजी का आस्थान

यह आस्थान चैत्र मास के शुक्लपक्ष के नवमी के दिन होता है। महर्षियों का उन्नायक वाल्मीकि कृत श्रीमद्रामायण में इस प्रकार है –

> ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ।
> नक्षत्रेऽदिति दैवत्ये स्वोच्च संस्थेषु पंचसु॥
> ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पता विन्दुना सह।
> प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोक नमस्कृतम्॥
> कौसल्याऽजनयद्रामं सर्वलक्षण संयुतम्॥

'लोककल्याण के लिए अवतरित श्री महाविष्णु दशावतारों में सप्तमावतार श्रीराम का है। श्री रामचन्द्र का जन्म चैत्र मास के शुक्ल नवमी के

दिन पुनर्वसु नक्षत्र युक्त कर्कट लग्न में मध्याह्न के समय जब ग्रहपंचक मेषमास में उच्च-स्थिति में था और गुरु चन्द्रमा भी समावेश था, तब हुआ था।'

श्रीराम के जन्म समय में रवि, गुरु, चन्द्र, शनि, कुज और शुक्र ग्रह के स्थानों का निर्णय श्रीसूक्ति के अनुसार महर्षि ने किया था। बुध, राहु और केतु ग्रहों की प्रस्तावना नहीं हुई है। अतः ज्योतिष-शास्त्रवेत्ताओं ने पुनः गणना करके इन ग्रहों की पूरी दशा का वर्णन इस प्रकार किया है।

चैत्र शुक्ल नवमी के शुभ दिन रवि, गुरु, शनि, कुज और शुक्र ग्रह अपने उच्च स्थान मेष, कर्कट, तुला, मकर और मीन लग्न में थे। इस समय चन्द्र ग्रह स्वक्षेत्र कर्कट लग्न में था और बुध ग्रह अपने नीच स्थान मीन में था। इस समय जब पुनर्वसु नक्षत्र चतुर्थ चरण के कर्कट लग्न में था, तब श्रीराम का जन्म हुआ था। यथा–

जन्म-कुण्डली

शु बु	र		
के	जन्म-काल का राशि-चक्र		ल गु च
कु			रा
		श	

शु श		के	र कु
	जन्म-काल का अंश-चक्र		चं
			गु
	रा	बु	ल

जन्म-काल का ग्रह संचार :

अश्वनी - ३ चरणे, मेषे उच्चस्थानस्थ रविः।

पुनर्वसु - ४ चरणे, कर्कट स्वक्षेत्रस्थ श्चन्द्रः।

श्रवण - ३ चरणे, मकरे उच्चस्थानस्थ कुजः।

उत्तराभाद्रा - ४ चरणे, मीने नीचस्थानस्थ बुधः।

पुष्यमी - १ चरणे, कर्कटे उच्चस्थानस्थःगुरुः।

रेवती - ४ चरणे, मीने उच्चस्थानस्थःशुक्रः।

स्वाती - ४ चरणे, तुलायां उच्चस्थानस्थशशनिः।

पूर्वफल्गुणी - ४ चरणे, सिंहे राहुः।

पूर्वाभाद्रा - २ चरणे, कुम्भे केतुः।

जननकाल के गुरु महादशा वर्ष - १६

गर्भभुक्ति वर्ष	- १२
एष्य वर्ष	४
शनि महादशा वर्ष	१९
कुल	२३
बुध महादशा वर्ष	१७
बुध महदशा पूर्ति वर्ष	४०

२४ से ४० वर्षों तक बुध ग्रह नीचस्थिति में होने के कारण इस समय श्रीराम का राज्य-भ्रंश, वनवास आदे क्लेशकारक मानते हैं।

लेकिन कतिपय शास्त्रवेत्ताओं का कथन दूसरे प्रकार का है। उनके अनुसार २४ से ४० तक वे बुध महादशा काल में ही श्रीरामचन्द्रजी के अवतरण के प्रयोजन स्पष्ट गोचर होते हैं। असंख्याक साधुओं का सम्मान, उनकी परीक्षा, लोककंटक राक्षस महावीरों पर विजय, मित्रलाभ, राजतिलक, दिगन्त कीर्ति-लाभ इस दशा में प्राप्त हुए हैं। ध्यान देने की बात यह है कि महर्षि वाल्मीकि ने बुध की नीच स्थिति का प्रस्ताव नहीं किया है। रवि ग्रह के पूर्व उत्तर में बुध का संचार स्वाभाविक होने से वह राज स्थान मेष में अथवा लाभ स्थान वृषभ में रहा होगा। यही उनका मत है।

श्रीरामचन्द्रजी के अवतार काल की समीक्षा जो जो करते हैं, वे महर्षि वाल्मीकि से कथित मास, पक्ष, तिथि लग्न आदि से सम्मत होते हैं। इन्हींके आधार पर उन्होंने संवत्सर, युग और मन्वन्तर की भी समीक्षा की है। अंत में

श्री वेंकटेश्वर स्वामी का पुष्पपल्लकी

विमानं पुष्पकं कान्त्या ।
स्मारयन्तं मनोहरम् ।।

- वराह पुराण ।

इस निर्णय पर आए हैं कि श्रीराम का जन्म वैवस्वत मन्वन्तर में, त्रेतायुग में, विलम्बि संवत्सर में हुआ है।

समीक्षकों में इस विष, में मतभेद हैं कि किसी कल्प का त्रेतायुग मानना है?

सृष्टि का चक्र अनादि है। सृष्टि से देवगणना के अनुसार आज तक (कलियुग) सौ वर्षों के आयु प्रमाण से छे ब्रह्माओं का समय बीत गया है। सप्तम ब्रह्म का नाम पद्मज है। उसके सृष्टि-काल पूर्वार्ध पचास साल और उत्तरार्ध पचास साल का है। इस कलियुग पूर्वार्ध बीत चुका है; उत्तरार्ध के प्रथम वर्ष, प्रथम मास, प्रथम दिन का उदयकाल ४२ विघडियों (१३ घटिकाएँ) का समय चलता है।

इस दिवा समय (१३ घडियों) में देवगण के अनुसार ७१ महायुगों के परिमाण में छे मन्वन्तर बीतकर सप्तम मन्वन्तर चलता है। एक महायुग में चार युग (कृत, त्रेता, द्वापर और कलियुग) होते हैं। इस गणना के अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर में २७ महायुग बीत गए हैं और अट्ठाईसवाँ (२८वां) युग चल रहा है। इस महायुग में कृत, त्रेता, द्वापर बीत गए हैं। कलियुग में अब तक (१९७६ ई. तक) ५०७७ वर्ष बीत चुके हैं। ज्योतिष शास्त्रवेत्ताओं का निर्णय यही है।

इस गणना से यह स्पष्ट होता है कि इस वैवस्वत मन्वन्तर में ही २८ (अष्टविंशति) युग बीत चुके हैं। इसी गणना के आधार पर श्रीरामचन्द्रजी का जन्मकाल इस मन्वन्तर के पंचम महायुग के त्रेतायुग के चौथे भाग में जब तीस हजार वर्ष अभी बाकी (चलने) हैं, तब विलम्बि संवत्सर के चैत्र शुद्ध नवमी सोमवार के दिन अपराह्ण में कर्कट लग्न में माना गया है।

कुछ समीक्षकों का मत इस प्रकार है—

वर्तमान सृष्टि काल में स्वायंभुव मन्वन्तरादि सात मन्वन्तरों में अब (कलियुग) तक ४५४ (चार सौ चौवन) त्रेतायुग बीत चुके हैं। उनमें से किस

त्रेतायुग को राम जन्म का युग मानना है? वायु, स्कन्द, मत्स्य पुराणों में यही प्रश्न है– 'त्रेतायुगे चतुर्विंशे'? 'चतुर्विंशे युगे रामः'? चतुर्विंशे युगे रामः'? 'चतुर्विंशे युगे चापि'?

इन पुराण-वचनों सी सहायता से वे यह निश्चय करते हैं – 'सातवें वैवस्वत मन्वन्तर के २४ (चौबीस) महायुगों में जो त्रेतायुग आया था, उसकी गणना इस प्रकार है– (६×७१=४२६+२४, ४२६+२४= ४५०) इस त्रेतायुग के अंतिम भाग विलम्बि संवत्सर के चैत्रमास के शुक्ल नवमी बुधवासर, पुनर्वसु नक्षत्र में अभिजित् मुहूर्त में, कर्काटक लग्न में श्रीरामचन्द्र का शुभ जन्म हुआ है।'

कतिपय समीक्षक श्री वाल्मीकि के कथन को तथा भगवद्गीता-वचन को प्रमाण मानते हैं। गीता में कहे 'धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे' अनुसार वे श्री वाल्मीकि की गणना समीचीन मानते हैं, जिसके अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर के २८ वें महायुग के त्रेतायुग में ही श्रीरामचन्द्र का जन्म हुआ है।'

यह समीक्षा पद्धति व्यास सूत्र जो 'तर्काऽप्रतिष्ठनात्' है, इसके अनुसार चलती है। परमार्थ-बोध तथा परमार्थ-साधना के लिए वाल्मीकि की श्री सूक्ति प्रामाणिक मानी जाती है।

कुछ रामभक्त पूर्वजों की परंपरा को मानकर नक्षत्र की प्रधानता से चैत्रमास में पुनर्वसु के दिन, कुछ भक्त मास की प्रधानता से मेष मास, उस मास के शुक्ल नवमी के दिन व्रत अर्चना आदि करते हैं।

श्री रामोपासना में निष्ठा-गरिष्ठ ज्ञानी, त्रेतायुग के प्रत्यक्ष दैव श्रीराम का अवतार उत्सव कलियुग का प्रत्यक्ष अवतार श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में मनाने की प्रथा महर्षि वाल्मीकि के आधार पर मानते हैं। वाल्मीकि की श्रीसूक्ति में 'चैत्रे नवमी के तिथौ' यह स्पष्ट करता है कि श्रीरामचन्द्र की जन्म-तिथि चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी है।

अतः इसीके अनुसार श्री बालाजी के मंदिर में चैत्र मास की शुद्ध नवमी के दिन श्रीरामचन्द्रजी का आस्थान महोत्सव वैभव से मनाया जाता है।

५. श्रीरामचन्द्र का राजतिलक

श्रीरामतिलक की तिथि के संबंध में बहुत मतभेद हैं। किसीका कहना है कि श्रीरामपट्टाभीषेक धातृ नाम संवत्सर के पुष्य-नक्षत्र में प्राचीन काल में मनाया जाता था।

अतः पण्डितों का मत है कि आश्वयुज कृष्णपक्ष के पुष्य नक्षत्र में सप्तम तिथि में श्रीरामतिलक संपन्न हुआ था।

महर्षि वाल्मीकि की श्रीसूक्ति के अनुसार श्रीरामचन्द्रजी का समस्त जीवन जिन प्रधान घटनाओं से भरपूर है, उनका विशद वर्णन उस महर्षि के द्वारा प्राप्त होता है, जो प्रामाणिक माना जाता है। जन्मकाल से लेकर वनवास के मास, वर्ष, वनवासान्त, अयोध्या प्रदेश तथा राम-तिलक महोत्सव तक इस सूची में विवरण इस प्रकार है – मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी के जीवन की प्रधान घटनाओं का काल विभाग यों है–

श्रीराम का नाम – विलम्बि संवत्सर चैत्र शुद्ध नवमी का शुभदिन।

अष्ट वर्ष की आयु में पराभव वत्सर चैत्र में – उपनयन।

१२वें वर्ष में सौम्य फाल्गुण में– सीताजी से विवाह।

२४वें वर्ष की आयु तक – अयोध्या में श्री सीताजी के साथ सुख-निवास।

दुंदुभि संवत्सर चैत्र शुक्ल दशमी– श्रीराम के वनवास का दिन।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल पंचमी को अधिकधिक पण्डित वनवास का दिन मानते हैं।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल पंचमी रात को- सरयू नदी के तट-वास।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल षष्ठी दिन – गंगातीर निवास और भील राजा गुह से समावेश।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल सप्तमी दिन – जटाधारण, गंगा नदी पार करना, अरण्य में वृक्षमूल वास।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल अष्टमी दिन – भारद्वाजाश्रम प्रवेश।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल नवमी दिन – यमुना तट-वास।

दुंदुभि चैत्र शुक्ल दशमी दिन – चित्रकूट प्रवेश।

श्रीरामचन्द्रजी के चित्रकूट में रहने की अवधि के बारे में भी मतभेद हैं। कोई कहता है २४ दिन, कोई ३४ दिन कहते, कोई ४० दिन और कोई साढ़े दस मास कहते हैं।

सीता-राम और लक्ष्मण चित्रकूट छोडकर दण्डकारण्य में प्रवेश करने के बाद अत्रि आदि महर्षियों के आश्रय में कुछ दिन रहे थे। दस साल बाद वे पंचवटी में पहुँचे। इस पंचवटी में चौदह सालों तक निवास किया था।

युव नाम संवत्सर के चैत्र अथवा ज्येष्ठ मास में सीतापहरण हुआ था।

युव सं. के वैशाख में – सुग्रीव से समावेश।

युव सं. आषाढ़ में – वालि का संहार।

युव सं. मार्गशीर्ष में – सीतान्वेषण प्रारम्भ।

युव सं. शुक्ल त्रयोदशी दिन – वीर हनुमान का समुद्रलंघन और सीताजी से संभाषण।

युव नाम संवत्सर फाल्गुन शुक्ल चतुर्दशी – लंका राज्यदहन।

युव सं. फाल्गुन पूर्णिमा – श्रीरामचन्द्रजी का लंका पर युद्ध का प्रारम्भ।

युव सं. बहुल १,२,३ दिनों में – समुद्र तट पर श्रीराम का दर्भशयन।

युव सं. बहुल के ४,५,६,७,८ दिनों में – सेतु बंधन।

युव सं. बहुल के अष्टमी दिन – लंका प्रवेश।

युव सं. बहुल अमावास्या – रावण का वध।

धातृ नाम संवत्सर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा– रावण का अंतिम संस्कार।

धातृ चैत्र द्वितीया – विभीषण का राजतिलक।

धातृ चैत्र तृतीया – सीताजी से समावेश।

धातृ चैत्र चतुर्थी – किष्किन्धा में आवास।

धातृ चैत्र पंचमी – भारद्वाजाश्रम-वास।

पूर्णे चतुर्दशे वर्षे पंचम्यां लक्ष्मणाग्रजः।
भारद्वाजाश्रमं प्राप्य ववन्दे नियतो मुनिम्॥

महर्षि वाल्मीकि की इस श्री सूक्ति से श्रीरामजी के वनवास का अंतिम दिन जाना जाता है। इस श्री सूक्ति के अनुयायियों में भी इस अंतिम दिन के विषय में मतभेद हैं। कोई चैत्र (धातृ संवत्सर) शुद्ध पंचमी को अंतिम दिन मानते हैं।

कतिपय समालोचकों का मत यह है कि वनवास का अंतिम दिन एवं भारद्वाजाश्रम के प्रवेश के बीच के अरण्यवास काल में भी मतभेद हैं। परन्तु सबका समन्वय करने से भारद्वाजाश्रम प्रवेश का दिन वाल्मीकि के अनुसार युव सं. आश्वयुज मास के बहुल पंचमी को सर्वसम्मति मिली है। इनके मन्तव्य इस प्रकार हैं–

आश्वयुज के षष्ठी दिन – नंदिग्राम प्रवेश - जटा काट देना। अयोध्यापुर प्रवेश।

आश्वयुज बहुल सप्तमी पुष्य नक्षत्र में – श्रीरामचन्द्रजी का राजतिलक महोत्सव।

अन्य समालोचकों के अनुसार चैत्र शुद्ध सप्तमी गुरुवार पुष्य नक्षत्र – श्रीरामचन्द्रजी का राज्यतिलक महोत्सव माना जाता है।

इनके अनुसार नंदिग्राम प्रवेश सबेरे और जटा को छोडकर अयोध्या प्रवेश सायं मानी जाती है। परन्तु लग्न, राशि, योग, करण इत्यादि की दृष्टि से लोकरंजक जनप्रिय मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी का राजतिलकोत्सव चैत्र शुक्ल दशमी ही योग्य दिन माना जाता है। इसी दिन राज-तिलक हुआ है।

ज्योतिशास्त्र के अनुसार पुष्य-योग की दिव्यता के कारण इस दशमी के पुष्य-योग में श्रीराम का राज्यतिलक महोत्सव संभव होना समीचीन है। भरत ने प्रतिज्ञा की थी –

चतुर्दशे हि संपूर्णे वर्षेऽहनि रघूत्तम।
नद्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।।

'हे रघूत्तम! चौदह वर्षों के वनवास की समाप्ति के दिन मैं यदि तुम्हें नहीं देख सकूँ, तो अग्नि प्रवेश कर दूँगा।' यह प्रतिज्ञा भरत ने की थी। महर्षि वाल्मीकि ने यद्यपि वनवास की समाप्ति का दिन पंचमी अथवा सप्तमी दिन कहा है; पर राज्य-तिलक के लिए इन दोनों से श्रेष्ठ दशमी को ही माना है। अतः दशमी ही राज्य-तिलकोत्सव का दिन सिद्ध होता है।

वास्तव में पुष्य-योग को राजा दशरथ ने श्रीराम के राज-तिलक का दिन निश्चय तो किया था, अपितु उस लग्न में श्रीराम को वनवास जाना पडा था। जब भरत मातुल गृह में था, तब दशरथ ने श्रीराम का राज-तिलक करने के लिए केकय राज को छोडकर इतर राजाओं को आह्वान भेजा था, जिसमें 'श्वः' कल ही राजतिलक होने की बात थी। श्रीराम के राजतिलक के अनुरक्त अयोध्यावासी भी सुमुख थे, पर सफल नहीं हुआ। अतः यह नियम नहीं है कि उसी पुष्य-योग में अब भी राजतिलक मनाना है।

षष्ठी दिन के सायंकाल को श्रीराम अयोध्यापुर में प्रवेश कर सके, तो तुरंत दूसरे दिन सप्तमी पुष्य-योग होने पर भी राजतिलक संभव नहीं होगा। मैत्रेय महर्षि का कथन इस प्रकार है –

तत स्तयो रभिषेकमंगळं मैत्रेय वर्षशतेनापि।
वक्तुं नशक्यते संक्षेपेण श्रूयताम्॥ इति

पराशर महर्षि – श्री सीताराम के राजतिलकोत्सव का वर्णन सौ सालों तक भी नहीं कर सकते। संक्षिप्त में इतना कह सकते हैं।

पराशर महर्षि मैत्रेय महर्षि से कहते हैं –

सामंत राज, राक्षस राज, वानर राज, युद्धवीर, ब्रह्मा, इन्द्र आदि अमर, वसिष्ठ, वामदेव जैसे महर्षि बृन्द इन सबसे स्तोत्र किया जा रहा था; मंगलवाद्यों की मधुर ध्वनि प्रतिध्वनित हो रही थी, समस्त नृत्य गीतों की मधुरता से सभा-स्थली सम्मोहित थी; महान राजाओं के मध्य सब के लोककल्याणार्थ श्रीरामचन्द्रजी सिंहासन पर बैठे। वीतराग महर्षि वाल्मीकि को भी यह सम्मोहन दृश्य विस्मरणीय था।

इन सब दृष्टिकोणों से राजतिलक का संपादन कार्य उस सप्तमी दिन प्रारम्भ होने लगा। अष्टमी, नवमी दिनों में तिलक की तैयारियाँ अथवा प्रबंध किए गए थे। दशमी दिन महाराज-तिलक के अनुकूल है। इस चैत्र शुद्ध दशमी के दिन विजय मुहूर्त में विजयलक्ष्मी सहित श्रीरामचन्द्रजी वीरपत्नी श्री सीतालक्ष्मी के साथ सिंहासन पर विराजमान हो गए। सारे नगर में उत्सव मनाया गया तथा श्रीरामभक्त भरत की इच्छा भी पूरी हुई। अतः सप्तमी दिन तिलक का होना असंभव है।

अतः हमें यह समझना चाहिए कि हमारे पूर्वजों ने इन पर सोच- विचार करके ही चैत्र मास के शुद्ध दशमी को राजतिलक माना है। इसी दिन आज भारत भर श्रीरामलीला उत्सव मनाए जाते हैं।

प्रतिदिन श्री सीताराम का राज-तिलक मनाने में भी कोई अवरोध नहीं है।

६. श्री वेंकटेश्वर स्वामी का वसंतोत्सव

चैत्र मास के शुक्ल त्रयोदशी को श्री वेंकटेश्वर का वसंतोत्सव मनाया जाता है। इसी मास के वसंतोत्सव के दूसरे दिन चतुर्दशी को श्री स्वामी का स्वर्ण अथवा रजत रथ-यात्रा मनायी जाती है। चैत्र पूर्णिमा के दिन श्री स्वामी का, श्रीकृष्ण का तथा श्री कोदण्डराम के वसंतोत्सव मनाए जाते है।

७. तिरुपति श्री गोविंदराज स्वामी का पोन्न-नहर उत्सव

चैत्र शुद्ध द्वादशी के दिन प्रारंभ होकर तीन दिनों तक यह उत्सव मानाया जाता है। अंत में पूर्णिमा के दिन यह उत्सव बहुत वैभव से समाप्त करते हैं।

८. मेष संक्रमण

मेषादि द्वादश राशियों में प्रथम मेषराशि में सूर्य भगवान का प्रवेश खगोल शास्त्र के अनुसार विशेष प्राधान्य रखता है। सूर्य भगवान के प्रवेश के पूर्व छः घंटों तथा प्रवेशानन्तर के छे घंटों का समय विषुवत्-पुण्य काल माना जाता है।

मेष संक्रमण रात के पूर्व-भाग (अर्धरात्रि के पहले) में होता है, तो उस दिन का उत्तर भाग (प्रातःकाल से मध्याह्न तक) पुण्यकाल माना जाता है। यदि रात के उत्तर भाग (अर्धरात्रि के बाद) में संक्रमण होता है, तो उस दिन का पूर्वभाग (मध्याह्न से सन्ध्या तक) पुण्यकाल माना जाता है।

इस रात के पुण्य काल का निर्णय मकर और कटक संक्रमणों को छोडकर अन्य राशि-संक्रमणों से जाना जाता है।

९. सौर संवत्सरादि

यह मेष-संक्रमण से संपन्न होता है। यह दिन दाक्षिणात्यों के लिए विशेष पर्व माना जाता है। तमिलनाडु में चालू होता है।

१०. श्रीभाष्यकार जी का शात्तुमोरै

मेषार्द्रा संभवं विष्णोः दर्शन स्थापनोत्सुकम्।
तुण्डीरमण्डले शेषमूर्ति रामानुजं भजे।

श्रीवैष्णव सिद्धान्त के दुरंधर निर्णायक श्रीभाष्य के विख्यात रचयिता श्रीमद्रामानुजाचार्य का शुभ जन्म तुण्डीर-मण्डल में चैत्र शुद्ध पंचमी गुरुवार आर्द्रा नक्षत्र युक्त कटक-लग्न में शेषांश से हुआ था। अतः आर्द्रा नक्षत्र युक्त मेषमास में शात्तुमोरा का निश्चय करके उस दिन से दसवें दिन के पहले दिन श्री भाष्यकार का उत्सव प्रारम्भ करते हैं और दसवें दिन आर्द्रा नक्षत्र में शात्तुमोरा करते हैं।

११. श्रीरामजयन्ति

मेषमास के पुनर्वसु नक्षत्र युक्त मध्याह्न के समय अर्चना की जाती है। तिथि की प्रधानता से रामावतार की इस पूजा को 'जया' भी कहते हैं। नक्षत्र की प्रधानता से 'जयन्ति' कहलाती है। कुछ पण्डित ऐसा भी कहते हैं कि दुपहर की पूजा 'जया' एवं रात की पूजा 'जयन्ति' है।

११. वैदिक सार्वभौम निबन्धकों का कहना है कि चैत्र शुद्ध नवमी तिथि का मध्याह्न ही श्रीरामजयन्ति है।

१२. श्री मुदलियाण्डान् का वर्ष तिरु नक्षत्र (जन्म नक्षत्र)

मेषे पुनर्वसु दिने पाचजन्यांश संभवम्।
यतीन्द्र पादुकाभिख्यं वंदे दाशरथीं गुरुम्॥

यतीन्द्रपादुका नाम से विख्यात इस महात्मा का जन्म मेष मास के पुनर्वसु नक्षत्र में पांचजन्य के अंश से हुआ था। अतः उस समय इनकी जयन्ति तिरुनक्षत्र में मनायी जाती है।

१३. पराशरभट्टर वर्ष तिरु नक्षत्र

श्री पराशरभट्टर का जन्म चित्र-मास के अनूराधा नक्षत्र में हुआ था। अतः संप्रदायानुयायी इस दिन इनकी जयन्ति मनाते हैं।

१४. मधुरकवि आल्वार शात्तुमोरा

मेषे चित्रा समुद्भूतं पाण्ड्यदेशे गणांशजम्।
श्रीपरांकुश सद्भक्तं मधुरं कविमाश्रये ।।

यह मधुरकवि श्रीपरांकुश मुनि का भक्त था। इनका जन्म मेष मास के चित्रा नक्षत्र में पाण्ड्य देश में गणांश से हुआ था। अतः इस दिन इनका शात्तुमोरा प्रारम्भ करके, दसवें दिन शात्तुमोरा की समाप्ति वैभव से करते हैं।

१५. नागुलापुरम् श्री वेदनारायण स्वामी का ब्रह्मोत्सव

यह उत्सव वैखानस शास्त्रानुसार नवाह्निकोत्सव के रूप में मनाया जाता है। मेष मास के श्रवणा नक्षत्र में अवभृथ स्नान तथा इस दिन के पहले के नवें दिन में अंकुरार्पण किया जाता है। ध्वजारोहण भी इसी दिन होता है। दस दिन तक यहाँ ब्रह्मोत्सव मनाए जाते हैं।

ब्रह्मोत्सव का विवरण

	दिन	रात
पहला दिन		सेनाधिपति उत्सव और अंकुरार्पण
दूसरा दिन	पालकी उत्सव ध्वजारोहण	महा शेष वाहन
तीसरा दिन	लघुशेषवाहन	हंस वाहन
चौथा दिन	सिंह वाहन	मोतीवितान वाहन
पाँचवाँ दिन	कल्वपृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
छटा दिन	मोहिनी अवतारोत्सव	गरुड वाहन

सातवें दिन	हनुमद्वाहन सायं: वसंतोत्सव	गज वाहन
आठवां दिन	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्रभावाहन
नवां दिन	रथोत्सव	अश्ववाहन
दसवाँ दिन	पालकी उत्सव	ध्वजावरोहणोत्सव अवभृथोत्सव चक्रस्नान

इससे ब्रह्मोत्सव का समापन होता हैं।

१६. तिरुपति में ग्रामदेवता का मेला (गंगजातर)

मेष मास (चित्रि मास) के चौथे मंगलवार तिरुपति की ग्राम देवता गंगानम्मा का मेला प्रारम्भ होता है। यह सात दिन चलता है। मंगलवार से प्रारम्भ होकर आगामी मंगलवार को समाप्त होना इस मेले की विशेषता है।

१७. वैशाख मास

चान्द्रमान गणना के अनुसार द्वादश मासों में वैशाख मास दूसरा है। विशाखा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण इसे वैशाख मास कहते हैं।

१८. भृगुमहर्षि तिरु नक्षत्र

महर्षि भृगु ब्रह्ममानस पुत्र विखनस महर्षि के ख्याति प्राप्त शिष्यवर हैं। वैखानसागम के अनुसार इनका जन्म रोहिणी नक्षत्र में हुआ था।

१९. श्रीश्रीनिवास दीक्षितजी की जयन्ती

श्री विखनस महर्षि कृत 'कल्पसूत्र' के भाष्यकार के रूप में आप प्रसिद्ध हैं। 'कल्पसूत्र' के ये प्रवक्ता भी हैं। कल्पसूत्र के भाष्य का नाम 'श्रीनिवास दीक्षितीय' नाम से पण्डित वर्ग में प्रख्यात है। इस महाशय का जन्म वैशाख मास के रोहिणी नक्षत्र में हुआ था। अतः इस तिथि में इनकी जयन्ती मनायी जाती है।

२०. श्री परशुराम जयन्ती

वैशाख मास के शुक्ल तृतीया के दुपहर में दशावतारों में षष्ठावतार परशुराम का जन्म हुआ था। अतः उसके उपासक इसका उत्सव मनाते हैं। जिन जिन अवतारों में भगवान का अवतरण हुआ है, उन अवतारों के उपासक उनका उत्सव मनाते हैं।

२१. श्री शंकर जयन्ती

श्री शंकराचार्य अद्वैत धर्म के प्रवक्ता एवं असमान भाष्यकर्त्ता भी हैं। इनका जन्म इस कलियुग में विभव नाम संवत्सर वैशाख शुद्ध पंचमी सोमवार को हुआ था। अतः उनके उपासक इस दिन शंकरजयन्ती मनाते हैं।

२२. श्री पद्मावती श्रीनिवास का विवाह महोत्सव

जगद्विख्यात कलियुग वैकुण्ठ-वास सप्ताचलवासी, रसिक चक्रवर्ती वेंकटाद्रि को अपने लीला स्थली बनाकर अपने भक्तों को भी रसास्वादन कराने के अनुग्रह से श्री पद्मावती देवी से विवाह करने की घटना 'वेंकटाचल माहात्म्य' ग्रन्थ में वर्णित है।

सत्ताईस महायुगों (२७) के बाद अब कलियुग में अट्ठाइसवाँ महायुग चलता है। द्वापरान्त में भारत महायुद्ध के बाद चन्द्रवंश का राजा मित्रवर्म तुण्डीर मण्डल में नारायणपुर को अपनी राजधानी बनाकर राज्य करता था। उसने पाण्ड्य राज की कन्या मनोरमा से विवाह किया था। उनका सुपुत्र आकाशराजा था। इसका विवाह शक वंशजा धरणी देवी से हुआ था। राज्य का भार अपने पुत्र को सौंपकर मित्रवर्मा वेंकटाद्रि समीप स्थित पुण्य-प्रदेश में तप करने लगा था।

एक बार इनका पुत्र आकाशराजा, जो नियमों का निष्ठावान् था, यज्ञ के लिए आरणी नदी तीर-प्रदेश को हल करता था। उस समय वहाँ पद्मगर्भ में मनोहर शिशु बालिका को देखा। उस समय तक राजा की कोई संतान नहीं थी। अतः राजा ने खुश होकर बालिका को देखकर कहा – 'यह लालडी

मेरी पुत्री है' – उसी समय आकाशवाणी सुन पडी – 'हे राजन्! यह बालिका तुम्हारी पुत्री है'–राज दम्पतियों के आनंद की हद नहीं थे। उन्होंने पद्मगर्भ से प्राप्त उस शिशु को स्वयं लक्ष्मी का अवतार मानकर उसे 'पद्मावती' नामकरण किया। उसका पालन-पोषण लाड-प्यार से करने लगे। बालिका भी शुक्ल पक्ष के चन्द्र की भाँति प्रवर्द्धमान होती थी। उस शिशु को शुभ चिह्नों के प्रभाव से धरणी देवी ने गर्भवती होकर एक पुत्र को जन्म दिया, जो वसुदास नाम से विख्यात हो गया।

एक दिन पद्मावती अपनी सखियों सहित वन में संचार कर रही थी। उस के सामने महर्षि नारद ने प्रकट होकर कहा – 'तुम्हारा जन्म लक्ष्मी के अंश से हुआ है। हे बालिके! तुम्हारे मुख लक्षणों से स्पष्ट है कि श्रीमन्नारायण की देवेरी हो सकती हो'।– ऐसा कहकर वह अदृश्य हो गया।

मनोहारिणी सुकुमारी पद्मावती वन में अपनी सखियों के साथ विहार कर रही थी। उससे कुछ समीप उसने पीताम्बरधारी, शंकचक्रगदाधर, नीलमेघश्याम वर्णीय, ऊर्ध्वपुण्ड्रधारी स्वामी को (श्रीनिवास) देखा। वह भी अपनी शिकार खेलते- खेलते उनके पास आकर बोला – 'शिकार का मृग (हरिण) इधर आया है। क्या आपने देखा'? – वह अश्व पर सवार था और उसकी वाणी मर्मगर्भित थी।

सखियों ने झट उत्तर दिया – 'यह आकाशराजा की पुत्री का विहारस्थल है। इसमें पुरुषों का प्रवेश निषेध है। यहाँ मृगया विनोद करनेवाले सजा पाएँगे। आप यहां से चले जाइए।'

स्वामी दरहास से बोले – 'ओह! ऐसी बात है, तो वह कौन है? पता देने से मैं अपने स्वस्थल चले जाऊँगा।'

उसी क्षण मनोहारिणी पद्मावती देवी आगे बढ़ आयी और बोली – 'मैं आकाशराजा की पुत्री हूँ। आप कौन हैं? कहाँ से आए हैं?' स्वामी ने अपना वृत्तान्त बताया और सरस भाषण किया कि मैं प्रेम के विरह से यहाँ

आया हूँ। इन बातों से सखियाँ कुपित हुई और उस पर पत्थरों की वर्षा बरसाने लगीं। अश्वारोहक (घोडे पर सवार होकर) स्वामी उनसे अपने को बचाते वेंकटाद्रि पर चला गया। उस क्षण से वे पद्मावती के मुग्ध मोहन रूप से मोहित होकर चंचल चित्त से शय्या पर लेट गये।

'यशोदा वकुळा भूत्वा वर्तते वेंकटाचले' – इसके अनुसार कृष्णावतार की माता यशोदा पुत्र वत्सलता से वकुलादेवी का रूप धारण करके जन्मी थी। वही श्री स्वामी का लालन-पोषण करती थी। उस दिन विकल मनस्वी स्वामी को देखकर वकुला देवी ने पूछा –'हे पुत्र श्रीनिवास! वह भाग्यवती कौन है, जो तुम्हारे हृदय पर अधिष्ठित हो सकी है?' श्रीनिवास ने वेदवती का वृत्तान्त, जो रामावतार में घटा था, उसका विवरण सुनाया। सीताजी की इच्छा के अनुसार मैंने वचन दिया था कि इस अवतार में उस पर अनुग्रह करूँगा। वही वेदवती आकाशराजा की पुत्री के रूप में पद्मावती नाम से अवतरित हुई है। वकुलादेवी अपने पुत्र की इच्छा को पूरा करने के लिए नारायणपुर पहुँची। स्वामी को संदेह हुआ कि इस कार्य-सिद्धि में कहीं अपनी माता असफल हों। इस उद्देश्य से स्वयं पुलिन्दिनी के भेष में धरणीदेवी के अंतःपुर में गया और भविष्यवाणी के रूप में पद्मावती का विरह और उसके भविष्य में होनेवाले पति के रूप-रंग का भी वर्णन किया। इधर वकुला देवी श्रीनिवास का वृत्तान्त धरणी देवी को सुनाकर कार्यसिद्धि पा सकी। आकाशराजा दम्पति ने बहुत संतोष से ब्रह्मदेव को बुलाकर सारा विषय बताया –

> **कन्यायाः जन्मनक्षत्रं मृगशीर्षमिति स्मृतम्।**
> **देवस्य श्रवणर क्षतुं तयो र्योगो विचार्यताम्॥**

इसका जवाब ब्रह्मदेव ने दिया –

> **तयोरुत्तरफल्गुन्यां विवाहं क्रियतामिति।**
> **वैशाख मासे विधिवत् क्रियताम्॥**

आकाशराजा ने कहा –

वैशाखे शुक्ल दशमी भृगुवारे शुभेदिने
बन्धुभिः सह संप्राप्य मामुद्धृत्य गणैस्सह
हर्षेण पाणिग्रहणं कर्तव्यं मे मनोगतम् ॥

इस समाचार को स्वामी को कह भेजा। स्वामी ने भी इस प्रकार अपनी सम्मति –

अंगीकरोतु राजेन्द्र कन्यां तव विशांपते।

इसके बाद विवाह का शुभकार्य प्रारम्भ हुआ। श्री स्वामी ब्रह्मादि देवताओं का आह्वान करके उनके तथा बन्धुमित्रों के परिवारों के साथ विवाह के लिए नारायणपुर पहुँचे। आकाशराजा ने अपनी चतुर्विध सेना के साथ उन सबका आह्वान किया और विवाह महोत्सव वैभव से संपन्न कराया। इस प्रकार श्री पद्मावती श्री वेंकटेश्वर का विवाह वैभव वेंकटाचल माहात्म्य में वर्णित है। भविष्य पुराण नवाँ (९) अध्याय, वराहपुराण द्वितीय भाग सातवाँ अध्याय – इनमें इसी विषय का प्रस्ताव है।

२३. श्रीनृसिंह जयन्ती

वैशाख मास शुक्ल चतुर्दशी स्वाती नक्षत्र में प्रदोष काल में दशावतारों में चौथा अवतार नृसिंह स्वामी का जन्म हुआ। अतः त्रिमुहूर्त में जब त्रयोदशी वेध न होता है, तब इसका पूजन किया जाता है। स्वाती नक्षत्र के साथ शनिवार आता है, तो वह समय श्रेष्ठ माना जाता है।

२४. श्रीकूर्म जयन्ती

वैशाख मास की पूर्णिमा के दिन ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी में दशावतारों में द्वितीय अवतार कूर्म-भगवान की पूजा उस स्वामी के उपासक करते हैं। इस लग्न में भगवान ने कूर्म का अवतार धारण किया था।

२५. श्री अन्नमाचार्य जयन्ती

पदसाहित्य के सम्राट श्री अन्नमाचार्य का जन्म वैशाख पूर्णिमा के दिन विशाखा नक्षत्र में हुआ था। विद्वन्मणि अन्नमाचार्य ने ३२ हजारों के पदों की

रचना से श्री बालाजी के पादसेवन अपने पदसाहित्य से किया था। सप्तगिरिवास भगवान का गुणगान भक्ति, श्रृंगार और शान्त रस युक्त गीतों में किया है, जो देश भर में प्रसिद्ध है।

२६. श्री मही जयन्ती

पुराणों के अनुसार श्रीबालजी की देवेरी भूदेवी का जन्म वैशाख मास के रेवती नक्षत्र में हुआ था। अतः इस दिन उस माताजी का विशेष पूजन किया जाता है।

२७. श्री हनुमज्जयन्ती

वैशाख मास के बहुल नवमी में हनुमान का जन्म माना जाता है। कतिपय पण्डितों के अनुसार वैशाख बहुल दशमी शनिवार पूर्वाभाद्र नक्षत्र इनकी जन्म-तिथि मानते हैं। बहुल नवमी को प्रामाणिक मानकर उस दिन वीर हनुमान की विशेष पूजा करते हैं।

१८. वृषभ संक्रमण

जिस समय सूर्य भगवान द्वादश राशियों में से द्वितीय राशि वृषभ में प्रवेश करता है, उस समय को वृषभ संक्रमण कहते हैं। इस प्रवेश समय के पूर्व समय जो छः घंटे और सोलह मिनिट का समय है, वह विष्णुवत् पुण्यकाल माना जाता है। इस समय स्नान, दान करना पुण्य-कार्य माना जाता है। इस वृषभ संक्रमण काल को तमिल में वैय्यासि-मास कहते हैं।

२९. मेयिन् वरदराज स्वामी की वर्ष तिथि

तिरुमल में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के देवस्थान के आवरण में अग्नेय भाग में इस स्वामी का मण्डप शोभित है। वृषभमास में हस्ता नक्षत्र में स्वामी का वहाँ आगमन हुआ था। अतः इसी दिन उनकी विशेष पूजा करते हैं। इस तिथि को तिरु-नक्षत्र भी कहते हैं।

श्री रामानुजाचार्युलु

यो नित्यमच्युतपदाम्बुज युग्मरुक्म
व्यामोहतस्तदितराणि तृणाय मेने ।
अस्मद् गुरोर्भगवतोऽस्य दयैक सिन्धोः ।
रामानुजस्य चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

- श्री कूरनाथः ।

३०. तिरुमल नम्बि की वर्ष-तिथि

वृषभ मास में स्वाती नक्षत्र में इनक न्म हुआ था। उस दिन उनकी वर्ष -तिथि मनायी जाती है।

३१. श्री नम्माल्वार शात्तुमोरा

वृषभेतु विशाखायां कुरुकापुर कारिणम्।
पाण्ड्यदेशे कलेरादौ शठारिं सैन्यपं भजे॥

द्रविड वेद को जिस महात्मा आल्वार ने संसार को प्रदान कि उस नम्माल्वार का जन्म कलियुग के प्रथम-भाग में पाण्डु-देश में हुआ थ इनका जन्म विष्वक्सेनांश से हुआ था। वृषभ मास में विशाखा नक्षत्र से लेकर दस दिन तक उनका पर-दिन (दूसरे दिन) उत्सव मनाया जाता है। दसवें दिन शात्तुमोरा होता है। जन्म-नक्षत्र का समय नक्षत्र के वृद्धि-क्षय के समय के आधार पर निर्णय होता है। नक्षत्र की वृद्धि का समय पर-दिन २ घटिकाएँ व क्षय समय के पर-दिन में ९ घटिकाएँ होना चाहिए।

३२. तिरुपति श्री गोविंदराज स्वामी का ब्रह्मोत्सव

वैखानसागम के अनुसार यह नवाह्निक (नवदिन होनेवाला उत्सव) उत्सव मनाए जाते हैं। वृषभ मास (वैशाख मास) में अनूराधा नक्षत्र में अवभृथस्नान का दिन है। प्रथम दिन अंकुरार्पण, द्वितीय दिन ध्वजारोहण कार्य संपन्न होते हैं।

	दिवा समय	रात समय
पहला दिन		सेनाधिपति उत्सव और अंकुरार्पण
दूसरा दिन	पालकी उत्सव ध्वजारोहण	बृहत् शेष वाहन (जुलूस)
तीसरा दिन	लघु शेषवाहन	हंस वाहन

चौथा दिन	सिंह वाहन	मोतियों की शामियाना का वाहन
पाँचवाँ दिन	कल्पवृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
छटा दिन	मोहिनी अवतार में पालकी में जुलूस	गरुड वाहन
सातवें दिन	हनुमद्वाहन *सायं:* वसंतोत्सव	गज वाहन
आठवें दिन	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्राभवाहन
नवें दिन	रथ-यात्रा	अश्व वाहन
दसवाँ दिन	पालकी उत्सव	ध्वजावरोहणोत्सव अवभृथोत्सव चक्रस्नान

इस प्रकार ब्रह्मोत्सव समाप्त होते हैं।

३३. नारायणवनम् श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव

यह ब्रह्मोत्सव भी वैखानसागम के अनुसार नवाह्निक है। वैशाख मास के श्रवणा नक्षत्र में अवभृथ स्नान होता है। उसके पहले नौ दिन उत्सव मनाए जाते हैं। दसवें दिन के चूर्णोत्सव छोडकर सब वाहन और उत्सव नव दिनों में उक्त रीति से ही मनाए जाते हैं।

३४. हृषीकेश में श्री कल्याण वेंकटेश्वर (बालाजी) का ब्रह्मोत्सव

वैखानसागम शास्त्र के अनुसार पूर्वोक्ति रीति से ही सब ब्रह्मोत्सवों में दिन और रात विभिन्न वाहनों का उत्सव मनाया जाता है। क्रम तो एक समान होता है। सब ब्रह्मोत्सवों में अंकुरार्पण कार्य से प्रारम्भ होकर ध्वजावरोहण कार्य से समाप्त होते हैं। अवभृथ स्नान स्वामी के लिए निर्मित सरसी में होता है। हृषीकेश में वैशाख मास के श्रवण नक्षत्र में अवभृथोत्सव मनाया जाता है। अवभृथ स्नान पवित्र एवं प्रधान होने के कारण उस दिन के नक्षत्र की प्रधानता से दस दिनों की गणना होती है। दसवें दिन ब्रह्मोत्सव समाप्त होते हैं।

(ब्रह्मोत्सवों का विवरण सब स्थानों में एक समान होने के कारण यहाँ पुनः विवरण नहीं दिए गया है। *—अनुवादिका।*)

३५. ज्येष्ठ मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार द्वादश मासों में ज्येष्ठ तृतीय मास है। पूर्णिमा के दिन ज्येष्ठ-नक्षत्र के होने के कारण इस मास को ज्येष्ठ मास कहते हैं।

३६. बुद्ध जयन्ति

ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की दुपहर में द्वितीया तिथि में श्री बुद्ध भगवान का जन्म हुआ था। इस दिन इनकी जयन्ति मनायी जाती है।

३७. श्री पद्मावती देवी माताजी का प्लवोत्सव (जल में नौका विहार)

यह पांचाह्निक है (पांच दिनों का उत्सव)। यह प्लवोत्सव ज्येष्ठ मास के एकादशी दिन प्रारंभ होता है और पूर्णिमा के दिन समाप्त होता है। पांचों दिन बहुत वैभव से मनाया जाता है।

३८. एरुवाक पूर्णिमा

यह किसानों का पर्व है। इसे बीजारोपण उत्सव कह सकते हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन का यह पर्व देश भर (कुछ परिवर्तनों से) मनाया जाता है। इसीको कृषि पूर्णिमा कहते हैं।

३९. मिथुन संक्रमण

मेषादि राशियों में तृतीय जो मिथुन राशि है, उसमें सूर्य भगवान प्रवेश करता है। इस संक्रमण के बाद ६.२४ घंटों की जो काल व्यवधि है, उसे 'षड़शीति' कहते हैं। इसे पुण्य काल माना जाता है। इस अवधि में स्नान, जप, दान बहुत फलदायक माने जाते हैं। इस मास को मिथुन मास कहते हैं। तमिल में आनि मास कहते हैं। रात के समय संक्रमण-काल होता है, तो मेष संक्रमण काल की भाँति इसके पूर्व-पर काल की प्रधानता है।

४०. पेरिय आल्वार का शात्तुमोरै

मिथुने स्वातिजं विष्णोः रथांशं ध्वनिनः पुरे।
प्रपद्ये श्वशुरं विष्णोः विष्णुचित्तं पुरश्शिखम्॥

श्रीरंगपुरम में विष्णुभक्त विष्णुचित्त को पेरिय आल्वार भी कहते हैं। धन्विपुर में ज्येष्ठ मास के स्वाती नक्षत्र में इनका उत्सव मनाया जा ता है। नौ दिनों में भी प्रारम्भिक उत्सव के साथ इनके नाम पर उत्सव मनाते हैं।

४१. श्रीनाथमुनि भक्तवर की वर्ष-तिथि

ज्येष्ठ मासे त्वनूराधा जातं नाथमुनिं भजे।
यश्रीशठारेः श्रुतवान् प्रबन्धमखिलं गुरोः॥

इस महात्मा का गुरु श्रीनम्माल्वार थे। दिव्य प्रबन्ध का श्रवण उन्हीं द्वारा प्रप्रथम किया गया है। उक्त श्लोकानुसार इनका जन्म ज्येष्ठ मास के अनूराधा नक्षत्र में हुआ था। द्रविड संप्रदाय के अनुसार इस नक्षत्र में उनकी वर्ष तिथि का उत्सव मनाते हैं।

४२. ज्येष्ठाभिषेक महोत्सव

श्री बालाजी का ज्येष्ठोत्सव ज्येष्ठ नक्षत्र में ज्येष्ठ मास में तीन दिनों तक वैभव से मनाते हैं। इसे ज्येष्ठाभिषेक महोत्सव भी कहते हैं। श्री स्वामी, प्रथम दिन वज्रकवच, द्वितीय दिन मुक्ताकवच और तृतीय दिन सुवर्ण कवच के धारण से यह उत्सव समाप्त होता है।

४३. श्री प्रसन्न वेंकटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव – अप्पलायगुण्टा

इस ग्राम (अप्पलायगुण्टा) में ज्येष्ठ मास के श्रवण नक्षत्र में अवभृथ स्नान निश्चित करते हैं। इस नक्षत्र के पहले के नौ दिनों में ब्रह्मोत्सव का तथा वाहनों का क्रम यथावत् है। इतना स्वल्प परिवर्तन है कि यहाँ रथोत्सव के साथ (नवें दिन) कल्याणोत्सव भी मनाया जाता है तथा दसवें दिन चूर्णोत्सव

तथा एकान्तोत्सव, द्वादशारधन के साथ मनाते हैं। इस ब्रह्मोत्सव में भी अंतिम दिन ध्वजारोहण कार्य चलता है।

४४. तिरुचानूर (श्रीशुकनूर) में श्री सुंदरराज स्वामी का अवतारोत्सव

इस स्वामी का आविर्भाव ज्येष्ठ मास के उत्तराभाद्रा नक्षत्र में हुआ था। इस नक्षत्र में इनका तीन दिनों तक उत्सव मनाया जाता है। नक्षत्र के दिन उत्सव की समाप्ति होती है।

४५. आषाढ़ मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार द्वादश मानों में आषाढ़ नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने से इस मास का नाम आषाढ़ हुआ है।

४६. मरीचि महर्षि जयन्ति

महर्षि विखनसाचार्य का द्वितीय शिष्य मरीचि हैं। वैखानसागम से विदित होता है कि आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष पूर्व-फाल्गुनी नक्षत्र में इनका शुभ जन्म हुआ था। इस महर्षि की विशेष प्रधानता यह है कि आज तिरुमल मंदिर में जो पूजा विधि-विधान चालू में है, वह इस महर्षि से सुनिश्चित हुआ था। अतः इनकी जयन्ति इस दृष्टि से तिरुमल पर विशेष प्राधान्य रखती है।

४७. शयनैकादशी

भारतीय आध्यात्मिक जीवन में इस एकादशी की प्रधानता अधिकाधिक है। इस दिन श्रीमन्नारायण क्षीरसागर में शेषतल्प पर शयन करते हैं। इसलिए यह शयनैकादशी और आषाढ़ैकादशी के नामों से प्रचलित है; यथा –

> **शेते विष्णु स्सदाषाढे भाद्रे च परिवर्तते।**
> **कार्तिके च प्रबुद्धयेत शुक्लपक्षे हरेर्दिने॥**

मत्स्य-पुराण के अनुसार इसे आषाढ़ शुद्धैकादशी, शयनैकादशी, परिवर्तनैकादशी, प्रबोधनैकादशी, कार्तिक शुद्ध एकादशी नामों से व्यवहृत करते हैं।

इस एकादशी का उपवास व्रत-धारण के लिए दशमी का 'वेध' त्याज्य है।

अष्टमी सप्तमी विद्धा रोहिणी कृत्तिकान्विता।
दशम्यैकादशीविद्धा हन्ति पुण्यं पुरातनम्।।

उक्त श्लोक प्रमाण है। वैष्णव और स्मार्तों के अनुसार इस 'वेध' की परिपाटि में भेद हैं। वैष्णवों को सूर्योदय के पहले चार घटिकाओं में दशमी त्याज्य है। (एक घटी या घडी चौबीस मिनिट का समय है)। इस गणना का अर्थ यही है कि ५६ घटिकाओं के बाद एक विघडिया दशमी भी अरुणोदय वेध माना जाता है। वैष्णवों की गणना इसी प्रकार की है।

स्मार्त-संप्रदाय के अनुसार सूर्योदय के बाद एक विघडिया की दशमी भी सूर्योदय वेध है। लेकिन इन दशमी-वेधों को त्यजकर अपने संप्रदाय के अनुसार एकादशी-व्रत का पारण करते हैं।

४८. विखनसाचार्य की जयन्ति

श्रावण मास की पूर्णिमा में इस आचार्यजी की जयन्ति है। परंतु तिरुमल में आषाढ़ी श्रवण नक्षत्र से ही इनकी जयन्ति एक मास के पहले से मनाते हैं। नौ दिनों तक जयन्ती के उत्सव मनाने के बाद दसवें दिन श्रवण नक्षत्र में जयन्ती की समाप्ति की जाती है।

४९. चातुर्मास्य व्रत का प्रारंभ

आषाढ़ मास के शुद्ध-एकादशी से कार्तीक शुद्ध एकादशी तक का अवधि काल को चातुर्मास्य कहते हैं। इस चातुर्मास्य में एक स्थान पर रहकर देवतार्चन करना ब्रह्मचारियों के लिए विधेय है।

५०. श्री गोविन्दराज स्वामी का ज्येष्ठाभिषेकोत्सव

आषाढ़ मास के ज्येष्ठ नक्षत्र में तिरुपति में श्री गोविन्दराज स्वामीजी का ज्येष्ठाभिषेक तीन दिनों तक (त्रयाह्निक) चलता है।

५१. व्यास पूजा

आषाढ़ पूर्णिमा को व्यास-पूर्णिमा भी कहते हैं। इस दिन व्यासपूजा के नाम से श्री कृष्णादि देव पंचक, महर्षि पंचक, भाष्यकारों का आचार्य पंचक, सनकादि योगिपंचक, स्वगुरुओं का गुरुपंचक तथा लोकपालकों की अर्चना अपने-अपने संप्रदायों के अनुसार पारायण करते हैं। इस पूजा पाठ के लिए पूर्णिमा के उदय से छः घटिकाओं की अवधि तक पूर्णिमा की तिथि होना अपेक्षित है।

५२. मंगापुरम् श्री बालाजी का साक्षात्कार वैभवोत्सव

आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष के उत्तर-फल्गुनी नक्षत्र में श्री बालाजी का साक्षात्कार हुआ था। अतः इस दिन मंगापुरं में उनका उत्सव मनाया जाता है।

५३. कटक संक्रमण

सूर्य भगवान द्वादश राशियों में से चतुर्थ राशि कटक में प्रवेश करते हैं। इस समय के पहले तीस घटिकाओं का जो समय है, अर्थात् बारह घंटों का समय पुण्य-काल माना जाता है और इस 'अयनम' भी कहते हैं। यदि रात के मसय निशीथ में रात के पूर्व अथवा उत्तर भाग में संक्रमण होगा, तो पूर्व-दिन को पुण्यकाल मानना चाहिए। सूर्योदय के पहले तीन घटिकाओं का प्रातः और सन्ध्याकाल कटस संक्रमण का दिन मानना है, जो पुण्यकाल है, दक्षिणायन की सही गणना – संक्रमण समय के सन्निहित समय को पुण्यतम काल उससे कतिपय घटिकों का समय पुण्यतर काल तथा व्यवहृत घठिकों का काल साधारण पुण्यकाल है। इस प्रकार धर्मविदुरों का कथन है। इस कटक-संक्रमण काल से दक्षिणायन की गणना होती है। इस पुण्यकाल में स्नान, दान, तर्पण आदि नैमित्तिक कर्म-कलाप किये जाते हैं। इस मास को तमिलभाषी आडि मास कहते हैं।

५४. श्री वेंकटेश्वर स्वाम ा आणिवर आस्थान

तिरुमल में श्री स्वा का आस्थान महोत्सव इस कटक-संक्रमण काल (दक्षिणायन का प्रारंभि दिन) में बहुत वैभव से मनाया जाता है। इसे आणिवर आस्थान कहते हैं।

५५. नागचतुर्थि

इस मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्थि में नागदेवता की पूजा की जाती है।

५६. गरुड पंचमी

इसी आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष में पंचमी तीर्थ में श्री गरुड की पूजा संपन्न होती है। इसे गरुड पंचमी कहते हैं।

५७. नारायणगिरि में छत्र स्थापनोत्सव

नारायणगिरि के श्री बालाजी के मंदिर में छत्र स्थापना का महोत्सव मनाया जाता है । शुक्ल द्वादशी को यह मनाते हैं।

५८. तुलसी माहात्म्य का आस्थान

इसी कटक मास के शुक्ल पक्ष के द्वादशी के दिन तिरुपति में प्रातःकाल श्री गोविन्दराज स्वामी गरुडवाहन पर आरूढ़ होकर, मंदिर के चारों वीथियों में उत्सव मनाकर, पुनः मंदिर में प्रवेश करेंगे। स्वर्ण-द्वार के आगे स्वामी का आस्थान लगेगा। उस समय तुलसी माहात्म्य का पुराण पठन होगा। आस्थान के उपरान्त स्वामी की उत्सव-मूर्ति को अंदर ले जायेंगे और सभी में भोग का वितरण किया जायगा।

५९. श्री चक्रत्ताल्वार की वर्ष तिथि

इसी मास के पुष्यमी नक्षत्र में श्री चक्रत्ताल्वार की वर्ष तिथि का उत्सव मनाया जाता है।

६०. श्री आण्डाल तिरुवाडिप्पूरं जयन्ति

कर्कटे पूर्व फल्गुन्यां तुलसी काननोद्भवाम्।
पाण्ड्ये विश्वंभरां देवीं वंदे श्रीरंगनायकीम्।

पाण्ड्य देश में विष्णुचित्त नामक भक्त के तुलसी बन में फल्गुनी नक्षत्र युक्त तुला-लग्न में आण्डाल अथवा गोदा देवी का आविर्भाव तुलसी पेड के मूल में हुआ था। दसवां दिन जयन्ती तिरुमल पर श्री स्वामीजी का पुरिशै बगीचे में आगमन – श्री स्वामीजी इस आषाढ़ मास के फाल्गुनी नक्षत्र के सायंकाल उत्सवमूर्ति श्री मलयप्प अपनी उभय देवेरियों सहित दारु-पल्लकी पर प्रदक्षिणा के रूप में इस बगीचे में प्रवेश करेंगे। देवेरियाँ अलग पल्लकी पर आयेंगी। वहाँ के मण्डप में बिठाए जाते हैं। गोष्ठी में भोग का वितरण होगा। इस वृक्ष के समीप स्वामी के आते ही उन्हें आरति दी जायगी। तदनन्तर वृक्ष को भी शेष आरति, पुष्पमाला और शठारि देते हैं। अर्चक उस शठारि को अपने साथ लायेंगे। जब स्वामी गजेन्द्र-मोक्ष मण्डप पारकर मंदिर की वीथी में आएंगे, तब स्वामी को आरति देने के बाद, शठारी का प्रोक्षण रूपी अभिषेक होगा। इसके बाद शठारी को पल्लकी में रखेंगे। स्वामी मंदिर में जायेंगे।

६२. कश्यप जयन्ती

वैखानसागम के अनुसार इनका जन्म श्रावण मास के हस्ता नक्षत्र में हुआ था। इनकी विशेषता यही है कि आप विखनसाचार्य के शिष्यों में चतुर्थ थे। हस्ता नक्षत्र में इनकी जयन्ती मनायी जाती है।

६३. तिरुपति श्री गोविन्दराज स्वामी का अहोबल-मठ में आगमन

कटक मास के स्वाती नक्षत्र में श्री गोविन्दराज स्वामी अहोबल मठ (तिरुपति) में पधारेंगे।

६४. श्री आलवन्दारजी का जन्म नक्षत्र

शुचौमा स्युत्तराषाढ़ा जातं यामुन देशिकं।
श्रीराममिश्रचरण सरोजाश्रित माश्रये ॥

आप श्रीराममिश्र के प्रिय शिष्य थें। वैष्णव धर्म-प्रवर्तक श्री यामुनाचार्य ही आलवन्दार हैं। आपने श्रीमद्रामानुज का मार्गदर्शन किया था। आपका जन्म धातु संवत्सर के कटक मास में पूर्णिमा शुक्रवार को उत्तराषाढ़ा नक्षत्र युक्त लग्न में हुआ था। आप श्री स्वामी के सिंहासन का अंश रूप माने जाते हैं। इस तिथि में उनकी जयन्ती मनायी जाती है।

६५. श्रावण मास

चान्द्रमान के अनुसार द्वादश मासों में पाँचवाँ मास श्रवण नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा होने के कारण इसका नाम श्रावण है।

६६. कल्कि जयन्ती

धर्म की संस्थापना के लिए अवतारों में दशमावतार भगवान कल्कि का है। श्रावण शुद्ध षष्ठम दिन सायंकाल को भगवान का यह अवतरण होगा। इस दिन भगवान की पूजा करेंगे। कतिपय विज्ञों का मत है कि कल्कि का अवतरण ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया का होगा। शास्त्रकारों का मन्तव्य यह है कि ऐसे विरोधी भावना को कल्प-भेद से दूर किया जा सकता है।

६७. वरलक्ष्मी व्रत

श्रावण मास की पूर्णिमा के पहले जो शुक्रवार आता है, वह वरलक्ष्मी व्रत का दिन माना जाता है। इस शुक्रवार को जिसकी असुविधा हो, वे इस मास के तीनों शुक्रवारों में भी व्रत कर सकते हैं। इस दिन तिरुमल में श्री स्वामीजी की सायं की आराधना में नैवेद्य के रूप में 'सुग्गी' नामक मधुर भक्ष्य (जो दाल और गुड से बनाकर घी में भुनाते हैं) को समर्पित करते हैं। स्वर्ण-द्वार के पास गोष्ठी में भोग का वितरण किया जाता है। मंदिर के आचारों की पूर्ति के बाद अर्चक महाशय, एकांगी आदि पाकशाला में जाते हैं। वहाँ पाकलक्ष्मी को अभिषेक करके सुग्गी, खीर का भोग चढ़ाते हैं। आरति देने के बाद सरकारी अधिकारियों में भोग का प्रसाद वितरण किया जाता है।

६८. तिरुमल श्री बालाजी का पवित्रोत्सव

यह उत्सव श्रावण मास के शुद्ध-दशमी से प्रारंभ होता है और त्रयोदशी तक चार दिनों का उत्सव मनाया जाता है।

प्रथम दिन	–	अंकुरारोपण।
द्वितीय दिन	–	पवित्र प्रतिष्ठा।
तृतीय दिन	–	पवित्र समर्पण।
चौथा दिन	–	पूर्णाहुति।

ये अर्जित सेवाएं हैं। यह पवित्रारोपण उत्सव हर मंदिर में, श्री स्वामीजी को हर वर्ष मनाना चाहिए। इस उत्सव का प्रधान लक्ष्य कैंकर्य (सेवाएँ) में यदि कोई जो दोष हों, तो उनके पहिरार्य करते हैं। श्री बालाजी स्वामी की आराधना सेवाएँ, जो ब्रह्मादि देवताओं के लिए भी श्रमसाध्य हैं, ऐसी सेवाओं में अल्पज्ञ मानवों से अनिवार्य रूप से दोष होने की संभावना है। जगत्प्रभु की सेवा में संभवित दोषों के लिए क्षमा प्रार्थना के लिए यह उत्सव मनाया जाता है।

इतना ही नहीं, अपितु लोककल्याण, विश्वशान्ति, सर्व-दोषनिवृत्ति तथा सर्व-कामना प्राप्ति के लिए भी यह उत्सव मनाया जाता है।

६९. श्रीवैखानस महर्षि की जयन्ती

श्रवणे श्रावणे शुक्ल पूर्णिमा सोमवासरे।
सिंहलग्नेन संयुक्ते, भजे नैमिश मागतम् ॥

इस महर्षि का नैमिशारण्य में आगमन श्रावण पूर्णिमा सोमवार को श्रवण नक्षत्रयुक्त सिंह-लग्न में हुआ था। अतः इस दिन उनकी जयन्ती-दिन निश्चय किया गया है और तदनुसार उस दिन उनकी विशेष पूजा की जाती है।

७०. कार्वेटिनगर श्री वेणुगोपाल स्वामीजी का प्लवोत्सव (जल-विहार)

श्रावण शुक्ल त्रयोदशी से लेकर तीन दिन तक स्वामी का प्लवोत्सव मनाया जाता है।

७१. हयग्रीव जयन्ती

श्रावण-मास की पूर्णिमा में विष्णु के अवतारों में एक स्वामी हयग्रीव की जयन्ती के उत्सव मनाते हैं।

७२. श्रावण उपाकर्म

उपाकर्म श्रावण पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस दिन श्री बालाजी की प्रातःकाल की आराधना के अनन्तर श्रीकृष्ण पालकी में मंदिर के चारों वीथियों में जुलूस में निकलकर श्री स्वामी की सन्निधि में पधारेंगे। वहाँ पंचामृत के अभिषेक के अनन्तर यज्ञोपवीत धारण कराएँगे। 'दोसै' का भोग लगाया जायगा। आरति के बाद पुनः वीथियों में शोभा-यात्रा संपन्न होगी। वीथियों की परिक्रमा करते हुए श्री बालाजी के मंदिर में पधारेंगे। बाद में देवस्थान के कार्य-कलाप चलेंगे।

७३. ऋग्वेदिनामुपाकर्म

उपाकर्म का अर्थ 'उपक्रम होना' है। इससे वेदाध्ययन का आरम्भ सूचित होता है। इस अध्ययन के लिए ऋग्वेदी पाठकों के लिए श्रावण मास के शुक्ल-पक्ष श्रवण नक्षत्र, पंचमी एवं हस्ता तीनों काल निश्चित हैं। इनमें श्रवण नक्षत्र श्रेष्ठ माना जाता है। इन कालों की अवधि त्रिमुहूर्त तक होना आवश्यक है। ऋग्वेदियों के लिए सबेरे उपाकर्म के लिए उपयुक्त है।

समस्त शाखाओं के लिए भी गृह्य-सूत्रकारों ने श्रावण एवं भाद्रपद इसके लिए उपयुक्त कहा है। यदि इन समयों में ग्रहण, अशौच, संक्रान्ति आदि दोष आने पर, शाखान्तरों में जो विहित काल निश्चित हुए उनका अनुसरण करना चाहिए। कर्म-निष्ठा में कोई लोप न हों।

७४. यजुर्वेदिना उपाकर्म

समस्त यजुर्वेदियों के लिए भी श्रावण पूर्णिमा विशेष उपयुक्त समय है।

७५. आपस्तम्बोपकर्म

आपस्तम्बों के लिए भी श्रावण पूर्णिमा ही मुख्य है। यदि यह असुविधाजनक हो, तो भाद्रपद पूर्णिमा को उपयुक्त समय मानना है।

७६. हिरण्य केशीयोपाकर्म

हिरण्यकेशियों के लिए श्रावण पूर्णिमा की अनुकूलता न हो, तो श्रावण शुक्ल पक्ष के हस्ता नक्षत्र को उपयुक्त मानना है। श्रवण नक्षत्र भी उदय से संगम काल तक होना चाहिए।

७७. बोधायनोपाकर्म

इनके लिए भी श्रावण पूर्णिमा प्रधान है। अन्य कारणों से इसमें असुविधा हो, तो आषाढ़ पूर्णिमा उपयुक्त है।

७८. काण्वमाध्यंदिनोपाकर्म

काण्व, माध्यंदिनादि कात्यायिनों के लिए श्रवण नक्षत्रयुक्त श्रावण पूर्णिमा, केवल पूर्णिमा, हस्ता नक्षत्र युक्त श्रावण शुद्ध पंचमी अथवा केवल पंचमी उपयुक्त हैं। श्रावण मास में कोई विघ्न हों, तो भाद्रपद पूर्णिमा, भाद्रपद शुक्ल पंचमी उपयुक्त हैं। षण्मुहूर्त (छः घटिकाएँ) न्यून होने पर पिछले दिन को उपयुक्त मानना चाहिए। अन्य निर्णयों के लिए शास्त्रों की सहायता ली जाय।

७९. सामवेदिनामुपाकर्म

सामवेदीयों के लिए भाद्रपद मास में शुक्ल पक्ष का हस्ता नक्षत्र प्रधान है। यदि इसमें विघ्न पडे, तो श्रावण मास का हस्ता-नक्षत्र उपयुक्त है। कतिपय पण्डितों का मत है कि भाद्रपद हस्ता में विघ्न पडे, तो श्रावण

पूर्णिमा में उपाकर्म करने पर भी भाद्रपद हस्ता नक्षत्र तक पठन करना वर्जित है। सामवेदियों के लिए अपराह्न काल उपाकर्म के लिए उपयुक्त है।

८०. अथर्ववेदिनामुपाकर्म

इनके लिए श्रावण और भाद्रपद की पूर्णिमाएँ प्रधान हैं। खण्ड-तिथि होने पर इसकी व्याप्ति उदय से स्पर्शकाल तक होनी चाहिए।

८१. नव उपवीत उपाकर्म

जिनका उपनयन हुआ है, उनके लिए प्रथम उपाकर्म गुरु के अस्तमय होने पर, शुक्रास्तमय के समय करना मना है। गुरु के सिंह में रहने पर करना भी मना है। इस द्वितीय उपाकर्म के विषय में शास्त्रों की सहायता लेना उचित है।

८२. गायत्री जप

उपाकर्म के दूसरे दिन प्रातः काल में सहस्र गायत्री जप करना शास्त्र विहित है।

८३. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

भगवान ने शिष्टों का परित्राणा, दुष्टों का विनाश और धर्म की संस्थापना करने के लिए दशावतारों में नवम कृष्णावतार का धारण किया था। स्वस्ति श्री विजय नाम संवत्सर श्रावण बहुल अष्टमी बुधवार रात के निशीध में रोहिणी नक्षत्र युक्त वृषभ लग्न में श्रीकृष्ण का शुभ जन्म हुआ था।

	गु	ल चं	रा
	जन्म-काल का राशि-चक्र		कु बु
			र श
के			शु

ज्योतिषी सांप्रदाय के अनुसार उस समय की ग्रह-स्थिति इस प्रकार थी–

आगम, धर्मशास्त्र, पुराण के आधार पर श्री कृष्णवतार के समय के लग्न करणादि का निर्णय इस प्रकार करते हैं –

१. श्रावण मास २. कृष्णपक्ष ३. अष्टमी तिथि ४.बुधवार ५. रोहिणी नक्षत्र का चतुर्थ पाद ६. हवन योग ७.कौलव करण ८. निशीधि का समय ९. चन्द्रोदय १०. बृषभ लग्न।

ऐतिहासिकों का कथन है कि कृष्ण अर्जुन का सखा समवयस्क होने कारण अर्जुन का जन्म विजय संवत्सर में होने के कारण कृष्ण का भी जन्म उसी साल में हुआ होगा । कुछ विद्वान श्रीकृष्ण जन्मवत्सर श्रीमुख को मानते। इन दोनों की अप्रमाणिकता के कारण ये प्रचलित नहीं हुए।

	गु		रा
	राशि चक्र		
लकेशु	र	बु	चंशकु

परम पुरुषार्थक श्रीकृष्ण के पूजन उत्सव आदि के विषय में संवत्सर अस्पष्ट होने पर भी तिथि, वासर, नक्षत्र और मास के विषय में सर्वांगीकार है। अतः यह सत्य विवादरहित है कि श्रीकृष्ण भगवान का अवतरण श्रवण बहुलाष्टमी रात के निशीथ में हुआ था। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का उत्सवादि मनाते हैं। यहाँ तिथि को प्रधानता दी गयी है।

८४. गोकुलाष्टमी आस्थान (स्मार्त विषय)–

कतिपय विज्ञ उपरोक्त समय श्रीकृष्ण का जन्म समय मानकर श्रावण बहुलाष्टमी निशीथ समय छोडकर वृषभ लग्न में श्रीकृष्ण का पूजन करते हैं। इस अष्टमी को गोकुलाष्टमी भी कहते हैं।

यथा

अष्टमी सप्तमी विद्धा, रोहिणी कृत्तिकान्विता।
दशम्यैादशी विद्धा हन्ति पुण्यं पुरातनम्॥

इस पर्व-दिन को तिरुमल में श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के सन्निधान में श्रीकृष्ण का सर्वभूपाल वाहन पर आस्थान वैभव से मनाया जाता है। यह आगम-सम्मत भी है।

८५. तिरुमल श्री बालाजी का शिक्योत्सव

गोकुलाष्टमी के दूसरे दिन आस्थान जब (श्रीकृष्ण का) लगाया जाता है, उस दिन शिक्योत्सव भी मनाया जाता है।

८६. तिरुपति गोविन्दराजस्वामी का शिक्योत्सव (गली में नैवेद्य का छठा फोडन)

तिरुपति श्रीगोविन्दराज स्वामी के देवस्थान के आध्वर्य छोटी गली में श्री गोविन्दराज स्वामीजी का शिक्योत्सव मनाते हैं।

८७. तिरुपति श्री कोदण्डराम स्वामी का शिक्योत्सव

तिरुमल पर जिस दिन बालाजी के देवस्थान में शिक्योत्सव मनाते हैं, उसके दूसरे दिन तिरुपति के श्रीकोदण्डराम स्वामी के मंदिर में शिक्योत्सव मनाते हैं।

८८. तिरुपति श्री गोविन्दराज स्वामी का बडी-वीथि में शिक्योत्सव

श्री गोविन्दराजस्वामी (तिरुपति) के देवस्थान में जिस दिन छोटी गली में शिक्योत्सव मनाते हैं, उसके दूसरे दिन बडी गली में भी शिक्योत्सव मनाया जाता है।

८९. स्वातंत्र्य दिनोत्सव

भारतदेश में तिरुमल में विराजमान श्रीवेंकटेश्वर स्वामी कें अनुग्रह-बल से सन् १५-८-१९४७ ई. को भारतीयों को अंग्रेजी-शासन से स्वतंत्रता प्राप्त हुई। इस दिन को स्वतंत्र का दिन मनाते हैं।

श्री पद्मावती परिणयोत्सव

स्त्रष्टा श्रीशेन पद्मागलभुवि विधिवन्मन्त्रपूतं प्रशस्ते
लग्ने माङ्गल्यसूत्रं सह शुभनिनदैर्धारयित्वा विधिज्ञः ।
पद्माहस्ताब्जदत्तैर्हुतभुजमपि तैर्हावयित्वाऽथ लाजैः
एतौ जायापति श्रीद्विजवरवचसाऽतोषयत्संप्रणम्रौ ।।

- श्रीपद्मावतीपरिणयतारावलिः - ३१

१०. सिंह संक्रमण

सूर्यभगवान मेषादि द्वादश राशियों में पाँचवाँ, जो सिंह-राशि है, इसमें प्रवेश करता है। इस र मय के पहले छः घंटे और २४ मिनि (६-२४ घं) की जो अवधि है, उसे 'विष्णुपाद-पद-पुण्यकाल' कहते हैं। इस पुण्यकाल में स्नान, जप, दानादि पुण्यकार्य किए जा सकते हैं।

११. श्रीकृष्ण जयन्ती

वैष्णव धर्मावलम्बियों के अनुसार इस प्रकार है।

सिंहराशिगते सूर्ये श्रावणेमासि नारद।
कृष्णपक्षे तथाष्टाम्यां बुधवारे निशीथके॥

इन प्रमाणों के आधार पर जब सूर्य भगवान सिंहराशि में प्रवेश करता है, तब श्रावण मास की निरुक्त तिथि वार नक्षत्र के शुभसमय में श्रीकृष्ण-जन्म काल मानते हैं। अतः निरुक्त, तिथि, नक्षत्रादि समय में श्रीकृष्ण की पूजा व्रत आदि उत्सव मनाते हैं।

विवरण

सिंह मास के कृष्ण पक्ष में सूर्योदय के बाद सप्तमी-वेध रहित अष्टमी में, कृत्तिका वेधरहित रोहिणी नक्षत्र में, शुद्ध रोहिणी तिथि के लभ्य न होने पर शुद्ध रोहिणी सहित नवमी में श्रीकृष्ण पूजा करते हैं। यदि उक्त दोनों तिथियों में सुविधा न हों, तो मृगशिरा नक्षत्र के नवमी अथवा दशमी के निशीथ समय में कृष्ण लग्न में श्रीकृष्ण भक्ति दुरंधर नक्षत्र प्राधान्यता मानकर श्रीकृष्ण जयन्ति मनाते हैं।

वैष्णव-विषय

इस प्रकार श्रीकृष्णावतार का निशीथ समय श्रीकृष्ण् की पूजा और उपासना करनेवालों में कतिपय भक्त फलाभिसन्धि रहित होकर रात के चन्द्रोदय के उत्सव के उपरान्त कृष्ण भक्तों एवं भागवतों के साथ पारण करते हैं। जो भक्त जयन्ती-कलासक्त हैं, वे दूसरे दिन पारण करते हैं।

शास्त्र प्रमाण वचन इस प्रकार है

जन्मान्तर सहस्रेषु तपो ध्यान समाधिभिः।
नराणां क्षीण पापानां कृष्णे भक्तिः प्रजायते॥

गीतामृत प्रदाता कृपाराशि श्रीकृष्ण भगवान की उपासना हजारों जन्मान्तरों के तप, ध्यान, समाधि इत्यादि द्वारा प्रतिबंधात्मक पापजाल से निवृत्त होकर करते हैं। सब उपासक अपनी रुचि के अनुसार श्रावणमासीय अष्टमी तिथि में अथवा रोहिणी नक्षत्र के नवमी दशमी की निशीथ में, चन्द्रोदय में, वृषभ लग्न में आनंद के अतिशय से श्रीकृष्ण भगवान की पूजा आदि करते हैं। भारतदेश की भाग्यराशि की परंपरा की कोई सीमा नहीं है।

९२. भाद्रपद मास

चान्द्रमान की गणना से द्वादश मासों में षष्ठम मास भाद्रपद मास कहलाता है। भाद्रपद नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण इसका नाम भाद्रपद मास है। भाद्रमास का भी व्यवहार होता है।

९३. बलराम जयन्ती

भाद्रपद शुक्ल द्वितीया को भगवान ने दशावतारों में अष्टमी अवतार को धारण किया था। यही बलरामावतार है। उनके उपासक उक्त नक्षत्र में उनकी जयन्ती मनाते हैं।

९४. श्री वराह जयन्ती

भाद्रपद शुक्ल तृतीया को लोक कल्याणार्थ इस दिन के अपराह्न में दशावतारों में तृतीया जो है, उस वराहावतार का धारण किया। वराह के उपासक इस तिथी में उनका पूजन करते हैं। कतिपय विज्ञों का कथन है कि भूमि के उद्धार करने के लिए भगवान का चैत्र मास के बहुल नवमी को वराह अवतार के रूप में आविर्भाव हुआ है। ऐसे काल-भेद का समन्वय कल्पभेद की प्रामाणिकता से करना पडता है।

९६. विनायकचतुर्थी

भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी के मध्याह्न में श्रीगणेश की पूजा करते हैं। चतुर्थी की अवधि काल मध्याह्न तक होना चाहिए। इस दिन चन्द्र-दर्शन करने से मिथ्यानिंदारोपण का दोष लगेगा। इस विश्वास के बल से चन्द्रदर्शन वर्जित है।

९७. ऋषि पंचमी

भाद्रपद शुक्ल पंचमी मध्याह्न को महर्षियों की पूजा करके भूमि से प्राप्त ताजा शाकों का आहार लेना आचार है। यदि पंचमी दो दिनों में व्याप्त हो, तो मध्याह्न को छोडकर पंचमी तिथि में ही इस पर्व को मनाना शास्त्रसम्मत है।

९८. श्री कपिलेश्वर स्वामी के सन्निधान में विनायकोत्सव

इस विनायक चतुर्थी के अवसर पर कपिल तीर्थ तट पर स्थित श्री गणेश के मंदिर में गणेशोत्सव जुलूस के साथ वैभव से मनाया जाता है।

९९. विष्णुपरिवर्तनैकादशी (भाद्रपद शुद्ध एकादशी)

'भादे च परिवर्तते' – मत्स्य-पुराणांतर्गत इस वचन के अनुसार श्री महाविष्णु क्षीर समुद्र के शेषतल्प पर योगनिद्रा में शयन करता है तथा भाद्रपद के शुद्ध एकादशी को करवट बदलते हैं। अतः यह परिवर्तनैकादशी के नाम से व्यवहृत है।

१००. विष्णुश्रृंखला योग

स्मृतियों के अनुसार इस योग की प्रशस्ति इस प्रकार हैं –

द्वादशीं श्रवणर्क्षं तु स्पृशे देकादशीं यदि।
स एव वैष्णवो योगः विष्णु श्रृंखल सञ्जिकः ॥

विष्णु देवता संबन्धी एकादशी द्वादशी युक्त श्रवण नक्षत्र योग को विष्णु श्रृंखला योग कहते हैं। स्मृतियों के अनुसार यह वैष्णव योग है।

विष्णु भक्ति परायण मुमुक्षु दिन के समय इस वैष्णव योग की प्रशस्ति करके इस दिन श्रद्धा और भक्ति से उपवास और व्रत दोनों का आचरण करते हैं।

यथा

एकादशी	१८	घटिकाएँ	
उत्तराषाढ़ा	६	घटिकाएँ	
द्वादशी	१२०	घटिकाएँ	
श्रवण	१२	घटिकाएँ	– धर्म सिन्धु ग्रन्थ।

विशेषताओं के लिए निबंधन-ग्रन्थों की सहायता ली जा सकती है।

१०१. श्रवण द्वादशी

श्रवण नक्षत्रयुक्त द्वादशी। महर्षियों ने शास्त्र वचनों के आधार पर यह निश्चय ऐसा किया है।

सूर्योदयानन्तर घटिकावेध रहित सायंकाल तक व्याप्त श्रवण नक्षत्र युक्त तथा सूर्यास्त के पहले छः घटिकाओं की व्याप्ति से त्रयोदशी वेध रहित सायंकाल तक द्वादशी ही श्रवण द्वादशी मानना चाहिए। परंतु ऐसे वेधरहित मुहूर्तों की लभ्यता दुर्लभ है। अतः भाद्रपद फाल्गुनी मासों में दैवयोग से संभव होता है। इन कारणों से विष्णु भक्त मुमुक्षु इस श्रवण द्वादशी में श्रद्धायुक्त व्रत धारण करके दूसरे दिन त्रयोदशी में पारण किया करते हैं। इस पारण से वे कृतार्थ होते हैं। इस दिन सायंकाल को श्री बालाजी स्वामी के मंदिर की चारों वीथियों में शोभा यात्रा मनाकर आस्थान में आसीन होते हैं।

१०२. श्री वामन जयन्ती

विष्णु भगवान ने लोककल्याण के लिए भाद्रपद शुक्ल द्वादशी दिन श्रवण नक्षत्रयुक्त मध्याह्न के समय दशावतारों में पंचमावतार वामन रूप का धारण किया था। अतः इस दिन वामनोपासक श्रवण नक्षत्र युक्त मुहूर्त में स्वा रैमी की उपासना व्रतादि करते हैं।

१०३. अनन्त पद्मनाभ व्रत

भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी में यह व्रत मनाया जाता है। इस व्रत के लिए उदय त्रिमुहूर्त (छः घटिकाओं का समय) व्याप्त चतुर्दशी तिथि का होना अनिवार्य है। यदि त्रिमुहूर्त व्याप्त तिथि न हो, तो द्विमुहूर्त व्याप्त चतुर्दशी में व्रत करना अपेक्षित है। स्नान, जप आदि के बाद श्री अनन्त पद्मनाभ स्वामी की पूजा की जाती है।

१०४. महालय पक्षों का प्रारंभ

भाद्रपद बहुल पक्ष के प्रथम दिन अमावास्या से लेकर पंद्रह दिन महालय-पक्ष कहलाता है। इस पक्ष के प्रतिपदा मध्याह्न होना चाहिए। इस पक्ष में पितृदेवताओं का श्राद्ध तर्पण आदि किए जाते हैं।

१०५. बृहत्युमा व्रत

भाद्रपद मास के बहुल पक्ष में तीसरे दिन इस उमाव्रताचरण करते हैं। आंध्रप्रदेश में इसका आचरण करते हैं। प्रधानतः सरकारी जिलों में यह अधिक प्रचलित है। इसे तेलुगु में 'उण्ड्राल्ल तद्दि' कहते हैं। चन्द्रोदय व्याप्ति प्रधान है।

१०६. महाभरणी

भाद्रपद बहुल पक्ष का भरणी नक्षत्र अपराह्न तक व्याप्त होना अपेक्षित है। इस नक्षत्र में महालय श्राद्ध कर्म जो करते हैं, उन्हें गया-तीर्थ में श्राद्ध कर्म करने का फल प्राप्त होगा।

१०७. मध्याष्टमी

भाद्रपद बहुल पक्ष की अष्टमी तिथी में मध्याह्न तक इसकी व्याप्ति होती है। इन नक्षत्र में महालय श्राद्ध-कर्म अनन्त फलदायनी माना जाता है।

१०८. गजच्छाया

कृष्ण पक्षे त्रयोदश्यां मघास्विंदुः करे रवौ।
यथातथा गजच्छाया श्राद्धे पुण्यमवाप्यते ॥

हस्ता नक्षत्र में रवि तथा मखा नक्षत्र में चन्द्र रहते हैं, तो उस तिथि को कृष्ण पक्ष त्रयोदशी गजच्छाया तिथि कहते हैं। यह तिथि पितृ देवताओं के लिए प्रिय तिथी है। अतः इस तिथि में श्राद्धकर्म श्रेष्ठ माना जाता है।

१०९. महालय अमावास्या

यही भाद्रपद बहुल अमावास्या है। इस दिन पितृ-श्राद्ध करने से वे संतुष्ट होकर ऊर्ध्व लोकगमन करेंगे। इस अमावास्या से महालय का अंत होता है।

११०. कन्या संक्रमण

सूर्यभगवान का प्रवेश द्वादश राशियों में षष्ठम राशि कन्याराशि में होता है। इसे 'षडशीति पुण्यकाल' कहते हैं। इस राशि में सूर्य गमन का छः घंटे और चौबीस (६-२४) मिनिट की अवधि षडशीति है। इस समय स्नान, जप आदि श्रेष्ठ माने जाते हैं। इस मास को तमिल में पेरटाशि मास और कन्या मास भी कहते हैं।

१११. श्री तिरुमल वेंकटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव

आश्वयुज मास के दशमी तक ब्रह्मोत्सव नवाह्निक (नवदिन) रूप से मनाए जाते हैं। यदि कन्या राशि में भाद्रपद मास आता है, तो भाद्रपद और आश्वयुज दोनों मासों में ब्रह्मोत्सव मनाते हैं। प्रथम ब्रह्मोत्सव को अधिक मास का अथवा सालकट्ल- ब्रह्मोत्सव कहते हैं। द्वितीय ब्रह्मोत्सव को नवरात्रि ब्रह्मोत्सव कहते हैं। ब्रह्मोत्सव के बारे में पुराणों का कथन इस प्रकार है –

तत्राहूय मुनीन् सर्वान् महीपालन् यथाक्रमम्।
कन्यामासं गते भानौ द्वितीयायां जगत्पतेः ॥

ध्वजारोहणमाधाय सांकुरारार्पणमेव च।
वैखानसे मुंनिश्रेष्ठैः पूजामन्त्रैः प्रकल्पिता॥

नरयानं रत्नमयं निधाय पुरतो हरेः।
वासुदेवं बभाषेऽथ ब्रह्मलोक पितामहः॥

नरयानं समारुह्य कुरु चैत्य प्रदक्षिणम्।
एव मुक्तः प्रत्युवाच श्रीनिवासः पितामहम्॥

'श्री श्रीनिवास स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव कन्या राशि में सूर्य भगवान के प्रवेश के उपरान्त द्वितीया में अंकुरार्पणपूर्वक ध्वजारोहण ब्रह्मदेव ने वैखानस महर्षि द्वारा कराया था। उस दिन से नवाह्निक रूप में वाहन महोत्सव तथा दूसरे दिन पुष्पयाग महोत्सव भी करवाया था।

ब्रह्मादि स्तम्बपर्यन्त नियन्ता श्री वेंकटेश्वर प्रभुजी के ब्रह्मोत्सव का क्रम-विधान भविष्योत्तर पुराण के १४वें अध्याय में इस प्रकार वर्णित है। यथा –

तस्मिन् महोत्सवे विष्णोः ध्वजारोहणवासरे।
प्रथमे प्रथमं यानं मनुष्यान्दोळिकाऽभवत्॥

द्वितीयं च तथा रात्रा वभवच्चेषवाहनम्।
शेषे शयनशीलस्य शेषाचलनिवासिनः॥
सदा शेषप्रियस्यास्य श्रीनिवासस्य शरागणः॥

द्वितीयदिवसे चाद्यं भूयोऽभूच्चेषवाहनम्।
द्वितीयं च तथा रात्रावभव हंसवाहनम्॥

तृतीय दिवसे चाद्य मभव त्सिंहवाहनम।
द्वितीयं च तथा यानं रात्रौ मौक्तिक मण्डपम्॥

चतुर्थदिवसे यानं आदिमं कल्पभूरुहः।
द्वितीय मभव द्रात्रौ सर्वभूपालवाहनम्॥

पंचमे दिवसे चाद्यं यान मान्दोलिकाऽभवत् ।
हरे रमृतसंधायि मोहिनी वेषधारिणः ।।

द्वितीयं रजनौ यानं वेदवेद्यस्य वै हरेः ।
बभूव च स्वयं साक्षात् छन्दोमूर्तिः खगेश्वरः ।।

आद्यं यानं षष्ठदिने हनुमा नभवद्धरेः ।
द्वितीयं मंगळगिरिः सायं यान मभूद्धरेः ।
महिषी संयुतास्यास्य वसंतोत्सव रागिणः ।।

तृतीयं रजनौ यानं आसीदैरावतो गजः ।
सप्तमेऽभूद्विसे यान माद्यं भास्करमण्डलम् ।।
द्वितीयं मंगळगिरिस्सायमासी द्रमापतेः ।
रमणीयतमोद्यान विहारोत्सव रागिणः ।।

कुसुमापचयव्यग्र महिषी जनशालिनः ।
तृतीयं रजनौ यानः अभवऽचन्द्रमण्डलम् ।।

अष्टमेदिवसे चाद्यं मभवद्वाहनम हरेः ।
नानाविधै रलंकारैः मण्डित स्सुमहान् रथः ।।

द्वितीयं रजनौ यानं अभू दुच्चैःश्रवाह्वयः ।
नवमे दिवासे चाद्यं यान मांदोलिकाऽभवेत् ।।

द्वितीयं मंगळगिरिः यान मासी द्रमापतेः ।
हारिद्रै पिंगलै श्चूर्णैः अभिषिक्तस्य मंगळैः ।।

समुद्युक्तस्याभवभृथस्नान मंगलिकोत्सवे ।
स इत्थं मंगलैश्चूर्णैर्हारिद्रै रभिषेचितः ।।

सुन्दरम्मंगलगिरिं समारुह्या सतां गतः ।
चैत्यं प्रदक्षिणीकृत्य सहसर्वै र्महाजनैः ।।

जपद्भि वैदिकान् मन्त्रान् सहितश्च द्विजोत्तमैः ।
चकारावभृथस्नानं भगवानादिपूरुषः ।।

स्वामिपुष्करिणीतीर्थे सर्वलोकैकपावने ।
अवतारदिने तस्मिन् नक्षत्रे श्रवणे प्रगे ॥

तृतीयं मंगळगिरिर्यानं रात्रावभूत्ततः ।
ध्वजावरोहणाभिख्यः उत्सवोऽभू त्तदा हरेः ॥

ततोऽपरेद्यु रभवत् पुष्पयागमहोत्सवः ।
देशान्तरादागतानां सपर्याऽऽसीत्ततो नृणाम् ॥

देवा जग्मु स्स्वकं धाम राजानो राजसत्तम ।
जग्मुस्स्वनगरं दिव्यं दृष्ट्वा देवमहोत्सवम् ॥
ब्रह्मा जगाम स्वकं लोकं नत्वा वेंकटवल्लभम् ॥

इस प्रकार ब्रह्मदेव ने देवताओं तथा राजाओं का आह्वान करके श्री स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव दस दिनों तक मनाया था। उनको सम्मानित करके उनके स्वस्थानों को भेज दिया। स्वयं श्रीस्वामी को प्रणाम करके अपने स्वस्थान सत्यलोक चला गया।

ब्रह्मा ने जो उत्सव वैभव से मनाए थे, उनमें छटे दिन को सायंकाल उद्यान-विहार उत्सव एवं दसवें दिन पुष्पयाग महोत्सव मनाए जाते थे। वर्तमान में कारण पता नहीं, इनको मनाने की आवश्यकता है इन्हें नहीं मनाते।

ब्रह्मदेव ने जिस प्रकार की व्यवस्था ब्रह्मोत्सव के लिए की थी, उसी प्रकार आज भी मनाया जा रहा है। सर्वकामप्रद नौ दिनों का यह ब्रह्मोत्सव श्रीस्वामीजी के जन्म-नक्षत्र (अवतार-नक्षत्र) में अवभृथ स्नान करने का तथा इसके पहले अंकुरार्पण, ध्वजारोहण से मनाए जाते हैं।

सौरमास के अनुसार जिसे कन्या मास कहते हैं, वह मास चान्द्रमान के अनुसार भाद्रपद और आश्वयुज मासों में आता है। कारण यह है कि सौरमान के प्रकार संवत्सर ३६५ दिनों का होता है, तो चान्द्रमानीय वर्ष

३५४ दिनों का है। जिस मास में सूर्य भगवान का संक्रमण नहीं होता है, उस वर्ष में अधिक-मास होने की संभावना है।

चान्द्रमान संवत्सर में दिनों की संख्या कम है। अतः सूर्यगमन के बिना जो मास आता है, उसमें अधिक-मास के ब्रह्मोत्सव मनाते हैं। चान्द्रमान की गणना में जब अधिक मास आता है, तब से ३९ मासों के अंदर द्वितीय अधिक मास का होना शास्त्रसम्मत है। इन कारणों से प्रति तीसरा साल अधिक मास ब्रह्मोत्सव का समय माना गया है। अधिक मास न आने पर आश्वयुज मास के श्रवण नक्षत्र का दिन अवभृथ स्नान का दिन मानकर ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है, जिसे नवरात्रि ब्रह्मोत्सव भी कहते हैं। जब अधिक मास आता है, तब भाद्रपद मास में ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है, जो ब्रह्मा के द्वारा निश्चित मास है।

आश्वयुज मास में द्वितीय ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है, जिसका विवरण दिया गया है। भाद्रपद मास के ब्रह्मोत्सव का विवरण इस ग्रन्थ के उत्सव प्रकरण में दिया गया है।

११२. आश्वयुज मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार द्वादश मासों में सप्तमी मास का नाम आश्वयुज है। अश्विनी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण इस मास का नाम अश्विनी मास और आश्वयुज मास रखा गया है।

११३. शरन्नवरात्रारम्भ

नवरात्रि पर्व का प्रारम्भ आश्वयुज मास की प्रतिपदा के दिन प्रारम्भ होता है। आश्वयुज तथा कार्तिक दोनों मासों को शरद् ऋतु कहते हैं। अतः शरद् ऋतु के प्रारम्भ के इन नौ दिन 'शरन्नवरात्रियाँ' कहलाते हैं। जो भक्त शक्ति अथवा देवी-उपासक होते हैं, वे इन्हें देवी-नवरात्रियाँ भी कहते हैं। दोनों देवी-देवताओं की प्रधानता इस मास में है।

११४. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर में कलश-स्थापन

आश्वयुज मास के प्रतिपदा को श्री कपिलेश्वर स्वामी की सन्निधि में कलश-पूजा का प्रारम्भ होता है।

११५. श्री तिरुमल वेंकटेश्वर स्वामी का द्वितीय ब्रह्मोत्सव

कन्या-आश्वयुज मास में प्रथम ब्रह्मोत्सव एवं केवल आश्वयुज मास में द्वितीय ब्रह्मोत्सव मनाए जाते हैं। द्वितीय ब्रह्मोत्सव भी श्रवण नक्षत्र में अवभृथ स्नान होने की गणना से नौ दिन (नवाह्निक) मनाते हैं।

	दिवा समय	रात समय
पहला दिन		सेनाधिपति उत्सव और अंकुरार्पण
दूसरा दिन	पालकी उत्सव ध्वजारोहण	बृहत् शेष वाहन (जुलूस)
तीसरा दिन	लघु शेषवाहन	हंस वाहन
चौथा दिन	सिंह वाहन	मोतियों की शामियाना का वाहन
पाँचवाँ दिन	कल्पवृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
छटा दिन	मोहिनी अवतार में पालकी में जुलूस	गरुड वाहन
सातवें दिन	हनुमद्वाहन *सायं:* वसंतोत्सव	गज वाहन
आठवें दिन	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्राभवाहन
नवें दिन	रथ-यात्रा	अश्व वाहन
दसवाँ दिन	पालकी उत्सव	ध्वजावरोहणोत्सव अवभृथोत्सव चक्रस्नान

इस प्रकार ब्रह्मोत्सव का समापन होता है। पर ध्वजारोहण और अवरोहण नहीं होते। दोनों उत्सवों का और एक अन्तर यह है कि प्रथम

ब्रह्मोत्सव के समय तिरुमलराय मण्डप में आस्थान प्रतिदिन मनाया जाता है। मंदिर के चारों गलियों का उत्सव मनाने के बाद आस्थान लगता है। परंतु द्वितीय ब्रह्मोत्सव में ऐसा नहीं होता। द्वितीय ब्रह्मोत्सव में प्रति रात उत्सव के उपरान्त श्रीमलयप्प स्वामी अपने उभय देवेरियों सहित पुष्पमालाओं से सज्जित सहस्र बिजली के दीपों, सुंदर द्वारपालकों के साथ तर्जनी मुद्रा से स्वर्णशेष वाहन पर रंगमण्डप में पधारते हैं। इस समय की शोभा, जो कलियुग वैकुण्ठ के मणिमण्डप को देदीप्यमान करती है तथा श्री स्वामीजी के तर्जनी-मुद्रा सहित दीप्ति नेत्रपर्व करते हैं।

इस समय भाग्यशाली अर्चक महाशय श्रद्धा-भक्ति से श्रीस्वामी की सन्निधि में जाता है। संकल्प करके उत्सवोत्पन्न श्रमोपशमन के लिए उपचार करता रहता है। स्वामी के भोग के लिए अनेकानेक वेणुपात्रों (बांस की टोकरियों), बृहत भोग-पात्रों में नाना प्रकार के भक्ष्य, भोज्य, फल, एलाची व लवंग मिश्रित ताम्बूल (मुखवास) स्वामीजी को निवेदित करते हैं। यवनिका हटायी जाती है।

अर्चक महाशय, आचार्य पुरुष, जिय्यंगार बृन्द, अधिकारी-गण, परिचारक और भक्तों से भरी हुई परम वैष्णव-सभा देदीप्यमान होती है। महाशेष वाहन पर विराजमान दिव्य दम्पति को अनिमिष नेत्रों से देखकर अपने जन्म को धन्य मानते हैं। भक्तों का हृदय आनंदसागर में मग्न होता है।

भुवनैक प्रभु के राजवैभव सहित दिव्य आस्थान मंगल वाद्यों से प्रारंभ होता है। मंगलाशासन करते हैं। तदुपरान्त भगवदाश्रित मिराशीदारों का सम्मान होगा। भक्तजनों तथा गोष्ठी में परमेश्वर के अनुग्रह -नैवेद्य (प्रसाद) का वितरण होगा।

इस कार्यवाही के अनन्तर श्री स्वामीजी अपनी देवेरियों सहित सोने से मढ़े हुए चौकार पर (तिरुच्चि) आरूढ़ होकर मंदिर में जाते हैं। इसी प्रकार

का क्रम द्वितीय ब्रह्मोत्सव के नौ दिनों में चलता है। इस ब्रह्मोत्सव की विशेषता यही है।

११६. सरस्वती पूजा

आश्वयुज शुक्ल के मूला नक्षत्र में सरस्वती की आवाहन -पूजा प्रारंभ करते हैं। पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढा और श्रवण नक्षत्रों में देवीपूजा होती है तथा श्रवण नक्षत्र के प्रथम पाद में विसर्जन किया जाता है।

११७. महाष्टमी

आश्वयुज शुक्ल पक्ष की अष्टमी में देवी की समार्चना प्रशस्त मानी जाती है। मंगलवार हो, तो श्रेष्ठतम है। पर सप्तमी-वेध वर्जित है। उदयकालीन अष्टमी, नवमी तिथियाँ प्रशस्त मानी जाती हैं।

११८. महानवमी

आश्वयुज मास के शुक्ल पक्ष की नवमी यही है। आश्वयुज शुद्ध प्रतिपदा से देवी पूजा प्रारंभ होती है। नवमी के दिन पूजा की समाप्ति होती है। अतः इन पर्वदिनों को देवी नवरात्रियाँ कहते हैं। महाष्टमी और महानवमी का योग यदि मध्याह्न अथवा अपराह्न में होगा, तो उसी दिन सन्धि पूजा, तंत्र सहित करना अपेक्षित है। महानवमी के दिन राजाओं को छत्र छामर गज अश्व चतुरंगों तथा बाण आदि शस्त्रों, दुंदुभि आदि वादनों की पूजा करना विहित-कार्य माना जाता है।

११९. विजयादशमी

आश्वयुज शुक्ल पक्ष दशमी को विजयादशमी कहते हैं। इस दशमी के दिन में अपराह्न तक तिथि की व्याप्ति होनी है और पूर्व-दिन के श्रवण योग को प्रधान मानना है।

इस विजयादशमी में अपराजिता (लक्ष्मी) पूजन, शमीपूजा, सीमोल्लंघन, राजतिलक, सरस्वती का उद्वासन सब आचार उचित रीति से

करना चाहिए। राजतिलक के लिए नवमी विद्ध वर्जित है। उदय तक व्याप्त दशमी प्रधान है। प्रयाम के मुहूर्त इस दशमी में दो प्रकार के हैं – १. सन्ध्यासमय - जब नक्षत्रोदय का अभी होता हो। २. दिवा समय २२ घटिकाओं का समय (एक घटिका २४ मिनिट हैं)। इस मुहूर्त में प्रयाम सर्वविघ्नहरा तथा सर्वकार्यसाधक होता है। एकादशी सर्वदा वर्जित है। विजय-सिद्धि का दिन होने के कारण इसे विजयादशमी कहते हैं। यह सर्व कार्यों के लिए शुभप्रद है। इसके साथ श्रवण नक्षत्र हो, तो परम श्रेष्ठ मानना है। शास्त्र की यही सम्मति है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी को इस विजयादशमी के दिन अवभृथ स्नान और चक्रस्नान संपन्न होता है।

१२०. श्री स्वामीजी की बाक् सवारी

ब्रह्मोत्सव की समाप्ति में ध्वजा अवरोहण के दूसरे दिन सायंकाल को यह उत्सव मनाते हैं। उत्सव मूर्ति श्री मलयप्प स्वामी उभय देवेरियों सहित चकौर में अधिष्ठित होकर वाहन मण्डप में आते हैं। वहाँ आस्थान संपन्न होता है। इसके अनन्तर अप्रदक्षिण विधि से मंदिर के चारों वीथियों में जुलूस में 'पुरिशैवारि बगीचे' में पहुँचते हैं। इधर आस्थान संपन्न होता है। बाद में शेष वीथियों द्वारा श्री स्वामीजी मंदिर में पधारते हैं। बाक् सवारी अथवा अप्रदक्षिणा इस उत्सव की विशेषता है।

१२१. चन्द्रोदयोमाव्रत

आश्वयुज बहुल तृतीय को जो उमाव्रत मनाया जाता है, उसे व्रतों में श्रेष्ठ मानते हैं।

१२२. नरकचतुर्दशी

यह आश्वयुज मास के बहुल पक्ष की चतुर्दशी है। चतुर्दशी चन्द्रोदय तक व्याप्त हो, तो वह प्रधान काल है। जो मृत्यु और नरक से भयभीत हैं,

वे इस अवधि में अभ्यंगन स्नान करें। इस पर्व में तीन काल (अवधि) प्रधान हैं, जो इस प्रकार हैं– १. चतुर्दशी के अंतिम याम से अरुणोदय तक का काल। २. अरुणोदय से चन्द्रोदय तक की अवधि। ३. चन्द्रोदय से सूर्योदय तक की अवधि।

इन अवधियों की विशेषता खगोलीय गणना के अनुसार एक से दूसरा तथा दूसरे से तीसरा काल (अवधि) प्रधान और उत्तम समय है। अतः चन्द्रोदयोत्तर काल अभ्यंगन स्नान के लिए प्रधान है। प्रातः काल गौण है। जिस दिन चन्द्रोदय व्याप्ति की अवधि होती है, उस दिन को पर्व है।

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के देवस्थान में नरक चतुर्दशी को उस रात की कार्यवाही के उपरान्त परंपरा के अनुसार देवस्थान के भण्डारगृह से (उग्राणम) तेल, शीककाय आदि भेजे जाते हैं। इन्हें स्वर्णद्वार के आगे रखते हैं। इसे अर्चकों, एकांगियों, देवस्थान के अधिकारियों में स्थान पुरस्कार के रूप में बाँटते हैं। शेष तैल आदि वस्तुओं को देवस्थान के पारुपत्यदार वहां के नौकरों द्वारा मंगल वाद्यों के साथ मंदिर के चारों ओर की वीथियों में रहनेवाले गृहस्थों को बाँटते हैं। स्वामी से प्राप्त इन वस्तुओं से अभ्यंगन करना अपने जन्म का साफल्य समझते हैं। यह परंपरागत आचार है।

१२३. दीपावली अमावास्या का अस्थान

यह आस्थान आश्वयुज बहुल अमावास्या को होता है। इस अमावास्या के प्रातःकाल में (चन्द्रदयोत्तरकाल) अभ्यंगन स्नान, देवपूजन और अपराह्न में तर्पण (पितृदेवताओं के) सायंकाल के प्रदोष समय में दीपदान दर्शन लक्ष्मीपूजा यथावत् मनाते हैं। इस अमावास्य में स्वाति योग प्रशस्त हैं। इस दिन श्री स्वामीजी का आस्थान अति वैभव से मनाया जाता है।

१२४. केदारगौरी व्रत

आश्वयुज बहुल अमावास्य के अंतिम भाग में गौरी-व्रत व्रत-धारण करनेवाले इसे करते हैं।

१२५. तुलासंक्रमण

सूर्य भगवान द्वादश राशियों में सप्तम राशि तुलाराशि में प्रवेश करता है। इस संक्रमण के पूर्व छे घंटों का समय तथा बाद में (अनन्तर) छे घंटों का काल विषुवत् पुण्यकाल है। इस पुण्यकाल में स्नान, दान, जप, धर्म आदि अनुष्ठान करना है। इस मास को तमिल में अल्पिसि और अन्य भाषाओं में कार्तीक मास कहते हैं।

१२६. तुलाकावेरी नदी स्नान

इस मास में कावेरी नदी का स्नान श्री महाविष्णु भक्तों को चतुर्विध पुरुषार्थ प्रदायक है।

१२७. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर में अन्नाभिषेकोत्सव

इस कार्तिक (तुलामास) मास की पूर्णिमा के दिन श्री कपिलेश्वर मंदिर में अन्नाभिषेक महोत्सव वैभव से मनाया जाता है।

१२८. सुवर्णमुखरी तीर्थ मुक्कोटि - रुद्रपाद

इस मास की पूर्णिमा के दिन स्वर्णमुखरी नदी तट पर जो पर्व मनाया जाता है, उसे 'मुक्कोटि' कहते हैं। इस पर्व का ऐतिह्य इस प्रकार है – जब पाण्डव पुत्र वनवास करते थे, तब अर्जुन समयोल्लंघन का प्रायश्चित्त करने के लिए यात्रा-भ्रमण करते हुए स्वर्णमुखरी नदी तट पर स्थित श्री भारद्वाजाश्रम में आया था। महर्षि ने उसका अतिथि सत्कार किया। उस नदी तट पर प्रशान्त वातावरण से प्रसन्न हुआ। अर्जुन ने महर्षि से उस नदी के उद्भव का इतिवृत्त जानना चाहा। भारद्वाज ने अर्जुन से इस प्रकार कहा–
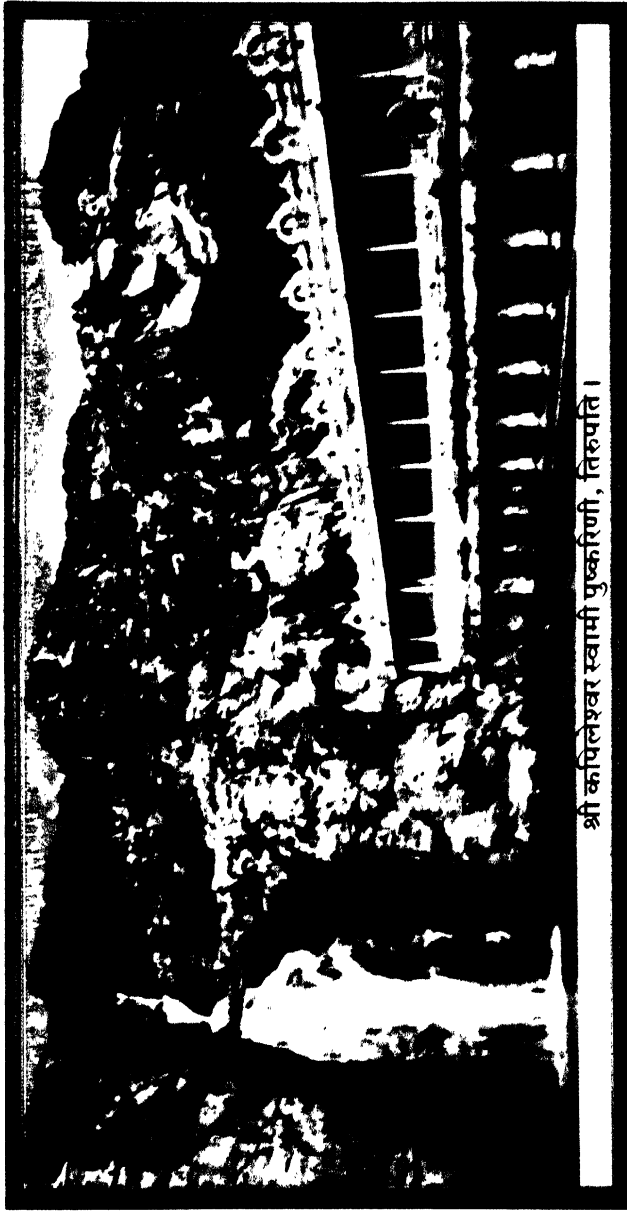
श्री कपिलेश्वर स्वामी पुष्करिणी, तिरुपति ।

आनन्दामृतपूरिता हरपदाम्भोजालवालोद्यता
स्थैर्योपघ्नमुपेत्य भक्तिलतिका शाखोपशाखान्विता ।
उच्चैर्मानसकायमानपटलीमाक्रम्य निष्कल्मषा
नित्याभीष्टफलप्रदा भवतु मे सत्कर्मसंवर्धिता ।।

- शिवानन्दलहरी - श्लोक - ४९.

'प्राचीन काल में महेश्वर पर्वतराज पुत्री पार्वती से विवाह करने के लिए ओषधी संपन्न हिमालय पर निवास करने आए। शिव की आज्ञा से समस्त जीव-समूह पार्वती परिणय को देखने आये। उस समय समस्त प्राणियों के भार से भूमि का उत्तर-भाग पाताल तक सिकुड गया। सब भयभीत हो गए। इस स्थिति में महेश्वर ने महर्षि अगस्त्य को बुलाकर कहा –'हे महर्षि! तुम महा सर्वशक्तिमान् हो। अतः इस भूमि के वैपरीत्य को दूर कर इसका समीकरण करने तुम समर्थ हो। दक्षिण की ओर जाओ। तुम इससे दुःखी नहीं होना कि विवाह के वैभव देखने से वंचित हो जाऊँगा। तुम जहाँ रहते हो, वहाँ तुम्हें पार्वतीपाणिग्रहण कल्याण- वैभव संपन्न मूर्ति का दर्शन मैं तुम्हें दूँगा। – ऐसा कहकर महर्षि को दक्षिण में भेजा।

महर्षि विन्ध्य पर्वत को पारकर दक्षिणी भाग में ज्योंही गये, त्योंही भूमि समतुल्य पर स्थित हो गयी। महर्षि की देव गन्धर्वों ने बहुत प्रशंसा की। महर्षि वहाँ के पर्वताग्र के कासार की रमणीयता से मुग्ध होकर उसके उत्तरी भाग पर अपने शिष्यों सहित आश्रम बनाया। वहाँ अपने शिष्यों के साथ रहने लगा। इस कारण इस पर्वत का नाम अगस्त्य पर्वत माना जाता है।

एक दिन महर्षि नित्य कर्मानुष्ठान के उपरान्त पूजा-गृह में गया तथा शिव की पूजा का प्रारंभ किया। उस समय दिव्यवाणी इस प्रकार सुन पडी – 'हे महर्षि! नदी रहित पुण्य-स्थल की शोभा नहीं होती। अतः अपनी शक्ति से एक महानदी को यहां प्रवाहित कराओ'। महर्षि ने पूजा कार्य पूरा करके आश्रमवासियों को बुलाया। उनसे दिव्य आकाशवाणी के बारे में सुनाया। मुनिगण ने महर्षि का अभिनंदन करके नदी के लिए तप करने का प्रोत्साह किया। नदी के लिए महर्षि निराहारी होकर उग्र तपस्या करने लगा। उसके तप से संसार में संक्षोभ उत्पन्न हुआ। देवताओं ने पद्मभव से सारा वृत्तान्त सुनाया। उसी क्षण ब्रह्मा महर्षि के सामने प्रत्यक्ष होकर और बोले

–'हे महर्षि । तुम्हारी तपस्या से मैं प्रसन्न हो गया हूँ। तुम तप से निवृत्त हो जाओ। जो वर चाहते हो, वह कहो।'

महर्षि ने अपने दृढ संकल्प से धरती को सुक्षेत्र कर सकनेवाली नदी जल को वर के रूप में पूछा। ब्रह्मा ने सम्मत होकर तक्षण दिव्यगंगा को बुलाया और कहा –'हे गंगे! तुम तीर्थ-राज हो। तुम अपने अंश से लोकपावनी महानदी को जहाँ महर्षि चाहता है, उस स्थल में उद्भूत करा दो।'

नदी-माता ने महर्षि से पूछा कि तुम किस स्थान पर नदी का आविर्भाव होना चाहते हो। महर्षि ने कहा कि तुम मेरे साथ आओ; उस स्थल को दिखाऊँगा। महर्षि चलता जाता था, गंगानदी भी साथ-साथ उसके पीछे बहने लगी। इस दिव्य दृश्य को देखकर देवतागण और महर्षियों ने अगस्त्य की भूरि-भूरि स्तुति की थी।

इस समय पद्मयोनि से निर्देशित वायु ने देवताओं को देखते हुए इस नदी का नामकरण 'सुवर्णमुखारि' किया। सुवर्ण की तरह लोगों के लिए महाभाग्य रूपा नदी मुखरी कृत द्विमुखों से अवतरित होने के कारण उसका अन्वर्थ नामधेय स्वर्णमुखरि है।

सुवर्णमुखरि नदी अगस्त्य-शैल पर अवतरित होकर, महर्षि के द्वारा भूभाग में प्रवाहित होकर, दक्षिण में प्रशस्त तीर्थ-राज हो गया। सलिल पूरित लोककल्याणकारी इस महानदी का पर्वदिन कार्तीक मास की पूर्णिमा दिन 'शिव-मुक्कोटि' नाम से विख्यात है। शिव भक्त परायण इस दिन इस तीर्थ में स्नान जप आदि कर्मानुष्ठान करते हैं। इस तीर्थ में महर्षि ने 'रुद्र' के पादों की प्रतिष्ठा की थी, जिन्हें 'रुद्रपाद' कहते हैं। इस दिन इनकी पूजा होती है।

इस सुवर्णमुखरि नदी तट पर अगस्त्य तीर्थ है, जिसके उत्तर भाग में अगस्त्येश्वर मंदिर है। इस मंदिर में कुम्भ-सम्भव अगस्त्य से प्रतिष्ठित पार्वतीपति 'अगस्तेश्वर' अन्वर्थ नामधेय से विराजमान हैं।

मकर संक्रमण के पुण्य काल में सुवर्ण-मुखरी नदी स्नान, अगस्त्येश्वर दर्शन अनंत कोटि फलप्रदायक माना जाता है। इस महानदी के तट पर अगस्त्य की प्रतिमा का पुण्यदान ब्रह्मपद-प्राप्ति का साधन है। यह प्रस्ताव स्कन्दपुराणान्तर्गत है।

१२९. श्री तिरुमल नम्बि की जन्म-तिथि

इस महात्मा का मंगलाशासन कार्तीक मास के अनूराधा नक्षत्र में मनाते हैं। इस नक्षत्र के पहले नौ दिनों तक उत्सव मनाते हैं। दसवाँ दिन शात्तुमोरा होता है। वास्तव में इनका जन्म-नक्षत्र नित्यानुसंधान में इस प्रकार है –

श्रीमल्लक्ष्मणयोगीन्द्र श्रीरामायण देशिकं।
श्रीशैलपूर्णं वृषभस्वाती सञ्जातमाश्रये ॥

न जाने किस कारण से अनूराधा को जन्म-नक्षत्र माना गया है। स्वाती नक्षत्र (वृषभ मास) के बदले अनूराधा मनाते हैं।

१३०. श्रीमणवाल महामुनि की जन्म-तिथि

तुलाया मतुले मूले पाण्ड्ये तु कुरुकापुरे।
श्रीशेषांशोद्भवं वन्दे रम्यजामातरं मुनिम् ॥

इनका जन्म पाण्ड्यदेश के कुरुकापुर में तुला मास के मूला नक्षत्र में हुआ था। अतः इस दिन को जन्म-दिवस मनाते हैं। इस दिन के पहले नौ दिन भी इनके उत्सव मनाते हैं। दसवाँ दिन मंगलाशासन होता है।

१३१. श्री सेनै मोदिलियार की जन्म-तिथि

तुलां गते दिनकरे पूर्वाषाढा समुद्भवं।
पद्मापदाम्बुजासक्तं सेनाधिप महं भजे।

इस सेनाधिपति का जन्म तुलामास के पूर्वाषाढा नक्षत्र में हुआ था। इस दिन इनकी वर्ष-तिथि मनाई जाती है।

१३२. श्री वेदान्त देशिक की वर्ष-तिथि

कन्याश्रवण संभूतं घंटांशं वेंकटेशितुः।
श्रीमद्वेंकटनाथार्यं वन्दे वेदान्तदेशिकम्॥

इनका जन्म चरित्र विचित्र है। इनके पिताजी अनन्तसूरि यजुर्वेदीय शाखा के आपस्तम्ब सूत्र तथा विश्वामित्र गोत्रज थे। इनकी माता का नाम तोतारम्मा था। कहते हैं कि माता के गर्भ में १२ साल (द्वादश वर्ष) रहने के बाद कलियुग की अंग्रेजी गणना के अनुसार सन् १२७० ई.में शुक्ल नाम संवत्सर के कन्यामास में शुद्ध दशमी बुधवार श्रवण नक्षत्र में जन्म हुआ था। आप तिरुमल के श्री वेंकटेश्वर स्वामी की घंटा के अंश के थे। इनका जन्म काँचीपुर में हिमोपवन में सन् १२७० ई. में हुआ था। इस प्रकार इनका जन्म नक्षत्र कन्यामास में श्रवण होने पर भी अनजाने कारणों से इनका जन्म नक्षत्र तुलामास के श्रवण नक्षत्र में नौ दिनों का उत्सव तथा दसवाँ दिन मंगलाशासन मनाया जाता है।

१३३. श्रीपिल्लै लोकाचार्य का जन्म नक्षत्र

तुलायां श्रवणे जातं लोकार्य मह माश्रये।
श्रीकृष्णपादतनयं तत्पदाम्बुजसंश्रितम्॥

कार्तिक मास के श्रवणा नक्षत्र में श्रीकृष्ण पादांश संभूत के रूप में इनका जन्म हुआ था। अतः इन्हें श्रवण-नक्षत्र में उत्सव मनाते हैं।

१३४. श्री पोयगैयाल्वार की जन्मतिथि

आल्वारों में इनका अग्रस्थान है।

तुलायां श्रवणे जातं कांच्यां कांचनवारिजात्।
द्वापरे पांचजन्यांशं सरोयोगिन माश्रये॥

श्री वैष्णव संप्रदाय में आल्वारों का स्तोत्र इस प्रकार है –

भूतं सरश्च महदाह्वय भट्टनाथ
श्रीभक्तिसार कुलशेखर योगिवाहान्।

भक्तांघ्रिरेणु परकाल यतीन्द्रमिश्रान्
श्रीमत्परांकुश मुनिं प्रणतोस्मि नित्यम् ।।

द्वादश आल्वारों की नामावली का क्रम इस प्रकार है –

आल्वारों की नामावली

स्तुत्य उपनाम	*नामधेय*
१. भूतं	पूदात्ताल्वार
२. सरश्च	पोयगै आल्वार
३. महदाह्वय	पेयाल्वार
४. भट्टनाथ	पेरियाल्वार
५. श्रीभक्तिसार	तिरुमलिशै आल्वार
६. कुलशेखर	कुलशेखराल्वार
७. योगिवाह	तिरुप्पानाल्वार
८. भक्तांघ्रिरेणु	तोंडरडिप्पोयाल्वार
९. परकाल	तिरुमंगै आल्वार
१०. परांकुशमुनी	नम्माल्वार

इन दसों के साथ मधुरकवि तथा आण्डाल को मिलाकर द्वादश कहना एक संप्रदाय है।

पोयगै आल्वार पांचजन्यांश से कांचीपुर में यथाक्तकारी (मंदिर) के उत्तर भाग में एक सरोवर में पद्म-संभव हुए थे। इनका अवतरण दिन द्वापर युग में ८६०,९०० संवत्सर जब बीत गए थे और अभी ३,१०० संवत्सर द्वापर में बाकी थे। तब तुलामास (कार्तीक) के श्रवण नक्षत्र में माना जाता है। अतः इस नक्षत्र में इनका जन्म-दिन मनाया जाता है। इनके अन्य नाम भी हैं, जो कासार योगी, आदि योगी, सरोयोगी आदि।

१३५. श्रीपूदत्ताल्वार का जन्म नक्षत्र

विशेषता यह है कि पोयगै आल्वार के अवतरण के दूसरे दिन सरोवर के उत्पल पुष्प में इनका भी अवतरण हुआ था। यह सरोवर सागर

तटीय मल्लापुर में है। कार्तीक मास के धनिष्ठ नक्षत्र में शुक्ल नवमी बुधवार को इनका अवतरण होने के कारण इस दिन इनका उत्सव मनाते हैं। इन्हें उत्पल-मुनि, द्वितीय योगी भूतमुनि आदि नामांतर भी हैं।

तुलाश्रविष्ठा संभूतं भूतं कल्लोलमालिनः
तारे फुल्लोत्पले मल्लापुर्या मीडे गदांशजम ॥

स्वामी के गदा के अंश से इनका उद्भव मानते हैं।

१३६. श्री पेयाल्वार की जन्म तिथि

तुला शतभिषग्जातं मयुरपुरि कैरवात्।
महान्तं महदाख्यातं वन्दे श्रीनन्दकांशजम् ॥

श्री पूदत्ताल्वार के अवतरण के द्वितीय दिन जो शतभिषा नक्षत्र के शुक्ल दशमी गुरुवार होता है, उस दिन मयूर-पुर के सरोवर के पद्म में नन्दक के अंश से अवतरित हुए थे। अतः इन्हें इस नक्षत्र में उत्सव मनाया जाता है। इनके अन्य नाम महायोगी, पेयाल्वार, मयूरपुर-योगी, तृतीय योगी इत्यादि हैं।

१३७. कार्तिक मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार ग्यारह मासों में आठवां मास कार्तिक है। कृत्तिका नक्षत्र पूर्णिमा होने के कारण इस मास का नाम कार्तीक मास है।

१३८. आकाशदीप

कार्तीक शुक्ल की प्रतिपदा से आरंभ होकर मास के अंत तक आकाश दीप ज्वलन होना चाहिए।

१३९. श्री स्वामीजी का पुष्पयाग महोत्सव

कार्तिक मास के श्रवण नक्षत्र में श्री बालाजी का पुष्पयाग उत्सव बहुत वैभव से मनाते हैं। इस उत्सव में उत्सव मूर्ती श्री मलयप्प स्वामीं के

पादारविन्दों में वैष्णव मन्त्रराज, जो षढ़ाक्षरी, अष्टाक्षरी एवं द्वादशाक्षरी हैं उनका जप करते हुए नानारंगों के सुगंधित पुष्प अंजलियों में लेकर समर्पित करते हैं। यह दिव्य दृश्य ऐसा लगता है कि मानों अर्चक महाशय समस्त लोकों का पक्ष लेकर स्वामी से कहते हैं –' हे स्वामी! हम मानव जो सत्वरजस्तमो गुण संबंधी हैं, संसार सागर में डोलायमान हो जूझते हैं। ऐसे हम अशाजीवियों को आप यह पुष्पांजलि स्वीकार करके अपना आश्रय दें।' प्रतिवर्ष यह उत्सव मनाया जाता है।

१४०. अत्रिमहर्षि की जयन्ति

कार्तिक मास के श्रवण नक्षत्र में पतिव्रता अनसूया देवी के पति अत्रि महर्षि की जयन्ति मनायी जाती है।

१४१. प्रबोधनैकादशी

मत्स्यपुराण का कथन इस प्रकार है –'कार्तिके च प्रबुध्येत शुक्लपक्षे हरेर्दिने' – कार्तिक शुद्ध एकादशी के दिन' श्री महाविष्णु योगनिद्रा से जागृत होते हैं। इस पर्व दिन को उत्थैनेकादशी भी कहते हैं। इस पर्व दिन में जो-जो शिष्टाचारी साधक दीक्षा लेना चाहते हैं, अपने-अपने संप्रदायों के अनुसार दीक्षाबद्ध होते हैं। विशेषतः देवता मन्त्रों का तथा देवता व्रतानुष्ठान किये जाते हैं।

१४२. क्षीराब्धि द्वादशी

इस कार्तिक शुक्ल द्वादशी दिन श्री महाविष्णु क्षीराब्धि में जागृत होने के उपलक्ष्य में विष्णु भगवान की विशेष पूजा तथा द्वादशी पारायण करते हैं।

१४३. चातुर्मास्य व्रत की समाप्ति

कार्तिक शुक्ल द्वादशी दिन चातुर्मास्य की समाप्ति होती है। कतिपय शास्त्रज्ञों के कथनानुसार इस व्रत की समाप्ति कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी के दिन अथवा पूर्णिमा के दिन करना चाहिए।

१४४. कैशिक द्वादशी

कार्तिक मास के शुक्ल द्वादशी के दिन तिरुमल श्री स्वामीजी के मंदिर में विराजमान चार मूर्तियाँ जो १. उत्सव श्रीनिवास (सवारी मूर्ति) २. उग्र श्रीनिवास मूर्ति ३. सर्वाधिप श्रीनिवास मूति तथा ४. भोग श्रीनिवास मूर्ति – इनमें उग्र श्रीनिवास मूर्ति का अरुणोदय के समय द्वादशाराधन और आस्थान वैभव से मनाते हैं। आस्थान में कैशिक पुराण का पठन होता है।

१४५. नारायणवनं श्री कल्याण वेंकटेश्वर का प्लवोत्सव

यह प्लवोत्सव कार्तिक शुद्ध एकादशी दिन प्रारंभ होता है और कार्तिक पूर्णिमा तक पंचाह्निक रूप से (पाँच दिनों तक) होता है। कार्तिक पूर्णिम देवता पूजन में विशेष स्थान रखता है। तिरुमल देवस्थान के मंदिरों में इस प्रकार यह कार्तिक पूर्णिमा का उत्सव मनाया जाता है। विवरण –

पहला दिन - शुद्ध एकादशी – श्री कोदण्डराम स्वामी का प्लवोत्सव।

दूसरा दिन - श्रीकृष्ण और आण्डलजी का प्लवोत्सव।

तृतीय, चतुर्थी और पंचमी –इन तीनों दिनों में प्रारंभ होकर पूर्णिमा के दिन तक श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी का प्लवोत्सव (जल-विहार) मनाते हैं।

१४६. विष्णु के मंदिरों में कार्तिक-पर्व दीपोत्सव

कार्तिक पूर्णिमा के दिन कृत्तिका नक्षत्र न होने पर भी प्रति मंदिर में दीपोत्सव होता है।

१४७. वृश्चिक संक्रमण

सूर्य भगवान द्वादश राशियों के अष्टम राशि में प्रवेश करता है। इस समय पहले १६ घटिकायों का काल (६-२४ घंटे) 'विष्णुपद' पुण्यकाल है। इस अवधि में स्नान, जप, दान आदि धर्माचरण करते हैं। इस मास को वृश्चिक मास अथवा कार्तिक मास कहते हैं ।

१४८. तिरुचानूर की श्री पद्मावती देवीजी का ब्रह्मोत्सव

यह उत्सव पांचरात्रागम के अनुसार नौ दिन (नवाह्निक) चलता है। प्रथम दिन व द्वितीय दिन ध्वजारोहण होते हैं। दशम दिन कार्तिक शुक्ल पंचमी को अवभृथ स्नान होता है। इस उत्सव में तिथि की प्रधानता है। कारण यह है कि कार्तिक शुक्ल पक्ष के पंचमी शुक्रवार उत्तराषाढ़ा नक्षत्र युक्त अभिजित् लग्न में शुकपुर (तिरुचानूर) के पद्म सरोवर में देवीजी का आविर्भाव हुआ था। पंचमी तीर्थ को ही अवभृथ स्नान कहते हैं। पंचमी तिथि संगम काल व्यापक होना चाहिए।

	दिवा समय	रात समय
पहला दिन		सेनाधिपति उत्सव और अंकुरार्पण
दूसरा दिन	पालकी उत्सव ध्वजारोहण	बृहत् शेष वाहन (जुलूस)
तीसरा दिन	लघु शेषवाहन	हंस वाहन
चौथा दिन	सिंह वाहन	मोतियों की शामियाना का वाहन
पाँचवाँ दिन	कल्पवृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
छटा दिन	मोहिनी अवतार में पालकी में जुलूस	गरुड वाहन
सातवें दिन	हनुमद्वाहन *सायं:* वसंतोत्सव	गज वाहन
आठवें दिन	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्राभवाहन
नवें दिन	रथ-यात्रा	अश्व वाहन
दसवाँ दिन	पालकी उत्सव	ध्वजावरोहणोत्सव अवभृथोत्सव चक्रस्नान

इस प्रकार दस दिनों का ब्रह्मोत्सव तिरुचानूर में होता है।

१४९. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर में स्कन्द षष्ठी उत्सव

शुक्ल पंचमी युक्त षष्ठी श्रेष्ठ माना जाता है। इस दिन स्कन्द स्वामी का उत्सव होता है।

१५०. चक्रतीर्थ मुक्कोटि

तुला मास को शुक्ल द्वादशी दिन होता है।

१५१. कपिलतीर्थ मुक्कोटि

कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन यह उत्सव मनाया जाता है।

१५२. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर में कार्तिक दीपोत्सव

कृत्तिका नक्षत्र युक्त सायंकाल में दीपोत्सव का पर्व मनाते हैं।

१५३. तिरुमंगै आल्वार की जन्मतिथि

वृश्चिके कृत्तिकाजातं चतुष्कवि शिखामणीम्।
षट्प्रबंधकृतं शारगमूर्तिं कलिह माश्रये ॥

इनका जन्म चोल देश के तिरुक्कोइलूर ग्राम में कार्तिक मास के कृत्तिका नक्षत्र में निम्न वर्ण में हुआ था। शारंग के अंश से हुआ था। नव दिनों तक इनका उत्सव करके दसवां दिन कृत्तिका नक्षत्र में इनकी जन्म-तिथि मनाते हैं। इन्हें परकाल मुनि, शारंग योगि, कलिहयोगि नामों से भी व्यवहृत करते हैं।

१५४. श्री तिरुप्पणाल्वार की जन्मतिथि

वृश्चिके रोहिणी जातं श्रीपाणं निचुलापुरे।
श्रीवत्साशं गायकेन्द्रं मुनिवाहन माश्रये ॥

इनका जन्म श्रीरंग से एक क्रोस दूर पर स्थित निचुलापुर अथवा उरयूर दिव्य प्रांत में कार्तिक मास के रोहणी नक्षत्र में श्रीवत्स के अंश से अयोनिज के रूप में हुआ था रोहिणी नक्षत्र में उनकी जन्मतिथि मनाते हैं। आपके अन्य नाम श्रीवत्सांश योगी, मुनिवाहनयोगी तथा गायक योगि हैं।

१५५. श्री गोविन्दराज स्वामी का तिरुवडि मंदिर में आगमन

कार्तिक मास के अंतिम इतवार को स्वामीजी तिरुवडि में पधारते हैं। यह उत्सव मानते हैं।

१५६. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर में कार्तिक सोमवाराभिषेक

कार्तिक की अमावस्या-पर्व दिन के पहले जो सोमवार आता है, उस दिन सोमवार को विशेष अभिषेक होता है।

१५७. मार्गशीर्ष मास

चान्द्रमानानुसार द्वादश मासों में नवम मास मार्गशीर्ष मास है। मृगशिरा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण इसे मार्गशीर्ष मास कहते हैं।

१५८. श्री दत्तात्रेय जयन्ति

मार्गशीर्ष के पूर्णिमा दिन अनसूया आत्रि महर्षि पुण्य दम्पति का पुत्र-रत्न दत्तात्रेय की जन्मतिथि मनाते हैं। इस पूर्णिमा को प्रदोष की व्याप्ति होनी चाहिए।

१५९. अंग्रेजी संवत्सरादि (हूण संवत्सरादि)

अंग्रेजी मासों की गणना के अनुसार जनवरी प्रथम दिन अंग्रेजी संवत्सर का प्रथम दिन है।

१६०. श्री गोविंदराज स्वामी के रामचन्द्र तीर्थ का आगमन

श्री गोविंदराजस्वामी प्रतिवर्ष जनवंरी पाँचवी तारीख को मंदिर के उत्तर में स्थित श्री रामचन्द्र तीर्थ को पधारेंगे।

१६१. धनुस्संक्रमण

सूर्य भगवान द्वादश राशियों में जो नवम राशि धनूराशि है, उसमें प्रवेश करता है। प्रवेश समय के बाद छे घंटे २४ मिनिट (६-२४) (१६ घटिकाएँ) के बाद स्नान, जप आदि धर्मानुष्ठान कर सकते हैं। इसे तमिल में 'मार्गलि' कहते हैं।

१६२. धनुर्मास की पूजा का प्रारंभ

धनुस्संक्रमण के समय तिरुमल श्री स्वामी के मंदिर में विशेष पूजा प्रारंभ होती है। धनुर्मास पूजा की स्मृति-चिह्न के रूप में श्रीस्वामीजी के वक्षःस्थल पर विराजमान श्रीदेवी के पार्श्व में स्वर्ण शुक प्रतिमा प्रकाशित होती है।

१६३. श्री तोण्डरडिप्पोडि आल्वार की जन्म तिथि

कोदण्डे ज्येष्ठनक्षत्रे मंडंगुडि पुरोद्भवम्।
चोलोर्व्यां वनमालांशं भक्तवदेणु माश्रये।।

आपका जन्म चोल प्रांत के मंडंगुडिपुर में धनुर्मास के ज्येष्ठा नक्षत्र में वनमालांश से हुआ था। अतः इस दिन आपकी जन्मतिथि मनाई जाती है। आपके अन्य नाम विप्रनारायण, वनमालांशयोगी, मंडंगुडि मुनि हैं।

१६४. श्री कपिलेश्वर स्वामी के मंदिर के सरोवर में प्लवोत्सव

धनुर्मास के आर्द्रा नक्षत्र के पहले तीन दिन यह उत्सव मनाते हैं।

१. *प्रथम दिन* - श्री विघ्नेश्वर और चन्द्रशेखर स्वामी का प्लवोत्सव।

२. *द्वितीय दिन* - श्री सुब्रह्मण्य स्वामी का प्लवोत्सव।

३. *तृतीय दिन* - श्री कपिलेश्वर स्वामी का प्लवोत्सव।

इस तीर्थ में प्लवोत्सव नयनानन्द-दायक है।

१६५. श्री कपिलेश्वर स्वामी का आर्द्रा नक्षत्र महोत्सव

धनुर्मास के आर्द्रा नक्षत्र में श्री कपिलेश्वर का दर्शन पुण्यदायक है। अतः नगर तथा आसपास के ग्रामों से भक्तजन इस भक्तजन इस दिन इस तीर्थ में स्नान-जप, पूजा दीप-समार्चना करते हैं। दीप-मालिकाओं को तीर्थ में बहाते समय मनोहर दृश्य वर्णनातीत है। मंदिर का सारा आवरण दिव्य दीपों से ज्योतिर्मय हो जाता है। तीर्थ-स्नान, देवतार्चन, दीप लक्ष्मी की पूजा से समस्त वातावरण दिव्यता से भर जाता है।

१६६. तिरुमल श्री बालाजी के मंदिर में अध्ययनोत्सव

धनुर्मास में शुक्ल एकादशी के पहले एकादश दिनों तक श्री स्वामीजी की सन्निधि में मध्याह्न के समय दिव्य प्रबंध का अध्ययन होता है। तमिल में इसे 'पगल्-पत्तु' कहते हैं।

१६७. लघु मंगलाशासन

वैष्णव मंदिरों में तमिल के नालायरं प्रथम अयिरम, द्वितीय अयिरम 'तिरुमोळि', तृतीय अयिरम इयंर्वा – इन तीनों का अध्ययन संप्रदायानुसार दस दिनों में समाप्त करते हैं। एकादश दिन लघु मंगलाशासन करते हैं।

१६८. श्री वैकुण्ठ एकादशी

धनुर्मास के शुक्ल पक्ष के एकादशी के दिन यह उत्सव मनाते हैं। श्री स्वामी के सान्निध्य में रात के भोग चढ़ाने के बाद नम्माल्वार कृत 'तिरुवाइ मोलि' नामक दिव्य प्रबंध का चौथे 'अयिरम' का अध्ययन प्रारंभ होता है। वेदों का पारायण प्रारंभ होता है। इसी दिन गर्भालय से आवृत्त परिक्रमा मार्ग का द्वार खोल देते हैं, जिसे वैकुण्ठ द्वार कहते हैं। इसे 'चूलिका' भी कहते हैं। भक्तजन इस चूलिका से प्रवेश करके परिक्रम के रूप में मंदिर के अग्रभाग तक जाते हैं। इसे वैकुण्ठ परिक्रमा कहते हैं, जो वैकुण्ठ एकादशी दिन मात्र यह होता है।

१६९. श्री स्वामि पुष्करणि की मुक्कोटि

धनुर्मास में वैकुण्ठ एकादशी के बाद द्वादशी के अरुणोदय में त्रैलोक्य प्रसिद्ध तीन करोड और पचास लाख पुण्यतीर्थ इसमें संगम करते हैं (स्वामि पुष्करिणि में) अतः इस तीर्थ की मुक्कोटि मनाया जाता है। इस दिन स्वामी की प्रातःकाल की आराधना तथा भोग चढ़ाने के बाद श्री चक्रत्ताल्वार एक काष्ठ चौकोर पर विराजमान हो महाप्रदक्षिणा के रूप में स्वामि-पुष्करिणी में स्नान के लिए श्री वराहस्वामी के मुख-मण्डप में पधारते हैं। यहां चक्रत्ताल्वार का अभिषेक होता है तथा स्नान भी कराया जाता है। इस

समय हजारों भक्त भी पुष्करिणी में पुण्य स्नान करते हैं। स्नानान्तर श्री चक्रत्ताल्वार को भोग और आरति देने के बाद, श्रीबालाजी के मंदिर की सन्निधि में आते हैं।

१७०. प्रणय कलहोत्सव

धनुर्मास की रात्रि उत्सों में षष्ठम दिन श्री स्वामी तथा श्रीदेवी और भूदेवियों में प्रणय कलहोत्सव होगा। इस दिन सायंकाल श्रीमलयप्प स्वामी (सवारी मूर्ति) चौकोरे में महा परिक्रमा के रूप में मंदिर के चारों वीथियों में जुलूस निकलते हैं। स्वामी ईशान्य-भाग से पधारते हैं, तो देवेरियाँ अन्य चौकोर पर अधिष्टित होकर मंगल वाद्यों सहित श्रीस्वामी के सामने आती हैं।

इस समय प्रणय-कलह संबंधी पुराण का पठन होगा। भोग और आरति के उपरान्त श्रीमलयप्प उभय देवेरियों सहित श्रीस्वामी के मंदिर में जायेंगे।

१७१. बृहत् मंगलाशासन

श्री वेंकटेश्वर स्वामी (तिरुमल) के मंदिर में वैकुण्ठ एकादशी के दशम दिन दिव्य प्रबंध का अध्ययन समाप्त होने के उपलक्ष्य में प्रबंध का मंगलाशासन तथा वेदपारायण की समाप्ति के उपलक्ष्य में वेद मंगलाशासन दोनों संपन्न होते हैं।

१७२. श्री स्वामीजी के मंदिर में अध्ययनोत्सव - विवरण

दिन के उत्सव	-	११ दिन
रात के उत्सव	-	१० दिन
कण्णिमण शिरुत्ताम्बु	-	२१ दिन
		२२ वाँ दिन
रामानुजनूटुंदादि	-	२३ वाँ दिन
श्रीवराहस्वामी का शात्तुमोरा	-	२४ वाँ दिन
तन्नीरमुदु	-	२५ वाँ दिन

इस प्रकार दिव्य प्रबंध पारायण संबंधी अध्ययनोत्सव २५ दिन तक तिरुमल पर होता है।

१७३. श्री आण्डाल नीराट उत्सव अभिषेकोत्सव (स्नानोत्सव)

नीराट उत्सव का अर्थ अभिषेकोत्सव है। तिरुपति में मकरसंक्रमण के पहले सात दिनों तक यह उत्सव मनाया जाता है। वैष्णवधर्मावलम्बियों के लिए यह अत्यंत प्रधान उत्सव है। तमिल में 'नीराट्ट' का अर्थ अभिषेक है।

उत्सव की विशेषता का इतिवृत्त

श्री गोदादेवी का नामांतर आण्डाल है। पाण्ड्य देश में विष्णुचित्त नामक विष्णुभक्त थे। आपको पेरियाल्वार भी कहते हैं। आपके तुलसी-वन में मनोहर शिशु-बालिका आपको प्राप्त हुई। आप बलिका का प्रेमातिशय से पोषण करता था। यही बालिका गोदादेवी है। वह बाल्यावस्था में ही श्रीकृष्ण को ही अपना पति मानने लगी। उसने श्रीकृष्ण तथा गोपिकाओं की जो कथाएँ सुनी थीं, उनका इसके मन पर अत्यंत प्रभाव पडा। वह तो स्वयं मथुरा या बृन्दावन तक जाने की अपनी असमर्थता पर दुःखी होती है। पर दृढ़-चित्त होकर अपनी सखियों को गोपिकाएँ मानकर उनके साथ गोपिकाओं के व्रत का अनुसरण करके स्वयं व्रतधारिणी होती है। इसी व्रत को धनुर्मास व्रत कहते हैं। जिस प्रकार गोपिकाओं ने श्रीकृष्ण को अपना पति के रूप में पाने के लिए व्रत धारण हेमन्त में किया था, उसी प्रकार गोदादेवी ने भी श्रीकृष्ण भगवान को ही अपना पति होने का व्रत धारण किया। सात दिन गोदादेवी अपनी सखियों सहित प्रातःकाल घर-घर जाकर उन्हें व्रताचरण के लिए जगाती है। अंग्रेजी काल-गणना के अनुसार यह आण्डाल नीराट्ट उत्सव जनवरी छः तारीख को प्रारंभ होकर भोगि-त्योहार (१३वीं तारीख) जो आता है, उस दिन समाप्त होता है।

इस दिन श्रीगोदा देवीजी धनुर्मास पूजा की समाप्ति में एक पालकी पर अधिष्ठित होकर मंदिर की वीथियों से रामचन्द्र-तीर्थ में स्थित मण्डप में विराजमान होती है। वहाँ देवी का अभिषेक, भोग, आरति, आस्थान, मंगलाशासन के बाद सायंकाल तक यही रहेगी। शाम की पुष्पालंकारों से शोभित देवी मंदिर की वीथियों से पालकी पर विराजमान होकर उत्सव में निकलेगी। समाप्ति के बाद मंदिर में पधारेगी। अभिषेकोत्सव यही है।

१७४. भोगी-त्योहार - भोगि-रथ

मकर संक्रमण के पूर्व दिन भोगी त्योहार है। इस दिन श्री गोदादेवी श्रीकृष्ण सहित भोगिरथ पर विराजमान हो मंदिर की चारों वीथियों में शोभायात्रा में निकलती हैं। यह अभिषोकोत्सव अन्य प्रांतों में नवौ दिन तक होता है। भोगी के पर्वदिन श्री गोदादेवी का श्रीकृष्ण के साथ परिणय उत्सव भी अन्य वैष्णव क्षेत्रों में संपन्न होता है। यह परंपरागत आचार है।

१७५. पौष मास

चान्द्रमान की गणना के अनुसार द्वादश मासों में पौष मास दसवाँ है। पुष्यमी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण यह पुष्य मास कहलाता है। इसे पौष्य मास और पुष्य मास भी कहते हैं।

१७६. मकर संक्रमण – उत्तरायण पुण्यकाल

श्री सूर्य भगवान मेषादि राशियों में दशम मकर राशि में प्रवेश करता है। जिस समय प्रवेश करता है, उस समय से १६ घंटों का काल उत्तरायण पुण्य काल माना जाता है। सूर्य का गमन उत्तरी दिशा की ओर होने से इस उत्तरायण कहते हैं। इस संक्रमण को दक्षिण में 'संक्रांति पर्व' कहते हैं। इस पर्व को बहुत वैभव से मनाते हैं। स्नान दान तर्पण आदि धर्म कार्य करते हैं। (भोगी, संक्रांति और कनुम तीन दिनों का पर्व मनाया जाता है।)

दिन के समय संक्रमण होता है, तो १६ घंटों तक संक्रमण की व्याप्ति है। यदि रात के पूर्वोपर भागों में या निशीथ में संक्रमण हो तो दूसरे दिन का

श्री वेंकटेश्वर स्वामी का पुष्पयाग

पुष्पैर्देवाः प्रसीदंति पुष्पेदेवाश्च संस्थिताः ।
किंचाति बहुनोक्तेन पुष्पस्योक्ति मतंद्रिकाम् ।।
परंज्योतिः पुष्पगतं पुष्पेणैव प्रसीदति ।
त्रिवर्ग साधनं पुष्पं पुष्टिश्री स्वर्गमोक्षदम् ।।

- पुष्प चिंतामाणिः - २-३.

पुण्यकाल मानना चाहिए। दूसरा दिन पूर्वार्ध श्रेष्ठतर, सूर्योदयानन्तर काल श्रेष्ठतम माना जाता है। संक्रमण का सन्निहित काल सर्वश्रेष्ठ है। ज्योतिश्शास्त्र के अनुसार सन्ध्या समय यदि संक्रमण हो, तो पहले दिन को पुण्य दिन मानना है। इसे मकर मास और तमिल में तै मास कहते हैं।

१७७. कनुम त्योहार

मकर संक्रमण के दूसरे दिन कनुम है। इस दिन तिरुपति में श्री गोदादेवी का परिणय महोत्सव होता है।

श्री गोदादेवी के विवाह का पुराण पठन करना आचार है। तिरुमल में श्री बालाजी श्री ताल्लपाक मण्डप में पधारते हैं। (दक्षिण के गावों में इस दिन गायों का उत्सव मनाया जाता है।)

१७८. श्री गोदा परिणयोत्सव

मकर संक्रमण के दूसरे दिन 'कनुम' दिन तिरुपति में यह उत्सव मनाते हैं। विष्णुचित्त की पुत्री गोदा (मन्नारनाथ) श्रीकृष्ण की अनन्य भक्ति से मोक्ष-प्राप्त भक्तिन है। कन्नड भाषा सम्राट श्रीकृष्णदेवराय ने इस पुण्यवती के बारे में 'आमुक्तमाल्यदा' नामक प्रबंध काव्य की रचना की है।

१७९. तिरुमल श्री बालाजी पार्वेट मण्डप में पधारते हैं।

कनुम दिन (संक्रमण के दूसरे दिन) श्री स्वामीजी ताल्लपाक वंशजों के मण्डप में पधारते हैं। गायों का अलंकरण, पूजन एवं उनका जुलूस इस दिन की विशेषता है।

१८०. श्री कपिलेश्वर स्वामी की सन्निधि में - श्री कामाक्षी देवी का चंदनाभिषेक

मार्गशीर्ष मास की पूर्णिमा को कामाक्षी देवीजी का चंदनाभिषेक शुक्रवार को वैभव से मनाते हैं।

१८१. श्री रामकृष्ण तीर्थ मुक्कोटि

इस मास के पुष्यमी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा दिन त्रैलोक्य विश्रुत तीन करोड और पचास लाख तीर्थ रामकृष्ण तीर्थ में प्रवाहित होते हैं। अतः इस दिन इस तीर्थ में स्नान-जप आदि करके भक्तजन श्री बालाजी के दर्शन करते हैं।

१८२. श्री तिरुमलिशै आल्वार की वर्ष तिथि (वर्षागाँठ)

मघायां मकरे मासे चक्रांशं भार्गवोद्भवम्।
महीसारपुराधीशं भक्तिसार महं भजे ॥

आपका जन्म महीसारपुर (तिरुमलिशैग्राम) में मकर मास के मखा नक्षत्र में चक्रांश से हुआ था। पिता का नाम भार्गवोत्तम था। इन्हें भक्तिसार योगी चक्रांशयोगी तिरुमलिशै आल्वार भी कहते हैं। इस नक्षत्र में उनकी तिथि मनाते हैं।

१८३. श्रीकूरत्ताल्वार की जयन्ती

मकरे हस्तनक्षत्रे सर्पनेत्रंश संभवम्।
श्रीमत्कूरकुलाधीशं श्रीवत्सांक मुपास्महे ॥

आपका जन्म मकर मास के हस्ता नक्षत्र में लक्ष्मणांश से हुआ था। आपके माता-पिता श्री अनन्त भट्टाचार्य और महादेवी थे। आपकी वर्ष-तिथि इसी हस्ता नक्षत्र में मनायी जाती है। आपके अन्य नाम श्री कूरेश, श्री कूरत्ताल्वार और श्रीवत्सचिह्नमिश्र हैं।

१८४. तिरुपति श्री गोविंदराज स्वामी के मंदिर में अध्ययनोत्सव का प्रारंभ

मकर मास शुक्ल एकादशी दिन श्रीस्वामी की सन्निधि में नालायर प्रबंध का पठन होने के बाद दिन का उत्सव मनाते हैं। इस वर्ष-तिथि के पहले दस दिनों से प्रबंध का पारायण होता है।

१८५. लघुमंगलाशासन

अध्ययनोत्सव के एकादश दिनों में नालायर प्रबंध का 'आयिरम' (प्रथम अध्याय), तिरुमोलि (दूसरा अध्याय) 'इयर्पा' नामक तीसरा अध्याय का पठन समाप्त होता है। एकादशवां दिन लघुमंगलाशासन संप्रदाय के अनुसार होता है।

१८६. मकर शुक्ल एकादशी

मकर मास शुक्ल एकादशी में तिरुपति स्थित श्री गोविंदराज स्वामी के मंदिर में रात के उत्सव के रूप में इस दिव्य प्रबंध के चौथा भाग का पठन होता है। कवि श्रीनम्माल्वार हैं, इसे तिरुवाईमोळि भी कहते हैं। इस भाग का अध्ययन होता है। वेदपारायण भी प्रतिदिन होता है।

१८७. प्रणयकलहोत्सव

यह उत्सव भी (अध्ययनोत्सव) गोविंदराज स्वामी (तिरुपति) के मंदिर में संपन्न होता है। नालायर प्रबंध चौथे भाग आयिरम के अध्ययन जब होता है, तब षष्ठम दिन श्रीस्वामी और उभय देवेरियों का प्रणय-कलहोत्सव मनाया जाता है। स्वामीजी मंदिर की चारों वीथियों में चकौरै पर अधिष्ठित होकर जुलूस में निकलते हैं। मंदिर के दोनों बृहत गोपुरों के मध्य चार खंभों का जो मण्डप है, उसमें पधारते हैं। 'रापत्तु' का अर्थ-रात के समय का उत्सव। अतः यह उत्सव सायंकाल को प्रारंभ होता है। देवेरियां भी चकौरै पर अधिष्ठत हो मंगल वाद्यों के साथ श्रीस्वामी के सामने पधारती हैं। वे भी मण्डप में पधारती हैं। वहाँ प्रणय-कलह संबंधी पुराण का पठन होगा। तदनन्तर स्वामीजी उभय देवेरियों सहित मंदिर में पधारेंगे।

१८८. बृहत् शात्तुमोरा

मकर मास के शुक्ल एकादशी के दिन तिरुपति के श्रीस्वामी के मंदिर में चौथा अध्याय (दिव्य प्रबंध का) 'तिरुवाईमोळि' प्रबंधाध्ययन की समाप्ति के उपलक्ष्य में मंगलाशासन कहते हैं। दस दिन तक पारायण चलता रहेगा। दसवें दिन यह बृहत रूपी मंगलाशासन किया जाता है। वेद

शात्तुमोरा भी किया जाता है। अतः दिव्यप्रबंध तथा वेद दोनों का मंगलाशासन होने के कारण इस उत्सव को बृहत मंगलाशासन कहते हैं।

१८९. श्री गोविंदराजस्वामी के मंदिर में अध्ययनोत्सव की समाप्ति

अध्ययनोत्सव जो दिन के समय होता है, उसे 'पगलपत्तु' कहते हैं। ११ दिनों तक होनेवाले अधययनांशों का विवरण –

'पगलपत्तु' - दिवा समय का अध्ययन	– ११ दिन
'रापत्तु' - रात के समय का अध्ययन	– १० दिन
	कुल २१ दिन
कण्णिमणि शिरुत्ताम्बु	– २२वाँ दिन
रामानुज नूट्रंदादि	२३ वाँ दिन
तन्नीरमुदु	२४ वाँ दिन

इस प्रकार तिरुमल के मदिर में जिस प्रकार का अध्ययनोत्सव होता है, उसी प्रकार का अध्ययन तिरुपति के श्री गोविंदराज स्वामी के मंदिर में भी होता है। अतः दो बार विवरण दिया गया है। धनुर्मास में तिरुमल मंदिर में तथा मकर (माघ) मास में तिरुपति में अध्ययनोत्सव होता है।

१९०. माघ मास

चान्द्रमान गणना के अनुसार द्वादश मासों में माघ मास एकादश मास है। मख नक्षत्रेणयुक्ता पूर्णिमा माधीसाऽस्मिन्निति माघः – मख-नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा होने से यह मास माघ मास है। म+अघं=माघ, मा=अविद्यमानं, अघं=पापं, अस्मिन्निति माघः = पापरहित मास होने से इसे माघ मास कहते हैं।

१९१. अर्दोदय – महोदयः

खगोल-शास्त्र में पूस मास और माघ मास के मध्यवर्ती अमावास्या की विशेष प्रधानता है। यथा –

अमाऽर्कपात श्रवणैर्युक्ताचेत पौषमाघयोः।

अर्जोदय रस विज्ञेयकोटि सूर्यग्रहस्समः।

किंचिन्यून्नं महोदयः।

पौष-माघ मास के मध्यवर्तिनी अमावास्या आदित्य वार युक्त श्रवणा नक्षत्र युक्त तथा व्यतीपात योगयुक्त योग 'अर्दोदय' कहलाता है। यह योग-काल कोटि-सूर्य-ग्रहणों के समान पुण्यकाल है। इस योग की व्यवधि कम होने से 'माहोदय योग' का पुण्यकाल है। इस पुण्यकाल का फल – उक्त कथित दोनों योगों में समस्त जल गंगानदी स्नान समान है। इस महापुण्यकाल में गंगानदी स्नान, दान और जप सहस्रों गुण अधिक फलदायक है। शास्त्र वचन ऐसा है।

१९२. रथ सप्तमी

अरुणोदय तक ही सप्तमी की तिथि व्याप्त है, तो पहले दिन को सप्तमी मानना है। इस पुण्य-तिथि की विशेषता यह है कि वैवस्वत-मन्वन्तर का यह प्रारंभिक दिन है। माघ मास से शुक्ल की सप्तमी यही है।

१९३. भीष्माष्टमी

माघ मास के शुक्ल पक्ष के अष्टमी दिन जो श्रद्धावान भीष्माचार्य का श्राद्ध व तर्पण करके उनका स्मरण करते हैं, वे सन्तान को पाएंगे और पापों का प्रक्षालन भी होगा। यह धर्मशास्त्र का वचन है।

१९४. मध्व नवमी

माघ मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि में जो उस्तव मनाया जाता है, उसे मध्व संप्रदायक द्वैत भाष्यकार श्री आनंदतीर्थ महाशय की आराधना कहते हैं।

१९५. भीष्मैकादशी

माघ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी भीष्मैकादशी है।

१९६. श्रीनिवासमंगापुरम् के श्रीकल्याण वेंकटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव

ब्रह्मोत्सव का विवरण, वाहनों का समय, दिन-रात में जो जो तिरुमल पर होते हैं, उसी क्रम में होते हैं। (नवम की रात को कल्याणोत्सव तथा दसवाँ दिन चूर्णोत्सव (चंदनादि सुगंध चूर्णों से अभिषेक) और एकान्त सेवा – इस ब्रह्मोत्सव का विशेष उत्सव है। (अतः वाहन सेवाओं का पुनःकथन नहीं हुआ है। ध्वजारोहण तथा अवरोहण सब तिरुमल में जैसे होता है, उसी प्रकार को होता है। – अनुवादिक।)

१९७. तिरुपति श्री गोविंदराज स्वामी का प्लवोत्सव

माघ मास के शुद्धैकादशी के दिन प्रारंभ होकर माघ पूर्णिमा तक यह प्लवोत्सव समाप्त होता है। विवरण–

प्रथम दिन– श्री कोदण्डराम स्वामी का प्लवोत्सव।

द्वितीय दिन– श्रीकृष्णजी का प्लवोत्सव।

तृतीय, चतुर्थ और पंचमी - तीन दिनों में – श्री गोविंदराज स्वामी का प्लवोत्सव होता है।

पाँच दिनों तक यह उत्सव तिरुपति के तीर्थजल में होता है। (यह पुष्करिणी देवस्थान के बस स्टैण्ड के बगल में है।

१९८. महाशिवरात्रि

माघ मास के बहुल चतुर्दशी दिन महाशिवरात्रि का पुण्य दिन है। निशीथ तक तिथि की व्याप्ति होनी चाहिए। पहले दिन की निशिथी व्याप्त है, तो उस दिन को और दूसरे दिन की निशिति तक व्याप्त है, तो उस दिन को पूर्व-काल मानना है। यदि दोनों दिनों में निशीथ तक व्याप्त (तिथि) न हो, तो प्रदोष व्याप्त दूसरे दिन को पुण्यकाल मानना चाहिए। इस माघ मास के बहुल पक्ष की चतुर्दशी आदित्यवार अथवा मंगलवार युक्त हो, तो शिवरात्री

व्रत का यह श्रेष्ठतम समय मानना चाहिए। स्कन्द पुराण का कथन इसीको स्पष्ट करता है।

१९९. श्री कपिलेश्वर स्वामी का नन्दिवाहनोत्सव

महाशिवरात्रि के शुभदिन कपिलेश्वर मंदिर में नन्दिवाहन का उत्सव वैभव से होता है। स्वामी का भौतिकोत्सव (पंचाह्निक) पांचदिनों तक इस क्रम से मनाते हैं, जो इस प्रकार है –

प्रथम दिन - अंकुरार्पण।

द्वितीय दिन - ध्वजारोहण।

तृतीय दिन - नन्दिवाहनोत्सव जो शिवरात्रि के दिन होता है।

चतुर्थ दिन - कल्याणोत्सव।

पाँचवां दिन - त्रिशूल स्नान एवं ध्वजावरोहण।

इस प्रकार महाशिवरात्रि वैभव से मनायी जाती है।

२००. कुम्भ संक्रमण

सूर्य भगवान मेषादि द्वादश राशियों में एकादशी राशि, जो कुम्भ राशि है, उसमें प्रवेश करते हैं। इस प्रवेश के पूर्व समय छ घंटे २४ मिनिट (१६ घटिकाओं का समय) का होता है, जिसे विष्णुपद पुण्यकाल कहते हैं। इस अवधि में स्नान दान जप आदि अनुष्ठान करना पुण्यफलदायक है।

२०१. कुमारधारा मुक्कोटि

कुम्भ मास के मख नक्षत्र युक्त पूर्णिमा दिन इस तीर्थ में त्रैलोक्य विश्रुत तीन करोड और पचास लाख तीर्थ इसमें मिलते हैं। अतः इस दिन इस तीर्थ का स्नान जप दान आदि करके भक्त श्रीस्वामीजी के दर्शन करते हैं। स्वामीजी के तीर्थ प्रसादों से अपने को कृतार्थ मानते हैं।

२०२. तिरुक्कचि नम्बियार की वर्षागांठ

कुम्भे मृगशिरोजातं श्रीकांचीपूर्णमाश्रये।
षट्सूक्तिं यतिराजाय यन्मुखाद्वरदोऽवदत्॥

आपका जन्म कुम्भ मास (माघ मास) के मृगशिरा नक्षत्र में हुआ था। इस तिथि के पहले नौ दिनों से यह उत्सव मनाते हैं। दसवें दिन मृगशीर्ष नक्षत्र में मंगलाशासन करते हैं। आपको कांचीपूर्ण भी कहते हैं।

२०३. श्रीकुलशेखराल्वार की वर्षागाँठ

कुम्भे पुनर्वसौ जातं केवले चोळपट्टणे।
कौस्तुभांशं धराधीशं कुलशेखर माश्रये॥

आपका जन्म केरल प्रांत के चोल पट्टण में कुम्भ मास में पुनर्वसु नक्षत्र में कौस्तुभांश से हुआ था। इस नक्षत्र में आपका मंगलाशासन होता है। केरल योगी कौस्तुभ योगी आपका अन्य नाम है।

२०४. फाल्गुन मास

चान्द्रमान गणना के अनुसार द्वादश मासों में द्वादशवाँ मास फागुन है। 'फल्गुनी नक्षत्रेणयुक्ता पौर्णमासी फाल्गुनी साऽस्मिन्निति फाल्गुनः' – इस व्युत्पत्ति के अनुसार इस मास का नाम उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होने के कारण फागुन है।

२०५. तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का प्लवोत्सव

फागुन मास की शुद्ध एकादशी से प्लवोत्सव प्रारंभ होकर पूर्णिमा तक पांच दिनों यह उत्सव मनाया जाता है। यथा –

प्रथम दिन– श्री कोदण्डरामस्वामी का प्लवोत्सव।

द्वितीय दिन– श्रीकृष्णजी का प्लवोत्सव।

तृतीय दिन से पांचवें तक - श्री वेंकटेश्वर स्वामी का वैभवपूर्ण प्लवोत्सव।

पांच दिनों का प्लवोत्सव यही है।

२०६. होली पूर्णिमा

फागुन पूर्णिमा को यह उत्सव मनाते हैं। पूर्णिमा की व्याप्ति प्रदोष तक होनी चाहिए। दोनों दिनों में इस पूर्णिमा तिथि की व्याप्ति हो, तो दूसरा दिन उत्तम है। पहले दिन में भद्रदोष होता है।

२०७. चन्द्रग्रहण

शुक्लपक्ष का जो अंतिम दिन पूर्णिमा है तथा कृष्णपक्ष का जो प्रथम दिन है, इस की प्रतिपदा के सन्धिकाल में चन्द्रग्रहण होता है। 'पर्वप्रतिपत्संध्युपजीवनेन प्रवृत्तत्वा दृग्रहणस्या' श्री विद्यारण्य माधवाचार्य महाशय का कथन है।

यह राहुग्रस्त भी होता है अथवा केतुग्रस्त भी।

'चन्द्रग्रहे तु यामां स्त्रीन् बाल वृद्धातुरैर्विना' – धर्मशास्त्र की विधि के अनुसार मानव को ग्रहण के पहले (तीन घंटों के पहले से) भोजन नहीं करना चाहिए। यदि करें, तो प्रायश्चित्त भी करना चाहिए। बालकों, वृद्धजनों तथा रोगियों के लिए यह अपवाद है। इनके भोजन करने के विषय में सांप्रदायिकों में मतभेद हैं।

चन्द्रग्रहण – ग्रस्त (ग्रहण)के आदि और अंतिम काल में भोजन नहीं करना है । दूसरे दिन चन्द्र-बिम्ब के दर्शन करके भोजन करना चाहिए। ग्रहण-समय दिन में भोजन वर्जित है। ग्रहण के पुण्यकाल में स्नान दान जप आदि धर्मानुष्ठान करना है।

२०८. सूर्यग्रहण

कृष्णपक्ष के अंतिम दिन जो अमावास्या का दिन है तथा शुक्ल पक्ष के पहले दिन की प्रतिपदा के सन्धिकाल में यह ग्रहण होता है। पूर्णिमा का अंतिम भाग स्पर्श-काल तथा प्रतिपदा का प्रारंभ काल तीन प्रकार के कालों में जो अंतिम भाग का काल है, वह ग्रहण का मोक्ष काल माना जाता है। सूर्यग्रहण भी राहुग्रस्त और केतुग्रस्त दोनों होते हैं।

धर्मशास्त्र - वचन इस प्रकार है। सूर्यग्रहे तु नाश्नियात्पूर्वं यामचतुष्ट्यम' सूर्यग्रहण के पहले मानव को चार यामों में भोजन निषेधित है। यदि भोजन करता है, तो प्रायश्चित्त अत्यंतावश्यक है।'

बाल और वृद्धों के विषय में यह नियम अपवाद है।

त्रिमुहूर्तवादियों का मत– ग्रहण सायं को हो, तो दुपहर भोजन करना वर्जित है। दुपहर में ग्रहण हो, तो संगम काल में नहीं करना चाहिए। संगम (सन्ध्या) काल में ग्रहण हो, तो प्रातःकाल को भोजन वर्जित है। त्रिमुहूर्तों का वर्जन इसी प्रकार का है।

सूर्यग्रहण – सूर्यास्त के समय ग्रहण हो, तो मानव को दिन-रात दोनों वक्त भोजन न करना चाहिए। दूसरे दिन सूर्य बिम्ब के दर्शन करके ही भोजन करना चाहिए। उदय के समय ग्रहण हो, तो पहले दिन की रात में भोजन नहीं करना चाहिए। ग्रहण काल में स्नान दान जप आदि कर सकते हैं। दोनों ग्रहणों में स्पर्शकाल से लेकर मुक्ति के अंत तक के काल को 'ग्रहण' कहते हैं।

पुण्यकाल का समय – संक्रमण का समय संक्रमण के पहले तथा अनन्तर काल संक्रमण का पुण्यकाल माना जाता है। परंतु ग्रहण के समय पुण्यकाल नहीं होता। इस संबंध में ब्रह्मसिद्धान्त - वचन इस प्रकार है –

यावान् कालः पर्वणोऽन्ते तावान् प्रतिपदादिमः।
रवीन्दुग्रहणाऽनेहाः सपुण्यो मिश्रणाद्भवेत्॥

पर्वकाल का अंतिम भाग स्पर्शकाल है; प्रतिपदाओं का प्रथम भाग मोक्षकाल है। स्पर्शकाल की अवधि जितनी होती है, उतनी ही अवधि-मोक्षकाल की होती है। स्पर्शकाल से त्याग के अंतिम समय तक के काल को पुण्य काल मानना है।

ऐसे ग्रहण के पुण्यकाल में प्रारंभ में स्नान, मध्यकाल में जप-ध्यान, होम, देवतार्चन तथा मुक्तिकाल में दान, श्राद्ध-कर्म एवं छोडने के अंतिम

काल में सचेल स्नान करने विविध सम्मत है। ग्रहण के आदिकाल में विहित कर्मों का फल लाखों गुना अधिक है; मध्यकाल के विहित कर्मों का फल करोडों गुण अधिक है; ग्रहण के मुक्तिकाल में किए गए विहित कर्मों का फल अनन्त है। पुराणों का कथन यही है। शास्त्र अशौच के बारे में कहते हैं –

अशौचं जायते नृणां ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
राहुस्पर्शे ततस्नात्वा दानादौ कल्पते नरः ॥

चन्द्र और सूर्यग्रहण का समय मानव अशौच होता है। अतः स्नानादि कृत्यों से शौचरहित होकर दान करने योग्य होते हैं।

ग्रहण काल में जो श्राद्ध कर्म किया जाता है, उसे हिरण्यश्राद्ध कहते है। यथा –

अन्नाभावे द्विजाभावे प्रवासे पुत्रजन्मनि।
हेमश्राद्धं प्रकुर्वीत चन्द्रसूर्यग्रहे तथा ॥

जब अन्न और ब्राह्मण नहीं मिलता और जब अन्य देश में रहते तथा जब पुत्रजन्म होता है, तब दोनों ग्रहणों में हिरण्यश्राद्ध अपेक्षित है।

ग्रहण काल में भोजन और सोना वर्जित है। ग्रहण के पूर्व पका हुआ अन्न सूतकान्न होता है; ग्रहणान्तर उसे नहीं खाना चाहिए। गरम पानी से स्नान नहीं करना है। यदि दिन के समय चन्द्रग्रहण तथा रात के समय सूर्यग्रहण हो, तो ग्रहण विहित कार्य नहीं करना है।

चन्द्र और सूर्य ग्रहण का समय आकाश मेघावृत्त होने से नहीं दीखते हैं, तो शास्त्रों के समय के अनुसार करना चाहिए।

ग्रहण समय चाक्षुष दर्शन

इन दोनों ग्रहणों में चाक्षुष दर्शन पुण्यकाल माना जाता है। चक्षु दर्शन होते ही स्नान आदि विहित कर्म कर सकते हैं। तब ग्रहण समय

आकाश बादलों के कारण नहीं देखा जा सकता है, तब शास्त्रों के कहे समय पर स्नान जप आदि कर सकते हैं।

सूर्यग्रहण– दोनों ग्रहणों में एक क्षण का भी व्यतीपात योग हो, तो उसे 'गजच्छाया' पुण्यकाल नाम से व्यवहृत होता है। इस 'गजच्छाया' में पितृतर्पण से पितृदेवता बहुत परितृप्त होते हैं।

व्यास महर्षि का मत – चूडामणि-योग – सोमवार को चन्द्रग्रहण तथा इतवार को सूर्यग्रहण हो, तो वह 'चूडामणि-योग' कहलाता है। इस चूडामणि योग में ग्रहण में जो विहित कर्म किये जाते हैं, उनका फल करोड गुना अधिक होता है। भगवान व्यास का यह कथन है।

आगम-शास्त्रों के अनुसार देव मंदिरों में इन ग्रहणों को दुर्निमित्त मानकर शान्ति अवश्य करनी चाहिए।

अद्भुतों का सृजन

मानवों के पाप-बाहुल्य से और उनके अनेकानेक अपराधों के कारण देवता-गण अद्भुत का सृजन करते हैं। अद्भुत तीन प्रकार के होते हैं – १. दिव्याद्भुत २. अंतरिक्षाद्भुत और ३. भौमाद्भुत।

संपूर्ण चन्द्रग्रहण, संपूर्ण सूर्यग्रहण, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मितवृष्टि – ये दिव्याद्भुत हैं।

सूर्य चन्द्र नक्षत्र अंतरिक्ष के अद्भुत माने जाते हैं। इन दोनों प्रकारों के अद्भुतों के लिए कोई चिकित्सा तो नहीं है; पर शान्ति विधि-पूर्वक करनी है।

अद्भुत शान्ति

देवमंदिरों के अभिमुख में यज्ञ-शाला में नव होम कुण्डों का निर्माण करके कुम्भ संस्कार करना चाहिए। नवग्रहहोम, बिल्व-पत्र सहस्रहोम, अष्टाक्षरी, सहस्रहोम आदि शान्ति होमों का एक सप्ताह तक करना है।

दुश्शकुनों के अनुसार शान्ति और शीत-कुम्भ आदि करना शास्त्र-विहित है। संपूर्ण सूर्य ग्रहण, संपूर्ण चन्द्रग्रहण, अल्पग्रहण, अर्धग्रहण, पादग्रहण, त्रिपाद ग्रहण तथा ग्रहणों के दोषयुक्त पहरों में देवालयों के कवाटों का बंद करना चाहिए। ग्रहणान्तरन मंदिर को साफ करके श्री स्वामीजी का पंचामृताभिषेक करना चाहिए।

सब देवमंदिरों में यही विधि उस मंदिर के संप्रदाय के अनुसार चलती है। यह शास्त्र विहित आचार है।

२०९. श्रीलक्ष्मी जयन्ती

फागुन मास के उत्तर फागुनी नक्षत्र में लोककल्याण के लिए श्रीलक्ष्मीदेवी का आविर्भाव हुआ है। अतः इस नक्षत्र में मुक्ति के अभिलाषक तथा राज्यश्री के औत्साहिक श्रीलक्ष्मीजयन्ती की चतुर्विध समाराधना करते हैं। इसीको उत्तर फागुनी-पूजा भी कहते हैं।

समाराधना चार प्रकार की है, जो जप, हुतं, अर्चना व ध्यानम् है। पुराणों तथा संहिताओं के अनुसार श्रीदेवी माता का ध्येय स्वरूप इन दिव्य नामों में अंकित है, जो – पद्मालया, पद्मासना, पद्मानना, पद्मनयना, पद्मप्रिया, पद्महस्ता, पद्मपादा, पद्मवाणी, पद्ममालाधरा, पद्मप्रभा, पद्मगंधिनी, पद्मिनी, पद्मसुंदरी, सुकेशी, सुभ्रूलता, सुदन्तोष्टी, सुवर्ण कुम्भस्तनी, सुप्रभाभासमाना, सुवर्णप्राकारा, सर्वाभरणभूषिता, शुक्लाम्बरधरा हैं' – श्रीविद्या के उपासक नियमानुष्ठान से श्री के ध्येय स्वरूप को लक्ष्य मानकर चतुर्विध समाराधना करनी है। चारों प्रकार की अर्चना इस प्रकार है–

१. **जप** – श्रीसूक्त, एकाक्षर, चतुरक्षरादि महामन्त्रों का अपनी शक्ति के अनुसार लाख संख्या का जप कर सकते हैं।

२. हुतं – श्रीसूक्त, एकाक्षरी, चतुराक्षरी महामन्त्रों का उच्चारण करते हुए कमल पुष्पों और बिल्व फलों को पौण्डरीकाग्नि में हुतं करना है।

३. अर्चना – ध्येय स्वरूप से प्रकाशित प्रतिमा रूपा श्रीदेवी की अर्चना श्रीसूक्त, एकाक्षरी तथा चतुराक्षरादि मन्त्रों से कमल फूल और बिल्वफलों से लाख संख्या युक्त करनी चाहिए।

४. ध्यान – ध्येय स्वरूप के ध्यान में एकाग्र चित्त होना चाहिए। अन्य विषयों का परित्याग करके ध्येय स्वरूप में ही दृढ़ स्मृति प्रवाह को 'तदेकतानता' कहते हैं।

इस प्रकार चतुर्विध समाराधना करने से श्रीदेवी करुणार्द्र होकर ब्रह्मश्री अभिलाषकों की सर्वक्रतु सिद्धि, आणिमादि और ऐश्वर्य सिद्धि, धन धान्य, राज्यादि संपदाओं को जगन्माता अनुग्रह करेगी। अधिक विशेषताएँ संहिता से जान सकते हैं।

२१०. मीन संक्रमण

सूर्य भगवान मेषादि द्वादश राशियों में द्वादशवीं मीनराशि में प्रवेश करता है। इस प्रवेश के पहले जो १६ घटिकाओं का समय (६ घंटे २४ मिनिट) है, उसे षडशीति पुण्यकाल कहते हैं। इस पुण्यकाल में स्नान जप ध्यान आदि धर्म कार्य कर सकते हैं। इसे मीन मास भी कहते हैं।

२११. महानदी के पुष्कर

नदियों के पुष्करों का विवरण

गुरुग्रह के मेष राशि में प्रवेश के समय – गंगा नदी का पुष्कर।
गुरु के वृषभ में प्रवेश के समय – नर्मदा नदी का पुष्कर।
गुरु के मिथनुराशि में प्रवेश के समय – सरस्वती नदी का पुष्कर।
गुरु के कटकराशि में प्रवेश करते समय – यमुना नदी का पुष्कर।
गुरु के सिंहराशि में प्रवेश करते समय – गोदावरी नदी का पुष्कर।
गुरु के कन्याराशि में प्रवेश करते समय – कृष्णानदी का पुष्कर।
गुरु के तुलाराशि में प्रवेश करते समय – कावेरी नदी का पुष्कर।

गुरु के वृश्चिकराशि में प्रवेश करते समय – भीमरथी नदी का पुष्कर।
गुरु के धनूराशि में प्रवेश करते समय – वाहनी महानदी का पुष्कर।
गुरु के मकरराशि में प्रवेश करते समय – तुंगभद्रा नदी का पुष्कर।
गुरु के कुम्भराशि में प्रवेश करते समय – सिन्धु नदी का पुष्कर।
गुरु के मीनराशि में प्रवेश करते समय – प्रणीता नदी का पुष्कर।

इस प्रकार १२ राशियों में गुरु-ग्रह के संचार से नदी पुष्कर होते हैं।

२१२. तिरुपति श्री कोदण्डराम स्वामी का ब्रह्मोत्सव

वैखानसागम शास्त्र के अनुसार ब्रह्मोत्सव नवाह्निक (नौदिन) होते हैं।

मीन मास में मृगशीर्ष नक्षत्र में श्रीस्वामीजी का अवभृथ स्नान निश्चित होता है। उस दिन के पहले आठ दिनों तक वाहनोत्सव होते हैं। प्रारंभिक रूप में अंकुरार्पण होता है। वाहनोत्सव वैभव से होता है।

ब्रह्मोत्सव का विवरण

	दिवा समय	रात समय
पहला दिन		सेनाधिपति उत्सव और अंकुरार्पण
दूसरा दिन	पालकी उत्सव ध्वजारोहण	बृहत् शेष वाहन (जुलूस)
तीसरा दिन	लघु शेषवाहन	हंस वाहन
चौथा दिन	सिंह वाहन	मोतियों की शामियाना का वाहन
पाँचवाँ दिन	कल्पवृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
छटा दिन	मोहिनी अवतार में पालकी में जुलूस	गरुड वाहन

सातवें दिन	हनुमद्वाहन *सायं:* वसंतोत्सव	गज वाहन
आठवें दिन	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्राभवाहन
नवें दिन	रथ-यात्रा	अश्व वाहन
दसवाँ दिन	पालकी उत्सव	ध्वजावरोहणोत्सव अवभृथोत्सव चक्रस्नान

२१३. तुम्बुरु तीर्थ मुक्कोटि

मीनमास में उत्तर फागुनी नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दुपहर को त्रैलोक्य विश्रुत तीन करोड और पचास लाख तीर्थ इस तुम्बुरु तीर्थ में संगम होती हैं। अतः इसे तीर्थ-मुक्कोटि कहते हैं। पुण्याभिलाषी तीर्थ-स्नान दान आदि करके अपना जन्म धन्य मानते हैं। स्नानान्तर श्री बालाजी के तीर्थ प्रसाद से संतुष्ट होते हैं।

२१४. श्री गोविन्दराज स्वामीजी का उत्तरफागुनी उत्सव

फाल्गुने मासि पूर्णायां उत्तरनक्षत्रेन्दुवासरे।
गोविन्दराजो भगवान् प्रादुरासी न्महामुने ॥

श्री गोविन्दराज स्वामीजी का अवतरण मीन मास में उत्तर फागुनी नक्षत्र सोमवार को हुआ था। इस दिन प्रातःकालाराधना के उपरान्त (तिरुच्चि) चौकोर में अधिष्ठित होकर माता पुण्डरीकवल्ली (श्री शालनाच्चियार) के सन्निधान में जायेंगे। वहाँ दोनों का अभिषेक आस्थान और भोग होने के बाद पुनः श्रीस्वामी मंदिर में पधारेंगे।

२१५. श्री पुण्डरीकवल्ली की जन्म-नक्षत्र (श्री शाल नाच्चियार)

फाल्गुने चोत्तर फल्गुन्यां संभूतां श्रीयमाश्रये।
विष्णो र्दिव्य पदाम्भोज घटकां तथाश्रिताम ॥

श्री वेंकटेश्वर स्वामी का वसन्तोत्सव

पूर्वाह्ने देवंदेवी समायुतम् ।
हरिद्राचूर्णसंस्नाप्य वसंतोत्सवमाचरेत् ।।

इस माताजी का अवतरण मीन मास के उत्तर-फागुनी नक्षत्र में हुआ था। अतः इस नक्षत्र में वर्ष-तिथि मनाते हैं। इस तिथि के पहले छः दिनों में भी इनका उत्सव प्रतिदिन मनाया जाता है।

विशेषता यह है कि स्वामीजी तथा माताजी दोनों का जन्म-नक्षक्ष उत्तर फागुनी है। अतः इस उत्सव के उपलक्ष्य में श्री गोविन्दराज स्वामी माताजी के मंदिर में पधारेंगे। वहाँ दोनों पुराण दम्पति का अभिषेक, अलंकार, भोग, उत्सव, मंगलाशासन और आस्थान अत्यंत वैभव से होते हैं। तदनन्तर श्री स्वामीजी मंदिर में पधारेंगे। फागुन मास के उत्तर-फागुनी नक्षत्र में दोनों का आविर्भाव होना विशेष अवतरण मानते हैं।

२१६. नागुलापुरम् श्री वेदनारायण स्वामी के मंदिर में सूर्यसेवा महोत्सव तथा प्लवोत्सव

फागुन मास में द्वादशी, त्रयोदशी और चतुर्दशी के सायंकाल पाँच बजे सहस्रकर सूर्य श्री वेदनारायन स्वामी की सेवा अपनी किरणों से करेंगे। सूर्य-पूजा के उपरान्त श्रीस्वामीजी पद्माकर सरोवर में प्लवोत्सव के लिए निकलते हैं। प्लवोत्सव तीन दिनों तक मनाया जाता है।

सूर्य सेवा का विवरण

अखिल जगत्प्रभु वेदान्तवेद्य श्रीमन्नारायण अपने भक्तों के उद्धार के लिए नित्य विभूति श्री वैकुण्ठ छोडकर लीला-विभूति रूपा (शेषपुरु) नागुलापुरम् में वेदनारायण के रूप में अवतरित हुए हैं।

ऐतिहासिज्ञ भी इस विषय को जानते हैं।

'भीषौदेति सूर्यः' – इस श्रुतिवचनानुसार विश्व प्रभु से सूर्य का नियमन ब्रह्माण्ड को प्रकाश देने के लिए हुआ है। नियन्ता की आज्ञा का पालन करने प्रतिदिन उदित होकर ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करता है।

लोक-प्रकाशन के लिए जिस नियन्ता से सूर्य का नियमन हुआ है, उस वेदनारायम प्रभु का अपनी किरण सहस्रों से सूर्य देवता संवत्सरान्त में तीन दिन सेवन करता है। प्रतिदिन स्वामी के आलय के नौ द्वारों को पारकर सायंकाल पांच बजे के बाद गर्भालय में प्रवेश करता है।

प्रथम दिन अपनी सहस्र किरणों से श्रीस्वामी के पादारविन्दों का स्पर्श करता है। द्वितीय दिन श्री स्वामी की नाभि का सेवन करता है। तृतीय दिन श्रीस्वामीजी के मुखारविन्द के सौंदर्य को दीप्तिमान करके, अपने नियत कार्य जो लोक-प्रकाशन है, इसके लिए जाता है। जगदभिवंदित सूर्यदेव के श्रीस्वामीजी की सेवा करने के दिव्य-दृश्य को देखने के लिए तीनों दिन मंदिर में लाखों भक्त जन-वाहिनी की भाँति नाना प्रदेशों से आती है। अपने दर्शनाभिलाषी भक्तों को व्यवधान रहित दर्शन देने के लिए आलय के पुरोभाग में स्थित पुष्करिणी में अपनी उभय देवेरियों सहित जल विहार करते हैं।

संसार सागर समुत्तरणैक सेतु रूपा जगत्प्रभु अपने निज सरोवर ऐरम्मद छोडकर भक्तों पर वात्सल्य से लीला विभूत्यात्मक नागुलापुर की पुष्करिणी में जलविहार करना भक्तों का जन्मार्जित पुण्यफल ही समझना चाहिए।

सूर्यदेवता श्री स्वामीजी की सेवा करने का दृश्य नेत्रपर्व है, जिसे देखने के लिए भक्तजन अपने परिवारों सहित आते हैं और जलविहार के रमणीय दृश्य से तन्मय होते हैं; इस प्रकार दोनों प्रकार के दर्शनों से भक्त श्रीस्वामीजी के अनुग्रह के पात्र होते हैं।

२१७. तिरुपति श्रीकोदण्डराम स्वामी का फूलोत्सव (पूलंगि सेवा)

प्रतिमास अमावास्या की प्रतिपदा में इसमें विराजमान श्री सीता राम और लक्ष्मण तीनों का फूलोत्सव मनाते हैं, जो शोभायमान होता है।

२१८. तिरुपति श्री गोविन्दराज स्वामीजी का फूलोत्सव

फागुन मास की पूर्णिमा में शयन-मूर्ति श्री गोविन्दराज स्वामीजी का फूलोत्सव अत्यन्त वैभव से होता है।

२१९. श्री कृष्णजी का रोहिणी नक्षत्र का आस्थान

तिरुमल के दिव्य मंदिर में श्रीकृष्णजी रुक्मिणीजी सहित विराजमान हैं। प्रति रोहिणी नक्षत्र के सायंकाल श्रीकृष्णजी देवेरी सहित मंदिर के चारों वीथियों में जुलूस निकलते हैं। बाद को मंदिर के स्वर्ण-कवाट के आगे के आस्थान मण्डप में आस्थान होता है।

२२०. श्री स्वामीजी का आर्द्रा नक्षत्रास्थान

तिरुमल में प्रति आद्रा नक्षत्र के सायं समय श्री मलयप्पस्वामी (सवारी मूर्ति) उभय देवेरियों सहित और आर्द्रा नक्षत्र संभूत श्री भाष्यकारजी सहित मंदिर के चतुर्वीथियों में शोभा-यात्रा में निकलते हैं। यात्रानन्तर श्री भाष्यकारजी के मण्डप में आस्थान होता है।

२२१. श्री रामस्वामीजी का पुनर्वसु नक्षत्रास्थान

तिरुमल के दिव्य मंदिर में स्थित श्रीरामचन्द्रजी का नक्षत्रास्थान प्रति पुनर्वसु नक्षत्र के सायंकाल के होता है। उस समय मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र सीताजी लक्ष्मणजी तथा प्रिय भक्त हनुमानजी के साथ मंदिर के चतुर्वीथियों (चारों गलियों) में शोभायात्रा में निकलते हैं। तदुपरान्त मंदिर के स्वर्ण-कवाट के पुरोभाग के आस्थान मण्डप में आस्थान होता है।

२२२. श्री स्वामीजी का श्रवण नक्षत्रास्थान

हरेक श्रवण नक्षत्र के सायंकाल श्री बालाजी श्री भूदेवी व श्रीदेवी सहित (मलयप्पस्वामी) सोने से मढ़े हुए चकौरे में अधिष्ठित हो मंदिर के

चतुर्वीथियों में जुलूस में निकलते हैं। तदुपरान्त स्वर्ण कवाट के पुरोभाग में अत्यन्त वैभव से आस्थान मनाया जाता है।

२२३. तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी का प्लवोत्सव

यह प्लवोत्सव प्रति मंगलवार को होता है।

हरेक मंगलवार मनाया जानेवाला यह प्लवोत्सव अभी कुछ सालों से ही चालू है। प्रतिवर्ष पांचाह्निक रूप में प्लवोत्सव प्रत्येक तौर से हाता है। मंगलवार के प्लवोत्सव का विवरण –

मंगलवार के सायं को श्री मलयप्प जी अपने देवेरियों के साथ (झूले का उत्सव) डोलारोहण उत्सव के बाद श्रीस्वामी पुष्करिणी का प्लवोत्सव होता है। यह दृश्य ऐसा लगता है कि मानों श्रीबालाजी के डोला विहार जनित श्रम को दूर करने के लिए जलविहार करते हैं। पुष्करिणी का प्लव जो विद्युत की नानावर्णों की दीपों की काँति से अत्यन्त मनोहर जगमगाता है, उस पर देवेरियों सहित स्वामी अधिष्ठित होंगे।

वायुदेव से संबंधित वेदशासन इस प्रकार है –

'भीषाऽस्माद्वातः' – इसका अर्थ है कि वायु श्रीस्वामी की सेवा भयकंपित हो करता है; मंदमारुत ही चामर जैसे स्वामी को शीतलता पहुँचाता है; श्री बालाजी की स्तुति वेदों द्वारा होती है। मधुर वादूयों को बजाते हैं, जो अत्यन्त श्रवणपेय है। इस दिव्य दीप्तिमान वातावरण में श्री स्वामी देवेरियों सहित तीन बार पुष्करिणी में जल विहार करेंगे। ऐसा लगता है कि मानों तीन बार शान्ति पाठ का पठन होता हो।

इस मनोहर जलविहार के उपरान्त अर्चक महाशय जलविहार से संतुष्ट श्री बालाजी तथा देवेरियों का यथोचित उपचार करते हैं; उन्हें मधुर पक्वान्न समर्पित करते हैं। आरती दी जाती है।

यह प्लवोत्सव अर्जित सेवा है। अतः गृहस्थ को (जो यह उत्सव कराता है, वह) शठारि, प्रसाद (नैवेद्य) वस्त्रबहूकरण के साथ स्वामीजी की लघु सुवर्ण प्रतिमा भी दी जाती है। गृहस्थ भक्त अपना जन्म कृतार्थ हुआ समझता है।

जो भक्त श्री वेंकटेश्वर और श्री लक्ष्मीदेवी की सुवर्ण-प्रतिमा की पूजा के अभिलाषी होते हैं, उनके लिए यह प्लवोत्सव सेवा अत्यन्त फल-दायक है। इस कार्य-कलाप के अनन्तर श्री स्वामी अपनी देवेरियों के साथ स्वर्ण से मढ़े हुए चकौरे पर अधिष्ठित हो समस्त राज-वैभवों से मंदिर में पहुँचते हैं।

साधारण भक्त इस उत्सव से अपूर्व दर्शन और अमितानंद पाते हैं।

२२४. श्री बालाजी का पुष्पोत्सव

यह पुष्पोत्सव प्रति गुरुवार को होता है। श्री स्वामीजी का पुष्पालंकार गुरुवार की सायंकालीन आराधना के समय मनोहर पुष्पों से अत्यन्त मनोज्ञ होता है। इस समय श्री स्वामी अपने वामहस्त में जगदेक नियन्ता सूचक सूर्यकठारि को धरते हैं। समस्त भुवनों के सम्राट का यह वैभवपूर्ण दृश्य है। इस दर्शन के लिए भक्तजन ललायत होते हैं और दर्शन के बाद आनन्द सागर में गोते लगाते रहते हैं।

२२५. श्री बालाजी का अभिषेक महोत्सव

हर शुक्रवार को यह उत्सव होता है।

प्रातःकालीन आराधना के उपरान्त श्री लक्ष्मीवेंकटेश का दिव्य स्वरूप नयनानन्दप्रदायक है। पुराण दम्पति का यह दर्शन जन्मान्तर, अर्जित पुण्य का फल मानना चाहिए। इस दिव्य दर्शन में स्वामी का निजरूप दर्शन करके भक्त अपनी ऐहिक वृत्तियाँ भूल जाता है। इस दर्शन का प्रभाव निज भक्त पर इतना पडता है कि उसके वर्णन करने में वाणी मूक हो जाती है।

२२६. श्रीबालाजी का प्रभुत्वोत्सव

यह प्रतिदिन होता है। इसे लोक भाषा में 'कोलुवु' कहते हैं। प्रतिदिन प्रातःकाल की आराधना के समय श्री स्वामीजी छत्र चामरादि राज-वैभव से समस्त परिवार से आस्थान मण्डप में सज्जित सिंहासन पर आसीन होते हैं। प्रपन्न भक्त भी इस दृश्य से तन्मय होते हैं। प्रप्रथम स्वामीजी मात्रा-दान करते हैं (चावल को कौतुक मूर्ति के हाथ से छुवाकर पुजारी को चावल का दान देना मात्रादान है) तदनन्तर चतुर्वेद, पुराणेतिहास, पंचांग, पिछले दिन का आय-व्यय इनको सुनाते हैं। इस प्रकार प्रतिदिन प्रातःकाल बालाजी अपनी विश्व-विभुता तथा अन्तर्यामित्व प्रकट करते हैं। इस कोलुवु के बाद स्वामीजी मंदिर में पधारते हैं। यह दैनिक कार्यक्रम है।

२२७. श्री बालाजी का कल्याणोत्सव

प्रतिदिन श्री स्वामीजी का कल्याणोत्सव होता है, जो अर्जित है। श्री स्वामीजी की माध्याह्निक आराधना के उपरान्त स्वामी देवेरियों के साथ सोने के चौकोर में अधिष्ठित होकर राज-वैभव से और मंगलवाद्यों के साथ रंगमण्डप में पधारते हैं।

यहां स्वामी लोक-कल्याण के लिए दिव्य मंगल मूर्ति के रूप में अपने भक्तों पर अनुग्रह करते हैं। कल्याणोत्सव के लिए दम्पति भक्त अपने पूर्व-पुण्य से उत्सव में भाग लेते हैं। इस उत्सव के गृहस्थों को (जो कल्याण कराते हों) स्वामीजी का प्रसाद और दम्पति को वस्त्र भी दिये जाते हैं।

२२८. दर्पण-भवन में श्रीस्वामीजी का डोलोत्सव

दर्पण-महल में (आइने महल) रोज डोलोत्सव होता है, जो अर्जित है। इतःपूर्व ब्रह्मोत्सव के कुछ संदर्भों में डोलोत्सव मनाया जाता था। परंतु भक्तों की अत्यन्त अभिलाषा के अनुसार रोज मनाते हैं। यह नया प्रबंध है।

प्रतिदिन सायंकाल श्री मलयप्प स्वामी अपनी देवेरियों के साथ सोने (स्वर्ण खचित) के ह्चौरे में अधिष्ठित होकर रंगमण्डप से डोलाविहार करने दर्पण भवन में पधारते हैं। इस दर्पण महत्त्व को डोलोत्सव में गंभीर अर्थ है।

जब स्वामी सहस्र विद्युत् दीपों से देदीप्य डोले पर अधिष्ठित होते हैं, तब वह सोने का झूला झूलने लगता है। मंदगति से झूलने पर भी श्रीस्वामी की दिव्य मूर्ति सहस्रों रूपों में साक्षात्कारित होती है। इस दिव्य दर्शन से भक्त विभ्रान्त हो, सर्वत्र उसी दिव्य मूर्ति के दर्शन करके तन्मय हो जाते हैं। जहाँ देखो, वहाँ ईश्वर ही दीखता है। यही इस डोलोत्सव का अन्तरार्थ है।

वेदपठन, दिव्य प्रबंध का गान, मंगल वाद्यों के बीच श्री लक्ष्मीसमेत स्वामी का डोलोत्सव पूरा होता है। भक्तों के हृदय, कान आर नेत्र इस दिव्य वातावरण में तल्लीन हो जाते हैं। इस उत्सव के बाद स्वामी और देवेरियाँ मंदिर में पधारते हैं। इस उत्सव में भाग लेनेवाले भक्तों को प्रसाद और वस्त्र दिए जाते हैं।

२२९. श्री वेंकटेश्वर की एकान्त-सेवा

यह उत्सव भी प्रति रात होता है।

प्रतिदिन सायंकाल की आराधना के उपरान्त श्री भोग श्रीनिवास विविध ग्धुर फल और ताम्बूल को स्वीकार करके मुख भवन (जो गर्भालय के सामने है) में सन्नद्ध स्वर्ण चारपाई पर सज्जित मृदुल शय्या पर लेटते हैं। इस समय का जो भोग है, वह सुगंधित दूध और फल होते हैं, जिनका सुगन्ध उस कमरे से बाहर तक परिव्याप्त होता है। इस दिव्य वातावरण से भक्त का मन श्रेयोमार्ग की ओर प्रयाण करता है। दिन भर के श्रम से निवृत्त

हो स्वामीजी एकान्त में शयन करते हैं; उस समय अपने भक्तों को क्षणिक दर्शन देते हैं।

२३०. शरण्य दम्पति श्री लक्ष्मी वेंकटेश्वर, जो दिव्य दम्पति हैं उनकी नाम-मन्त्र पूजा

यह पूजा त्रिकालों में प्रतिदिन होती है।

इस पूजा विधि की प्रस्तावना ब्रह्माण्ड पुराण में इस प्रकार है –

'सर्वब्रह्माण्ड नियन्ता सर्व-जगद्रक्षक श्री श्रीनिवास की पूजा सुरज्येष्ठ ब्रह्मदेव ने अमित श्रद्धा-भक्ति से सहस्रनामों तथा कमल पुष्पों से की थी।'

अतः ब्रह्माण्ड पुराणोक्त उन दिव्य सहस्रनामों से प्रणव संपुटीकरण एवं पुष्पों से प्रति प्रातःकाल को स्वामी की पूजा की जाती है।

इस सिलसिले में वराह पुराण का कथन इस प्रकार है – 'अपार कृपासागर श्री वेंकटेश्वर की लोक-पितामह ब्रह्माजी ने स्वर्गंगा संभूत सुवर्ण पद्मों पर श्री स्वामी के पदचिह्न जो अंकित थे, उन पद्मों से अष्टोत्तर शतनामों से पूजा की थी।'

वराहपुराणोक्त जो श्रीवेंकटेश पदांकित स्वर्ण पाद हैं, वे अष्टोत्तरशत दिव्य नाम हैं। इन्हींकी प्रणव संपुटीकरण से श्री स्वामी की माध्याह्निक पूजा की जाती है।

इसी प्रकार सायंकाल की पूजा भी अष्टोत्तरशतनामों से जो दिव्य नाम-मन्त्र हैं, उनसे की जाती है।

'अशेष लोकशरण्य श्री वेंकटेश्वर तथा अशरण्य शरण्या (आश्रित न करनेवालों को भी शरण) देनेवाली श्रीदेवी दोनों की स्तुति इन्द्रादि देवगण कृतांजलिबद्ध होकर चौबीस नामों से करते हैं। गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर हैं; उसी संख्या के अनुरूप स्वामी के स्तुत्य नाम २४ हैं। (वराहपुराण)

वराहपुराणोक्त जिन प्रणव संपुटीकरण चौबीस दिव्य नामों से श्री स्वामी की पूजा की जाती है, स्वामी के पादारविन्दों को अर्पित उन्हीं पुष्पों से श्रीलक्ष्मी माताजी की भी त्रिकालों में पूजा होती है।

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम्।
श्री वेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम्॥

ॐ तत् सत्

चतुर्थ-भाग समाप्त

पंचम भाग

श्री स्वामीजी की अर्जित सेवाएँ

ॐ ।। मांगल्य सूत्र वस्त्रादि संरक्षति यथा वधूः ।
तथा प्रपन्न श्शास्त्रीय पतिकैंकर्य पद्धतिम् ।।

श्रियःपति जगत्प्रभु परमशेषि श्री वेंकटेश्वर शेषपर्वत पर अर्चावतार में विराजमान हैं। समस्त जीवों को यह जानना चाहिए कि जड-चेतन समस्त भूतजाल उस परमेश्वर के ही दास और शेषभूत हैं। जब चेतनात्मक जीव इस ज्ञान को पाता है, तब अपने (त्रिविध) तापों के हरण के लिए परमेश्वर का कैंकर्य (सेवा) अवश्य करना पडता है।

अनन्त (नाग) अपना तन-मन सर्वेश्वर के कैंकर्य में ही सदा रखता है। अतः वह 'शेषः' नाम से गौरवान्वित हो गया है।

आदिशेष की सेवा अबाधगति से हो रही है। इस कलियुग में परमेश्वर के संकल्प के अनुसार श्री स्वामी की सेवा करने के लिए शेषपर्वत के रूप में स्वामीजी की वेदिका का रूप धारण किया है। परमेश्वर की सेवा का प्रप्रथम आदर्श श्री शेष ही है। उसकी सेवा बहुरूपा है। वैष्णव धर्म का अग्रसर भक्त श्री यामुनाचार्य इस शेष की सेवा को धन्य मानकर इस प्रकार विवरण देते हैं –

"वैकुण्ठ में श्री स्वामी का निवास, स्वामी का शयन, स्वामी का सिरहाना, स्वामी का सिंहासन, स्वामी का छत्र और पादुकाएँ – इन सबके रूप में स्वामी को अपना तन-मन समर्पण करने से 'शेषः' नाम से अभिहित किया जाता है।"

इस प्रकार भगवान का शेषत्व सब जीवों को प्राप्त करना चाहिए।

महर्षि जैमिनी के कथनानुसार शेषत्व का सूत्रार्थ इस प्रकार है –

'शेषः परार्थत्वात्' – इस सूत्र का परार्थ है।

तात्पर्य है – दूसरों के लिए रहना' – इस महान् उद्देश्य का अनुष्ठान कैसे करें? प्रत्युत्तर यही है; 'ना किंचित् कुर्वत श्शेषत्वं' – यह सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार 'किंचितकार्' बिना वह शेषत्व प्राप्त नहीं होता। इस 'किंचितकुर्वत' का रूप ही अर्जित सेवा है। अतः श्री बालाजी की जो अर्जित सेवा की जाती है, उसे 'किंचितकुर्वत' का ही प्रत्यक्ष रूप मानना है। इस सेवा से बद्धजीव परम पुरुषार्थ को पा सकता है।

समस्त मानवों के उद्धार करने के लिए ही श्री बालाजी निज सदन वैकुण्ठ छोडकर शेषपर्वत पर विराजमान हैं। अतः भक्तों का कर्तव्य यही है कि वे अर्जित कैंकर्य समर्पण करके, निष्काम कैंकर्य भी समर्पण करने से शेषत्व को प्राप्त कर कृतार्थ होंगे।

कृतार्थ करनेवाले अर्जित कैंकर्यों का विवरण इस प्रकार है–

विशेष दर्शन

१. **सुप्रभात का समय:** श्री स्वामीजी के दिव्य मंदिर में प्रतिनित्य सुप्रभात की नित्य पूजा प्रारंभ करते हैं। सुप्रभात का गान वेदपण्डित करते हैं।

२. **तोमालसेंवा** : सुप्रभात के अनन्तर प्रतिनित्य होता है।

३. **अर्चना** : तोमाल सेवा के अनन्तर प्रतिनित्य होती है।

४. **एकान्त सेवा** : सर्वदर्शनानन्तर प्रति रात्रि होती है।

५. **निजपाद दर्शन** : प्रति शुक्रवार को अभिषेक के बाद स्वामीजी की मूल-मूर्ति के दिव्य पादों का दर्शन होता है।

विशेष सेवाएँ

१. **अभिषेक** : अपने वक्षःस्थल पर लक्ष्मीदेवी को धारण किये हुए श्री स्वामीजी (मूल-मूर्ति) का प्रति शुक्रवार को सुगंधित द्रव्यों से अभिषेक होता है। अर्जित सेवा में सुगन्ध द्रव्यों को भक्त छूते हैं; उनसे अभिषेक सम्पन्न होता है।

२. **वस्त्रालंकार सेवा** : प्रति शुक्रवार के अभिषेक के उपरान्त स्वामीजी का वस्त्रालंकार होता है।

३. **सहस्रकलशाभिषेक** : प्रति बुधवार की सुबह यह सेवा सहस्र स्वर्ण कलशों से मनायी जाती है।

४. **अन्नकूटोत्सव (तिरुप्पावड)**: यह भी प्रति गुरुवार की विशेष सेवा है। इस सेवा के रूप में मधुर भक्ष्यान्न का निवेदन करते हैं।

५. **कोयल आल्वार तिरुमंजन**: यह सेवा साल में चार बार होती है। १.युगादि २.आणिवर आस्थान ३. ब्रह्मोत्सव तथा ४. वैकुण्ठ एकादशी – इन चारों पर्व दिनों के पूर्व जो मंगलवार आता है, उस दिन सबेरे (७-११ घंटों तक) होती है। यह गर्भालय के संप्रोक्षण करने की सेवा है।

६. **वसंतोत्सव**: साल में एक बार चैत्र मास में तीन दिनों तक होता है।

७. **पवित्रोत्सव** : इस सेवा की अत्यन्त प्रधानता यह है कि श्री बालाजी की नित्य-पूजा विधि में अनजाने में जो दोष निकलते हैं, उनके परिहार के लिए यह सेवा मनायी जाती है। अतः पवित्र क़रने की क्रिया होने से पवित्रीकरण-सेवा है।

८. **पुष्प-याग** : ब्रह्मोत्सव के बाद नानाविध पुष्पों से श्रवण-नक्षत्र में यह सेवा की जाती है।

९. **प्लवोत्सव** : यह पाँच दिनों का उत्सव है। प्रतिवर्ष फरवरी, मार्च और अप्रैल में होता है। (श्री स्वामि पुष्करिणी में स्वामी अपनी देवेरियों सहित नौका पर विराजमान होकर जल-विहार करते हैं।)

१०. **अभिधेयक अभिषेक** : ज्येष्ठ मास में तीन दिन तक यह होता है।

११. **श्री पद्मावती परिणय** : वैशाख मास के शुक्ल नवमी, दशमी तथा एकादशी में होनेवाला त्रिदिवसीय का कल्याणोत्सव है।

१२. **पुष्पपल्लकी** : प्रति वर्ष जुलाई में जो आणिवर आस्थान होता है, उस सायंकाल श्री बालाजी का देवेरियों सहित पुष्पों से सुसज्जित पालकी पर अधिष्ठित करके वैभवोपेत ढ़ंग से जुलूस निकालना इसकी विशेषता है।

१३. **कल्याणोत्सव**: प्रतिदिन श्री स्वामीजी तथा देवेरियों का वैभव से कल्याणोत्सव मनाया जाता है। मात्र इन दिनों –ब्रह्मोत्सव, पवित्रोत्सव, ग्रहणों के समयों को छोडकर, प्रतिनित्य यह उत्सव होता है।

१४. **ब्रह्मोत्सव** : श्री बालाजी की उत्सव मूर्ति श्री मलयप्प स्वामी की पूजा करने के बाद तीन वाहनों में, जो भूत-शेष, गरुड तथा हनुमन्त वाहन हैं, उन पर जुलूस निकलते हैं। यह संक्षिप्त ब्रह्मोत्सव है, जो भक्तों को भाग लेने (अर्जित) के लिए होता है। कल्याणोत्सव के उपरान्त यह मनाते हैं। श्रीनिवास की वाहन-सेवाएँ (तीनों को) एक साथ भी करा सकते हैं अथवा अलग-अलग भी। इन्हें वाहन सेवाएँ कहते हैं।

१५. **डोलोत्सव (ऊंजल सेवा)** : श्री मलयप्प स्वामीजी को उभय देवेरियों सहित आईना-महल (दर्पण-भवन) के स्वर्ण झूले में बिठाकर झुलाते हैं। वेदमन्त्रों और मंगलवादनों के मध्य यह सेवा अत्यन्त मनोहर होती है।

१६. **सहसकलाशाभिषेक** : यह सबेरे होनेवाली सेवा है। भक्तजन ऐहिक एवं आमुष्मिक उन्नति के लिए यह सेवा कराते हैं।

* * *

यह ग्रन्थ पाँच अंशों (भागों में) में विभजित हुआ है।

इस 'वेंकटेश्वर वैभव' ग्रन्थ-पठन (फलितार्थ) से अखिल ब्रह्माण्ड कोटि नियन्ता अपारकरुणासागर तथा आश्रित कल्पवृक्ष श्रीनिवास प्रभु अपने भक्तों को सर्व पुरुषार्थ प्रदान करने के लिए शेषभूत शेषाचल पर विराजमान हैं।

मानव संसार रूपी जंगल में भटकनेवाले पथिक के समान है। उन्हें सच्चे मार्ग पर लाने के लिए अपने पास बुलवाते हैं। श्री स्वामीजी से कामितार्थ पाने के लिए भक्त अपने परविार सहित दिव्य-यात्रा करते हुए तिरुमल पर पहुँचते हैं।

वहाँ पहुँवकर अपने दोष निवारण के लिए श्री स्वामि पुष्करिणी में नहाना चाहिए।

श्री बालाजी के दर्शन के समयों को जान लेना चाहिए (देवस्थान के अधिकारियों से)।

श्री स्वामीजी के कैंकर्य के लिए भेंट अथवा मनौति के रूप में जो जो वस्तु अथवा धन अपने साथ लाए हैं, उन्हें स्वामी के दर्शन के बाद श्री स्वामी की 'हुण्डी' में ही समर्पित करना है।

श्री बालाजी की उत्सव-सेवाएं करने का यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिए। यदि नहीं करा सकते हैं, तो स्वामी के उत्सवों को देखना चाहिए।

इस प्रकार भक्त-यात्रिक भक्ति और श्रद्धा से श्रेयोमार्ग में चलने के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (चतुर्विधपुरुषार्थ) प्रदाता श्री वेंकटेश्वर

स्वामी की शरण के लिए प्रार्थना करनी है। तन और बुद्धि से हमेशा स्वामी का दास बनने विनति करनी है। इस प्रकार अपनी दिव्य-यात्रा को सफल बनावें। भगवान की वृक्ष-छाया रूप अनुग्रह को प्राप्त करके निरवधिक परमानन्द पा सकते हैं। जगत्प्रभु भक्तों को ऐसा आशीर्वाद दें।

भगवान से भक्त अपनी कामनाओं की पूर्ति करें।

श्री बालाजी के पवित्र सान्निध्य में नित्यानन्द पावें।

विना वेंकटेशं न नाथो न नाथः।
सदा वेंकटेशं स्मरामि स्मरामि ॥
हरे वेंकटेश! प्रसीद प्रसीद।
प्रियं वेंकटेश! प्रयच्छ प्रयच्छ ॥

श्री लक्ष्मीवेंकटेशार्पणमस्तु।

ॐ तत् सत्